नष्ट-जातकम्

[NASHTA JATAKAM]

वराहमिहिर, कल्याण वर्मा
केरलीय पद्धति एवं लग्न भ्रांति
निराकरण सहित

पुस्तक-परिचय

जातक की जन्म-पत्रिका नष्ट हो गयी हो, या गर्भाधान और जन्म की तिथि आदि ज्ञात ही न हों, तो ज्योतिष में एक ऐसी वि[illegible] है जिससे उसका उचित परिज्ञान हो सकता है। किन्तु, इस विधि [illegible] विभिन्न पक्षों का प्रतिपादन एक ग्रन्थ में जितना और जिस रूप में है उतना और उस रूप में दूसरे ग्रन्थ[illegible] में मिलता।

इसलिए ज्योतिष के विद्वान्, शोधार्थी और [illegible] यह [illegible]भव करते रहे हैं कि इन सभी प्रतिपादनों को एक स्थान [illegible] इस तरह प्रस्तुत किया जाए कि नष्ट-जातक [illegible] [illegible]भी पक्ष वर्गीकृत होकर तो सामने आएं ही, [illegible] विभिन्न आचार्यों के मतभेदों का आधार और सीमा भी [illegible] हो सके।

इस आवश्यकता की पूर्ति प्रस्तुत ग्रंथ के रूप [illegible] है स्व. आचार्य मुकुन्द दैवज्ञ ने जिन्हें नव-वराहमिहिर की उपाधि प्रदान की गयी और जो ज्योतिष जगत् के बाणभट्ट कहे जाते हैं। डॉ. शुकदेव चतुर्वेदी के हिन्दी अनुवाद ने इस ग्रन्थ को सर्व-साधारण के लिए भी उपलब्ध करा दिया है। आधुनिक रुचि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले [illegible] को भी यह ग्रन्थ पण्डितों और परंपरागत विद्वानों के साथ ही, समान रूप से आकृष्ट करे, इस उद्देश्य से इसकी भाषा, प्रस्तुति, प्रासंगिक सामग्री, मुद्रण आदि पर विशेष ध्यान दिया गया है। इन सभी कारणों से ग्रन्थ की प्रतियां प्रत्येक पुस्तकालय में तो होनी ही चाहिए, ज्योतिष के प्रत्येक जिज्ञासु और ज्ञाता के पास भी होनी चाहिए।

नष्ट-जातकम्
(NASHTA-JATAKAM)

भाषा-टीका

मूल लेखक :—
आचार्य मुकुन्द दैवज्ञ पर्वतीय

टीकाकार :—
डॉ० शुकदेव चतुर्वेदी

रंजन पब्लिकेशन्स
१६, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२

प्रकाशक
रंजन पब्लिकेशन्स
१६, अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : 278835

सम्पादक
गोपी लाल अमर
एम० ए०, दर्शनाचार्य, धर्मालंकार,
साहित्यशास्त्री, काव्यतीर्थ, साहित्यरत्न

नष्ट-जातकम्
NASHTA-JATAKAM
An astrological re-calculation of un-recorded or lost date of birth etc.; compiled with verses from Sanskrit texts, by Acharya Mukunda Daivajna; translated into Hindi by Dr. Shukdev Chaturvedi; and published by Ranjan Publications, 16, Ansari Road, New Delhi-2

द्वितीय संस्करण १९८५

मूल्य : रु० ४०.००

मुद्रक :
गोयल प्रिंटर्स
भोलानाथ नगर, दिल्ली-११००३२

सम्पादकीय

जातक की जन्मपत्रिका नष्ट हो गयी हो, या, गर्भाधान और जन्म की तिथि आदि ज्ञात ही न हो तो ज्योतिष में एक ऐसी विधि है जिससे उसका उचित परिज्ञान हो सकता है। यह विधि नष्ट-जातक ज्ञान के नाम से ज्योतिष के प्रायः सभी ग्रन्थों में प्रतिपादित की गयी है। किन्तु, इस विधि के विभिन्न पक्षों का प्रतिपादन इस ग्रन्थ में जितना और जिस रूप में है उतना उस रूप में दूसरे ग्रन्थ में नहीं मिलता, और, एक आचार्य के मत से दूसरे आचार्य के मत में भिन्नता भी है।

इसलिए ज्योतिष के विद्वान्, शोधार्थी और जिज्ञासु यह अनुभव करते रहे हैं कि इन सभी प्रतिपादनों को एक स्थान पर इस तरह प्रस्तुत किया जाए कि नष्ट-जातक ज्ञान के सभी पक्ष वर्गीकृत होकर तो सामने आएं ही, इस सम्बन्ध में विभिन्न आचार्यों के मतभेदों का आधार और सीमा भी ज्ञात हो सके।

इस आवश्यकता की पूर्ति की है श्रीमान् स्व० पण्डित मुकुन्द दैवज्ञ ने। उन्होंने इस विधि के प्रायः सभी उपलब्ध प्रतिपादनों का प्रामाणिक और यथासंभव वैज्ञानिक संग्रह किया है। उन्होंने संग्रह ही नहीं किया है, प्रत्युत उन प्रतिपादनों में परस्पर सम्बन्ध और अन्तर भी प्रदर्शित किया है। उन्होंने प्रायः सभी संगृहीत श्लोकों की अपनी व्याख्या द्वारा कठिन विषय को सरल भी बनाया है। ज्योतिष के अनेक पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या करने के साथ ही श्रीमान् दैवज्ञ ने यथाप्रसंग उन शब्दों के लिए प्रचलित शब्द भी दिये हैं जो पद्य-बन्ध की सीमाओं के कारण अपने अप्रचलित या अल्प-प्रचलित रूप में प्रयुक्त हुए हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपना चिन्तन भी व्यक्त किया है और कुछ स्वरचित श्लोकों का समावेश भी किया है। श्री दैवज्ञ के जीवन-परिचय, व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित लेख लिखकर उनके सुपुत्र श्री चक्रधर शर्मा ने इस ग्रन्थ की उपयोगिता में वृद्धि की है। इन सभी कारणों से यह ग्रन्थ

एक स्वतन्त्र ग्रन्थ की श्रेणी में रखा जाएगा। इस ग्रन्थ से, ज्योतिष के ऐसे ही अन्य विषयों पर ग्रन्थ लिखे जाने की प्रेरणा ली जानी चाहिए।

इतना होने पर भी यह ग्रन्थ केवल संस्कृतज्ञों के उपयोग तक ही सीमित रह गया होता यदि पं० शुकदेव जी चतुर्वेदी ने इसका हिन्दी में अनुवाद न कर दिया होता। आचार्य चतुर्वेदी जी का यह अनुवाद इतना सहज, सुगठित और प्रामाणिक बन पड़ा है कि उसे भावार्थ-बोधिनी टीका नाम देकर उन्होंने उचित ही किया है। श्रीमान् मुकुन्द दैवज्ञ चूंकि अब स्वर्गस्थ हैं, अतः अब श्री चतुर्वेदी से अपेक्षा है कि वे इस अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ की परंपरा को आगे बढ़ाएं, जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है।

आधुनिक रुचि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले विद्वानों को भी यह ग्रन्थ पण्डितों और परंपरागत विद्वानों के साथ ही, समान रूप से आकृष्ट करे, इस उद्देश्य से इसकी भाषा, प्रस्तुति, प्रासंगिक सामग्री, मुद्रण आदि पर विशेष ध्यान दिया गया है।

संस्कृत और हिन्दी में, विषय को न छूते हुए, भाषा का हल्का-सा स्पर्श किया गया है। अनुच्छेद विषयानुसार यथासंभव छोटे किये गये हैं और कहीं-कहीं अनुच्छेद-विभाजन में परिवर्तन भी किया गया है। शीर्षकों का आयोजन भी परिष्कृत हुआ है। विराम-चिह्नों की अधुनातन पद्धति अपनायी गयी है। समास-बहुल होने से संस्कृत की लम्बी शब्दावली वाचन और अर्थबोध में रुकावट न डाले और ऊब पैदा न करे, इसलिए यथासंभव सभी समास-बद्ध शब्दों को योजक चिह्न या हाइफन से पृथक् किया गया है; हिन्दी में इसकी आवश्यकता नहीं पड़ी। पंचमाक्षरों को संस्कृत में यथावत् रहने दिया गया है पर हिन्दी में प्रचलन के अनुसार अनुस्वार को प्राथमिकता दी गयी है। वैकल्पिक द्वित्व और खण्डाकार (ऽ) की उपेक्षा की गयी है। प्रस्तुति और मुद्रण अधिक-से-अधिक निर्दोष और सुन्दर हों, इसके लिए समय और श्रम में कृपणता नहीं की गयी है। इतना सब करके भी अनुभव होता है कि मैं ग्रन्थकार, टीकाकार और प्रकाशक के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह बहुत कम कर सका हूं, किन्तु इनके प्रति मेरी नम्रता सम्पूर्ण है।

दीपावली, १९८१ ई० **गोपी लाल अमर**

विषय-क्रम

गंगौघ-मज्जन-निरस्त-समस्त-कोष-
जालोपि कोष-रचना-निरतः सदा यः,
कस्तस्य चित्र-चरितस्य मुकुन्द-सूरेर्-
वक्तुं गुणान् सुरगुरु-प्रतिमः प्रभुः स्यात् !

श्री मुकुन्द दैवज्ञ : व्यक्तित्व और कृतित्व

छन्दःपादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर् निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते॥
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥

वेद के षडङ्गों में ज्योतिषशास्त्र को वेद-पुरुष का चक्षु कहा गया है। इसी विज्ञान चक्षु से प्राचीन आचार्यों ने प्रकृति के सूक्ष्म से सूक्ष्म क्रिया-कलापों का अध्ययन किया। अतः यह उक्ति पूर्णतया सार्थक है कि अनधीत-ज्योतिषशास्त्रो वेद-विषयेन्ध इव भवति।

जिस प्रकार बीज सम्यक् काल में आरोपित होने पर अंकुरित और पल्लवित होता है उसी प्रकार सभी वैदिक-लौकिक कार्य सम्यक् काल में किये जाने पर ही फलीभूत होते हैं। अतएव वेद-आज्ञा है कि कृत्तिकास्वग्नीन् आदधीत। कृत्तिका क्या है, यह पञ्चाङ्गविद् ही जानता है, और पञ्चाङ्गनिर्माण ज्योतिर्विद् द्वारा ही सम्भव है।

इस काल-विधान शास्त्र अर्थात् ज्योतिष के तीन अङ्गों– सिद्धांत, संहिता एवं होरा के अनेक उपांगों को काल-परिवर्तन के अनुरूप संशोधित और समृद्ध करने में प्राचीन आचार्यों का स्थान तो महत्त्व-पूर्ण है ही, आधुनिक ज्योतिर्विदों का योगदान भी महत्त्वपूर्ण है। इनमें सर्वश्री केतकर, सुधाकर, मुकुन्द दैवज्ञ, दीक्षित, बापूदेव, आप्ते, मालवीय आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं जिन्होंने इस लुप्तप्राय शोध-परम्परा को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया है।

इन महान् ज्योतिर्विदों में एक, साहित्य जगत् में मुकुन्द दैवज्ञ के नाम से विख्यात श्री मुकुन्द शर्मा का जीवन-परिचय, व्यक्तित्व एवं कृतित्व उनकी अधिकांश कृतियों में आंशिक रूप में उपलब्ध है तथापि उसकी एकत्र प्रस्तुति और अनुपलब्ध ज्ञातव्य के लेखन की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की यथाशक्ति पूर्ति करना मैं अपना पवित्र कर्तव्य मानता हूं, विशेष रूप से इसलिए कि मैं सौभाग्य से उनका पुत्र भी हूं।

श्री रघुवरदत्त और श्रीमती कीर्तिदेवी के ज्येष्ठ पुत्र श्री दैवज्ञ का जन्म उत्तराखण्ड में स्थित गढ़देश (गढ़वाल) जनपद के ढांगू मण्डल में भागीरथी के वाम तट पर स्थित खण्डग्राम (वड़ेथवाल या बड़थ्वाल) के एक उच्च ब्राह्मण परिवार में २४मिते कार्तिक, सं० १६४४ में हुआ। इस क्षेत्र में प्रभावशाली किन्तु रूढ़िवादी और धर्मभीरु श्री रघुवरदत्त ने वालक मुकुन्द को पथभ्रष्ट व धर्मभ्रष्ट होने का भय जताकर अंग्रेजी के अध्ययन की सुविधा नहीं दी। वालक मुकुन्द के लिए कर्मकाण्ड व ज्योतिषशास्त्र की आरम्भिक शिक्षा का प्रवन्ध घर पर ही किया गया और संस्कृत वाङ्मय के अध्ययन के लिए उन्हें ऋषिकेश और वाराणसी भेजा गया। स्वास्थ्य विगड़ जाने से वाराणसी छोड़कर उन्होंने घर पर ही कर्मकाण्ड और ज्योतिष का अध्ययन किया।

इसी समय अल्प अवस्था में ही उनका विवाह धर्मपरायणा श्रीमती रुक्मिणी देवी से हुआ जो उन्हें ज्ञानार्जन के लिए प्रोत्साहित करती रहीं। सं० १६८६ में श्री दैवज्ञ अध्ययन और शोधकार्य में दत्तचित्त थे कि उनकी पत्नी का अल्प आयु में ही निधन हो गया और व्यवसाय में भी भारी क्षति हुई। आजीविका का प्रश्न उपस्थित होने पर वे फलित-निर्देश एवं पौरोहित्य से जीवन-यापन करने लगे, किन्तु यह मार्ग उनको अभिप्रेत न था।

भाग्यवशात् वे ज्योतिर्विज्ञान एवं आयुर्वेदशास्त्र के मूर्धन्य विद्वान् देवप्रयाग निवासी पण्डित चण्डीप्रसाद जी के सम्पर्क में आये जिनसे उन्होंने स्कन्ध-त्रयशास्त्र का अध्ययन किया। श्री दैवज्ञ ने भागीरथी और अलकनन्दा के संगम पर स्थित देवप्रयाग (गढ़वाल) को अपना

कार्यक्षेत्र चुना। आजीविका के लिए उन्होंने वाणिज्य का व्यवसाय अपनाया। अपना कार्य-कलाप स्वाध्याय और ग्रन्थनिर्माण तक ही सीमित न रखकर उन्होंने ज्योतिषशास्त्र के प्रसार की ओर भी पग उठाया। उन्होंने ज्योतिषशास्त्र का अध्यापन भी किया।

भाग्यवशात् आजीविका हेतु चिन्तित श्री दैवज्ञ ने लाहौर के एक प्रसिद्ध ज्योतिष शोध संस्थान का फलित ज्योतिष पर ग्रन्थ-संकलन का अनुरोध स्वीकार किया। इस अवधि में उनका अधिकांश समय त्रि-स्कन्ध विद्या के असंख्य प्रकाशित-अप्रकाशित ग्रन्थों के अध्ययन-मनन में व्यतीत हुआ। उन्होंने अनुभव किया कि ज्योतिष शास्त्र के संपूर्ण अंगो के ज्ञान के लिए सैकड़ों ग्रन्थों का अध्ययन आवश्यक है जिनका जुटाना या अध्ययन सर्वसाधारण के लिए संभव नहीं है। अतः उन्होंने ज्योतिषशास्त्र के सभी अंगों का एकत्र समन्वय किया जो ज्योतिस्तत्त्व के नाम से प्रकाशित हुआ।

मुकुन्दस्य प्रतिज्ञे द्वे कोषं (मुकुन्दकोष) गंगां च न त्यजेत्, की प्रतिज्ञा को उन्होंने जीवन के अन्तिम क्षण तक निभाया। वृद्धावस्था के कारण दृष्टि ने साथ छोड़ दिया और श्री दैवज्ञ मुकुन्दकोष के साहित्य भाग के कार्यवर्ग का संकलन अपूर्ण छोड़कर दिवंगत हो गये। गंगा का सान्निध्य तो उनके जीवन के अन्तिम क्षण तक बना रहा। उन्होंने अपने पैतृक स्थान में पतित-पावनी जाह्नवी के वामकूल के निकट मुकुन्दाश्रम बनाया जहां ३० सितम्बर १९७८ के ब्राह्म मुहूर्त में उस तपस्वी विद्वान् ने अपनी पारलौकिक यात्रा आरम्भ की।

१८ वर्ष की आयु में ही उन्होंने जातक-सारम् की रचना की। तत्पश्चात् उनका ध्यान सूर्य-सिद्धांत और ज्योतिर्गणित की ओर आकृष्ट हुआ और उन्होंने मुकुन्द-विनोद-सारिणी, मकरन्द-तति, मुकुन्दपद्धति, पञ्चांगमञ्जूषा, दशा-मञ्जरी आदि सारिणियां बनायीं। उन्होंने अनेक ग्रन्थों पर संस्कृत में व्याख्याएं या टीकाएं लिखीं जिनमें भट्टोत्पल की आर्या-सप्तति जो कई वर्ष से राजस्थान विश्वविद्यालय की ज्योतिषाचार्य परीक्षा में निर्धारित पाठ्यपुस्तिका है, विद्वदाचार्य की पद्धति-कल्पवल्ली, वेंकटेश का केतकी-ग्रह-गणित,

मल्लारि की अश्वारूढ़ि, पण्डित पद्मनाभ का लम्पाक-शास्त्र और पण्डित परमसुख उपाध्याय का रमल-तन्त्र उल्लेखनीय हैं।

व्याख्याएं और टीकाएं लिखने के साथ ही श्री दैवज्ञ ने ज्योतिषशास्त्र के विविध पक्षों पर संकलन-ग्रन्थ भी लिखे जिनमें बारह भावों के फलित पर भावमंजरी, अष्टकवर्ग, आयुर्निर्णय, इष्टलग्न-निर्णय, प्रसवचिंतामणि, नष्ट-जातक (प्रस्तुत रचना) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। साथ ही उन्होंने एक मौलिक ग्रन्थ की भी रचना की। सन् १९५५ में दो भागों में प्रकाशित १४०० पृष्ठ के ज्योतिस्तत्त्व नामक इस ग्रन्थ में श्री दैवज्ञ के ७७७५ स्वरचित श्लोक हैं जो उनके अगाध पाण्डित्य और महती काव्य-प्रतिभा का ज्वलन्त प्रमाण हैं।

श्री दैवज्ञ ने ज्योतिष के विद्वानों के लिए ही नहीं, अपितु जिज्ञासुओं के लिए भी वालवोधदीपिका, ज्योतिषशास्त्र प्रवेशिका, वृहद् होडा-चक्र, वृहद् ज्योतिषशास्त्र प्रवेशिका आदि ग्रन्थ भी लिखे। ज्योतिर्गणित, सिद्धांत, जातक, ताजिक, नष्टजातक, प्रश्न, वृष्टि, शकुन, वस्तु-समर्घ-महर्घ, प्रसव आदि प्रायः सभी विषयों पर उन्होंने ग्रन्थों की रचना की।

ज्योतिर्जगत् को श्री दैवज्ञ की सर्वोपरि देन ज्योतिष शब्दकोष है। इस कोष का प्रकाशन सन् १९६७ में भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय द्वारा प्रदत्त वित्तीय सहायता से हुआ। ज्योतिषशास्त्र सृजकों को कविता करते समय ईप्सित मात्रा वाले शब्दों की खोज और चयन के लिए अनेक शब्दकोषों को टटोलना पड़ता था और स्वयं श्री दैवज्ञ को कविता करते समय यह कठिनाई हुई। इस गद्य-पद्यमय कोष से इस समस्या के समाधान के साथ ज्योतिषशास्त्रीय पारिभाषिक, पर्यायवाची और अनेकार्थक शब्दों के अभाव की पूर्ति भी हुई। महा-महोपाध्याय परमेश्वरानन्द द्वारा लिखित ज्योतिष शब्दकोष के आमुख से उद्धृत पद्य ही इस कोष और उसके निर्माता का महत्त्व प्रतिपादित करने को पर्याप्त है :

गंगौघमज्जननिरस्तसमस्त-कोष-जालोपि कोष-रचना-निरतः सदा यः।
कस्तस्य चित्रचरितस्य मुकुन्दसूरेर्वक्तुं गुणान्सुरगुरुप्रतिमः प्रभुः स्यात्॥

प्रसिद्ध उक्ति, वाणोच्छिष्टं जगत् सर्वम्, ज्योतिष के संदर्भ में श्री मुकुन्द दैवज्ञ पर पूर्णतया चरितार्थ होती है। इसलिए श्री दैवज्ञ के योगदान की सराहना न केवल ज्योतिर्विदों ने की अपितु उत्तर प्रदेश सरकार और भारत सरकार ने भी वित्तीय अनुदान से उन्हें सम्मानित किया। यही नहीं, अखिल भारतीय ज्योतिष अनुसंधान और शोध संस्थान के तत्त्वावधान में उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल डॉक्टर चेन्ना रेड्डी ने उन्हें ताम्रपत्र तथा नव-वराहमिहिर की उपाधि से विभूषित किया।

१९६१-६२ में भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय में संयुक्त सलाहकार श्री रमा प्रसन्न नायक, आई. सी. एस. मुकुन्दकोष की पाण्डुलिपि देखकर बोले थे, पण्डित जी यह कार्य एक संस्था का हो सकता है, एक व्यक्ति का नहीं। निःसन्देह श्री दैवज्ञ स्वयं में एक संस्था थे। उनके शिष्यों में देवप्रयाग निवासी स्वर्गीय आचार्य चक्रधर जोशी का नाम उल्लेखनीय है। श्री जोशी ने श्री दैवज्ञ के ज्योतिस्तत्त्व नामक ग्रन्थ पर उदाहरणोपेता भाषा टीका की तो उसकी ज्योतिर्विदों द्वारा भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी। श्री जोशी ने श्री दैवज्ञ द्वारा संस्थापित देवप्रयाग (गढ़वाल) के श्री लक्ष्मीधर विद्यामन्दिर के तत्त्वावधान में द हिमालयन एस्ट्रॉलॉजिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट नामक संस्था स्थापित की तथा भारतीय पद्धति से ग्रह-नक्षत्रों की गति के अध्ययन हेतु एक वेधशाला का निर्माण भी किया।

श्री दैवज्ञ की मान्यता थी कि राजनीतिक विप्लवों के कारण भारत में परम्परागत शोधप्रणाली छिन्न-भिन्न हो गयी और दृग्गणितैक्य आदेश का पालन न हो सका, इसलिए ज्योतिर्विद् पञ्चांग एवं ग्रह-स्पष्टीकरण जैसे मूल विषयों का निर्माण या गणना संस्कारहीन शकान्तरों के स्थूल करणग्रन्थों से करने लगे। जब मूलाधार में ही दोष आ गया तब उन पर आधारित संहिता, होरा आदि अंगों में स्थूलता आनी स्वाभाविक ही है। अतः वे सार्वभौमिक दृग्गणितैक्य पञ्चांग के निर्माण प्रयोग पर बल देते थे।

सात-आठ दशक जैसी दीर्घ अवधि तक निरन्तर शास्त्रानुशीलन एवं शास्त्रसृजन में, भौतिक प्रलोभनों से अनासक्त रहकर भी दत्तचित्त

स्व० दैवज्ञ महान् कर्मयोगी थे। वे अत्यन्त निर्भीक समालोचक थे। तर्क-वितर्क, ऊहापोह एवं शास्त्रचर्चा में वे अतिदक्ष थे। उनमें अभिमान लेशमात्र भी नहीं था, किन्तु वे अति स्वाभिमानी थे। वे अत्यन्त सात्त्विक प्रवृत्ति के थे तथा आचार, नियम, अनुशासन एवं संयम के महाधनी थे। आर्थिक संकटों से जूझते हुए भी जातकादिफल निर्देश द्वारा धन अर्जित करना उन्हें अभीष्ट नहीं था। वे विद्वानों का आदर करते थे तथा अन्य धर्मों के प्रति उनमें सहिष्णुता थी। दूसरों के विचारों से सहमत न होने पर भी वे उनका आदर करते थे। न गंगा सदृशं तीर्थं, न देवः केशवात् परः, उनका ध्रुव मत था। कर्मकाण्ड को वे बृहज्जंजाल समझते थे। एकादशाह एवं एकोद्दिष्टादि श्राद्ध एवं ब्राह्मण-भोजनादि को वे विडम्बना समझते थे। उनकी जीवन-मीमांसा मनु के इस पद्य पर आधारित थी : **अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्, नाभुक्तं क्षीयते किंचित् कल्प-कोटि-शतैरपि।**

चक्रधर शर्मा
(सेवानिवृत्त उपसचिव, दिल्ली प्रशासन)

श्रीमन्मुकुन्द-दैवज्ञ-ग्रथितं नष्ट जातकम् ।
शुकदेव चतुर्वेद-कृत-टीका विभूषितम् ॥१॥

सम्पादितममरेण गोपीलालेन शब्दशः ।
प्रकाशितं सदा कुर्याज्ज्योतिर्विच्चित्त रंजनम् ॥२॥

। श्री रासक्रीडेश्वरी जानये नमः ।

नष्ट-जातकम्

श्री-मुकुन्द-दैवज्ञ-संगृहीतम्

भावार्थबोधिनी-हिन्दी-टीकया च श्री-शुकदेव-चतुर्वेदि-कृतयालंकृतम्

वराहादि-युक्ति-प्रकरणं प्रथमम्

मङ्गलाचरणम्

1-1 श्री-कृष्णं रुक्मिणी-जानिं नत्वा मुकुन्द-दैववित् ।
कुर्वेहं विदुषां प्रीत्यै नष्ट-जातक-संग्रहम् ।।

ग्रन्थकार का मंगलाचरण

रुक्मिणीनाथ श्री कृष्ण को प्रणाम करके मैं मुकुन्द दैवज्ञ विद्वानों की प्रसन्नता के लिए नष्ट-जातक नामक संग्रह-ग्रन्थ लिख रहा हूँ ।

टीकाकार का मंगलाचरण

अन्तरायतिमिरोपशान्तयेशान्तपावनमचिन्त्यवैभवं ।
तन्नरंवपुषिकुंजरंमुखेन्नौम्यहंकिमपितुन्दिलं महः ।
मुकुन्ददैवज्ञकृतं नष्टजातकमिमं वहुदुर्लभ्यम् ।
विख्यातान् निष्णातान् त्रिस्कन्धज्यौतिषे शास्त्रे ।
पूर्णचन्द्रचतुर्वेदं वत्सलं पितरं बुधम् ।
विद्यावतीमहं नौमि मातरं शारदात्मिकाम् ।
वाराहमिहिरः सत्याचार्यः कल्याणवर्मकः ।
मणित्थो ढुण्ढिराजश्च जयन्ति ज्योतिषां विदः ।

एषां मतानि संगृह्य समीक्षात्मकचिन्तनम् ।
कृतं ग्रन्थेत्र येनासौ मुकुन्दो वन्द्यते मया ।
शुकदेवचतुर्वेदी टीकां भावार्थबोधिनीम् ।
लिखत्यन्वर्थतायुक्तां भूयात् सा विदुषां मुदे ।

अस्य ग्रन्थस्य रचना-हेतुः

1-2 आधान-कालोप्यथ जन्म-कालो न ज्ञायते यस्य नरस्य नूनम् ।
प्रसूति-कालं प्रवदन्ति तस्य नष्टाभिधानादपि जातकाच्च ।।

1-3 तज्जातकं येन शुभाशुभाप्तिर् जातस्य जन्तोर्जननोपकालात् ।
तस्मिन् प्रणष्टे सति जन्म-कालो येनोच्यते नष्टक-जातकं तत् ।।

नष्ट-जातक की रचना का उद्देश्य

जिसके गर्भाधान और जन्म की तिथियों की ठीक-ठीक जानकारी न हो उसकी जन्म की तिथि आदि का ज्ञान नष्ट-जातक से होता है। जन्म की तिथि आदि के ज्ञान से प्राणी के जीवन की शुभ या अशुभ घटनाओं पर जो प्रकाश डालता है उसे जातकशास्त्र कहते हैं। तथा, नष्ट हो जाने पर उस जन्मकाल को जिस ज्ञान से पुनः बताया जाता है वह नष्ट-जातक है।

अथेहादौ नष्ट-जातकायनम्

1-4 आधान-जन्मापरिबोध-काले संपृच्छतो जन्म वदेद् विलग्नात् ।
पूर्वापरार्धे भवनस्य विन्द्याद् भानावुदग्-दक्षिण-गे प्रसूतिम् ।।

जन्म के अयन का ज्ञान

गर्भाधान और जन्म की तिथि आदि की जानकारी न हो तो वह प्रश्न-लग्न के माध्यम से प्राप्त की जानी चाहिए। प्रश्न-लग्न १५ अंश से कम हो तो जन्मतिथि सूर्य के उत्तरायण काल में तथा प्रश्न-लग्न १५ अंश से अधिक हो तो वह सूर्य के दक्षिणायन काल में पड़ती है।

तथा च कल्याणवर्मा ।

1-5 प्रश्न-काले विलग्नस्य पूर्वार्धेप्युत्तरायणे ।
अपरे दक्षिणे ब्रूयाज्जन्म संपृच्छतो बुधः ।।

अत्रोदाहृतिः। संवत् १९४०, वैशाख-कृष्ण-दशमी-बुधे-दिने नष्ट-प्रश्नः कृतः। तदानीं स्फुट-लग्नं २।१५।२६ लग्न-परार्धत्वाद् दक्षिणायने जन्मेति।

अन्यदुदाहरणम्। संवत् १९४८, माघ-कृष्ण-पञ्चमी-भौमे स्फुटोर्कः ९।६।३०।५१। लग्नं १।१२।८।७। लग्न-पूवार्धत्वादुत्तरायणे जन्मेति। एवमन्यदुदाहरणम्। संवत् १९५४, वैशाख-शुक्ल-चतुर्थी-गुर्विष्टं २१।५१। स्पष्टोर्कः ०।२३।४७।२८। दिनं ३३।४०। लग्नं ४।२५।५८।०। अत्र प्रश्न-लग्न-परार्धत्वाद् दक्षिणायने जन्मेति।

कल्याण-वर्मा का मत भी यही है :
प्रश्नकर्ता का जन्म, प्रश्न-लग्न १५ अंश के भीतर हो तो उत्तरायण में और १५ अंश से अधिक हो तो दक्षिणायन में बताना चाहिए।
इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है। किसी व्यक्ति ने अपने अज्ञात जन्म समय की पुनः जानकारी के लिए प्रश्न वैशाख वदी दशमी, बुधवार, संवत् १०४० को किया। उस समय स्पष्ट-लग्न २।१५।२६ थी। प्रश्न-लग्न १५ अंश से अधिक है, अतः जन्म दक्षिणायन में बताना चाहिए। इसका एक दूसरा उदाहरण। माघ वदी पंचमी, मंगलवार, संवत् १९४८ को जन्मकाल जानने के लिए प्रश्न किया गया। उस समय स्पष्ट सूर्य ९।६।३०।५१ तथा स्पष्ट-लग्न २।१२।८।७ था। यहां प्रश्न-लग्न १५ अंश से कम है, अतः यह जन्म-काल उत्तरायण में माना जाएगा।

एक उदाहरण और। किसी ने वैशाख सुदी चतुर्थी, गुरुवार, संवत् १९५४ को अपनी नष्ट जन्म-पत्रिका का पुनर्निर्धारण करने के लिए प्रश्न किया। प्रश्न के समय इष्टकाल २१ घटी ५१ पल, स्पष्ट सूर्य ०।२३।४७।२८, दिनमान ३३ घटी ४० पल तथा स्पष्ट-लग्न ४।२५।५८।० था। यहां प्रश्न-लग्न १५ अंश से अधिक है, अतः उसका जन्म दक्षिणायन में हुआ बताना चाहिए।

अथ साम्प्रतं वर्षस्य ऋतोश्च ज्ञानम्

1-6 **लग्न-त्रि-कोणेषु गुरुस्त्रिभागैर् विकल्प्य वर्षाणि वयोनुमानात्।**
ग्रीष्मोर्क-लग्ने कथितास्तु शेषैर् अन्यायनर्तावृतुरर्क-चारात्॥

तथा च कल्याणवर्मा ।

1-7 **लग्न-भागैर्द्विरभ्यस्तैः पञ्चभिर्लभ्यते गुरुः ।**
वयोनुमानाद् वर्षाणि द्वादश द्वादश क्षिपेत् ॥

अत्रोदाहरणम् । लग्नं २।१५।२६, काम-द्वितीय-द्रेष्काणेन पञ्चम-भावाद् बृहस्पतिर्लग्ने पञ्चम-भावान्नवम-संख्यकं वर्षं रवि-युग एकविंशद् गताब्दः ।

अन्यदुदाहरणम् । लग्नं १।१२।८।७, द्विगुणीकृतांशाः २४ पञ्च-भक्ताः लब्धं ४, कर्के जन्मनि गुरुः ।

ऋतु-ज्ञानस्योदाहरणम् । एवं मिथुन-द्वितीय-द्रेष्काण-पः शुक्रः : स मीने वर्तते । मीनेपि च द्वितीय-द्रेष्काणः कर्कस्तस्याधिपश्चन्द्रस्तस्य चन्द्र-मसःऋतुर्वर्षा ह्यतो वर्षर्तौ प्रष्टुर्जन्म वाच्यम् । एवं च मध्य-द्रेष्काण-स्यार्धं १५ एतेंऽशाः । उपरि २६ कलाः, यतो द्वितीयो मासो भाद्रपदः । तदर्धेन शुक्लोस्य पक्षः । तदर्धेन अष्टम्यन्तरम् । तदर्धेन चतुर्थी तिथिः ।

जन्म के वर्ष और ऋतु का ज्ञान

प्रश्नलग्न के द्रेष्काणों के अनुसार लग्न में, या लग्न से पंचम राशि में, या लग्न से नवम राशि में गुरु को मानकर वय के अनुमान से जन्म का वर्ष ज्ञात करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि प्रश्नलग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो लग्न की राशि में और द्वितीय द्रेष्काण हो तो लग्न से पंचम राशि में तथा तीसरा द्रेष्काण हो तो लग्न से नवम राशि में गुरु मानकर गुरु की इस राशि से प्रश्नकालीन गुरु की राशि तक गणना कर संख्या जान लेनी चाहिए। और फिर प्रश्नकर्ता की आकृति एवं अवस्था के अनुसार उक्त संख्या में १२-१२ जोड़कर प्रश्नकर्ता की आयु या जन्मवर्ष का निर्धारण करना चाहिए। प्रश्न-लग्न में सूर्य हो या सूर्य का द्रेष्काण हो तो जन्मकाल ग्रीष्म ऋतु में वताना चाहिए। और शेष चन्द्र आदि ग्रह हों तो, 'द्रेष्काणैः शिशिरा-दयः शशुरुचज्ञ०', इस रीति से ऋतु का निर्णय करना चाहिए। अर्थात्, प्रश्नलग्न में शनि या शनि का द्रेष्काण हो तो शिशिर, शुक्र हो तो वसन्त, मंगल हो तो ग्रीष्म, चन्द्रमा हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद् एवं गुरु या गुरु का द्रेष्काण हो तो हेमन्त ऋतु में जन्म कहना चाहिए। इस विषय में कल्याणवर्मा का मत :

प्रश्नलग्न के अंशादि में २ का गुणाकर ५ का भाग देने पर राश्यादि

फल जन्मकालीन गुरु होता है। फिर प्रश्नकर्ता की अवस्था के अनुमान से १२-१२ जोड़कर जन्मवर्ष जाना जाता है। अर्थात् प्रश्न-कालीन लग्न के अंशादि से उक्त क्रिया द्वारा जन्मकालीन गुरु की राशि जानकर उससे प्रश्नकालीन गुरु तक गणना कर संख्या जान लेनी चाहिए। फिर प्रश्नकर्ता की आकृति एवं अवस्था के अनुसार उसमें १२-१२ जोड़कर प्रश्नकर्ता की आयु जान लेनी चाहिए। और आयु के वर्षों को प्रश्नकालीन संवत् में से घटाने पर जन्मसंवत् का निर्धारण करना चाहिए।

एक उदाहरण लीजिए। पूर्वोक्त उदाहरण में प्रश्न २।१५।२६ में द्वितीय द्रेष्काण होने के कारण पंचम स्थान में जन्मकालीन गुरु हुआ। उससे लग्न-प्रश्नकालीन मिथुन के गुरु तक गणना करने से ९ संख्या मिली। इसमें १२ जोड़ने पर प्रश्नकर्ता का गताब्द २१ हुआ।

दूसरा उदाहरण भी लीजिए। प्रश्नकालीन स्पष्ट लग्न १।१२।८।७ है। आचार्य कल्याणवर्मा के अनुसार जन्मकालीन गुरु की राशि जानने के लिए लग्न अंशों को दो से गुणा किया तो १२×२=२४ हुआ। इसमें ५ का भाग देने से ४ शेष बचा। अतः कर्क राशि में गुरु के स्थित होने पर जन्म कहना चाहिए।

ऋतुज्ञान का उदाहरण भी प्रस्तुत है। प्रश्नकालीन २।१५।२६ लग्न में मिथुन में द्वितीय द्रेष्काण है, जिसका स्वामी शुक्र होता है। वह शुक्र मीन में है और मीन में भी द्वितीय द्रेष्काण कर्क राशि का है, जिसका स्वामी चन्द्रमा होता है। चन्द्रमा की ऋतु वर्षा होती है। अतः वर्षा ऋतु में प्रश्नकर्ता का जन्म वताना चाहिए। यहां द्वितीय द्रेष्काण का अर्धविन्दु १५ अंश है, उससे २६ कलाएं अधिक होने के कारण वर्षा ऋतु के द्वितीय मास भाद्रपद में जन्म कहना चाहिए।

अस्य स्पष्टीकरणं तु कल्याणवर्मण उक्तितो ज्ञेयं, तदित्थम्।

1-8 ऋतुर्वाच्यो दृगाणांशैर्-लग्नसंस्थैरुत ग्रहैः।
अयनस्य विलोमे तु परिवर्तः परस्परम्॥

1-9 शशि-ज्ञ-गुरुभिः सार्धं सित-लोहित-सूर्यजैः।
द्रेष्काणार्धे भवेत् पूर्व-मासः पूर्वे परे परः॥

तथा च वराहः ।

1-10 **चन्द्र-ज्ञ-जीवाः परिवर्तनीयाः शुक्रार-मन्दैरयने विलोमे ।**
द्रेष्काण-भागे प्रथमे तु पूर्वो मासोनुपाताच्च तिथिर्विकल्प्य ।।

अन्यदपि । अनुपाताच्च तिथिः कल्प्या ।
अत्रोदाहृतिः । लग्नम् १।१२।८।७। अत्रोदये द्वितीय-द्रेष्काणो वर्तते । वृषतः पञ्चमः कन्या-राशिरस्य स्वामी बुधस्तेनर्तु-विपर्यासाच्छुक्रार-मन्दैर्० इति न्यायेन विपर्ययो भवति, बुध-स्थाने कुजर्तुर्योज्यो ग्रीष्मः । द्रेष्काण-प्रथमार्धत्वाज्ज्ष्ठो मासः । इति ।

अथान्यदुदाहरणम् । लग्नं ४।२५।१८। अत्र कुजस्य द्रेष्काणस्तेनायन-व्यत्ययो भवति । अर्थाद् ग्रीष्मर्तुत्वादयन-व्यत्ययो भवति । तर्हि किम् कार्यम् ? भौम-स्थाने बुधर्तुर्ज्ञेयः, शरद् । द्रेष्काण-परार्धत्वाद् द्वितीयः कार्तिको मासस्तस्मिन् प्रष्टुर्जन्म वाच्यम् । शेषाः कलाः १८ तिथेरंशकला-ध्रुव (१८००) भक्ताः कृष्ण-द्वितीयायां जन्म प्रष्टुरिति ।

ऋतु एवं मास के ज्ञान का स्पष्टीकरण कल्याणवर्मा ने भी किया है : प्रश्नलग्न में जो ग्रह हो उस ग्रह की ऋतु कहनी चाहिए । यदि लग्न में ग्रह न हो तो लग्न में जिस ग्रह का द्रेष्काण हो उसकी ऋतु बतानी चाहिए । यदि अयन एवं ऋतु में भेद हो तो चन्द्रमा, बुध एवं गुरु को यथाक्रम शुक्र, मंगल एवं शनि के साथ परस्पर परिर्वातत कर ऋतु का ज्ञान करना चाहिए ।

द्रेष्काण में पूर्वार्ध हो तो ऋतु के पहले मास में और द्रेष्काण में उत्तरार्ध हो तो ऋतु के द्वितीय मास में जन्म मानना चाहिए ।

वराहमिहिर का मत भी यही है कि यदि अयन एवं ऋतु में भेद हो तो चन्द्रमा, बुध एवं गुरु को यथाक्रम शुक्र, मंगल एवं शनैश्चर के साथ परिर्वातत कर ऋतु बतानी चाहिए । उदाहरणार्थ, नष्ट-जातक का विचार करते समय यदि उत्तरायण में वर्षा, शरद् या हेमन्त ऋतु आती हो तो उसके स्थान पर क्रमशः वसन्त, ग्रीष्म एवं शिशिर ऋतु माननी चाहिए । द्रेष्काण में ५-५ अंश के दो भाग मान-कर द्रेष्काण के पूर्वार्ध से ऋतु का पहिला मास तथा उसके उत्तरार्ध से ऋतु का द्वितीय मास जानना चाहिए और अनुपात से जन्म तिथि का ज्ञान करना चाहिए । कल्याणवर्मा ने भी तिथि का ज्ञान अनुपात

से करने को कहा है।

इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है। प्रश्नलग्न १।१२।८।७ है। यहाँ लग्न १५ अंश से कम होने के कारण उत्तरायण में जन्म सिद्ध होता है और लग्न में द्वितीय द्रेष्काण है, जो वृष से पाँचवा अर्थात् कन्या का है। इसका स्वामी बुध है, जिसकी ऋतु शरद् होती है। इस प्रकार इस उदाहरण में उत्तरायण में शरद्-ऋतु में जन्म आता है। अतः अयन एवं ऋतु के इस भेद को दूर करने के लिए, 'चन्द्रज्ञजीवाः परिवर्तनीयाः०' के अनुसार बुध के स्थान पर मंगल को परिवर्तित किया गया। इस परिवर्तन से उत्तरायण में ग्रीष्म ऋतु में जन्म सिद्ध हुआ। यहाँ द्रेष्काण में पूर्वार्ध होने से ग्रीष्म ऋतु के प्रथम मास अर्थात् ज्येष्ठ मास में जन्म कहना चाहिए।

इसका एक अन्य उदाहरण भी लीजिए। यदि प्रश्नलग्न ४।२५।१८ हो तो यहाँ स्पष्टलग्न के १५ अंश से अधिक होने के कारण दक्षिणायन में जन्म सिद्ध होता है। किन्तु सिंह राशि में तृतीय द्रेष्काण मेष राशि का होता है, जिसका स्वामी मंगल होता है और जो ग्रीष्म ऋतु का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार इस उदाहरण में दक्षिणायन में ग्रीष्म ऋतु में जन्म सिद्ध होता है, जो सर्वथा असंभव है। इसका समाधान करने के लिए, 'चन्द्रज्ञजीवाः परिवर्तनीयाः' आदि नियम के अनुसार मंगल के स्थान पर बुध का परिवर्तन कर ग्रीष्म ऋतु के स्थान पर शरद् ऋतु में जन्म मानना चाहिए। इस उदाहरण में द्रेष्काण का उत्तरार्ध होने से शरद् ऋतु के द्वितीय मास अर्थात् कार्तिक में जन्म कहना चाहिए और द्रेष्काण के अनुपात से तिथि का ज्ञान करना चाहिए। यथा, एक द्रेष्काण में १० अंश या ६०० कलाएँ होती हैं तथा इससे; १ ऋतु, २ मास या ६० तिथियों का ज्ञान होता है। अतः अनुपात किया ६०×३१८÷६००=३२। इस प्रकार इस उदाहरण में शरद् ऋतु के दूसरे मास कार्तिक के कृष्ण पक्ष की द्वितीया को प्रश्नकर्त्ता का जन्म बताना चाहिए।

द्रेष्काण की राशियां, राशियों के स्वामी तथा मासानुसार ऋतुओं का विभाग चक्रों द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है—

द्रेष्काण राशि चक्र

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
१० प्र० द्रेष्काण	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
द्वि २० द्रे०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
३० तृ० द्रेष्काण	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
राशीश	मंगल	शुक्र	बुध	चन्द्र	सूर्य	बुध	शुक्र	मंगल	गुरु	शनि	शनि	गुरु

ऋतु चक्र

ऋतु	मास	स्वामी
वसन्त	चैत्र, वैशाख	शुक्र
ग्रीष्म	ज्येष्ठ, आषाढ़	मंगल, सूर्य
वर्षा	श्रावण, भाद्रपद	चन्द्र
शरद	आश्विन, कार्त्तिक	बुध
हेमन्त	मार्गशीर्ष, पौष	गुरु
शिशिर	माघ, फाल्गुन	शनि

अयन ज्ञान के लिए सौर मासों के अनुसार गणना करनी चाहिए। उपर्युक्त ऋतु चक्र में भी सौर मासों का ही ग्रहण है। मकर राशि के सूर्य से मिथुन राशि के सूर्य तक उत्तरायण तथा कर्क से धनु राशि के सूर्य तक दक्षिणायन होता है।

तिथिज्ञानम्

1-11 **अत्रापि होरा-पटवो द्विजेन्द्राः सूर्यांश-तुल्यां तिथिमुद्दिशन्ति ।**
तथा च कल्याणवर्मा, केचिदाहुरिनांशजाम् इति । तथा च मणित्थः ॥

1-12 **पृच्छाकाले रविणा यावन्तोंशाः स्फुटेन संभुक्ताः ।**
राशेस्तास्तिथयः स्युः शुक्लादावर्क-मासस्य ॥

अत्रोदाहृतिः । सूर्यांशादिः ६।३०, जन्म-दिनोदय-तिथिः ६, जन्म-समये सप्तमी ज्ञेया । इति ।

जन्म तिथि का ज्ञान

वराहमिहिर का कहना है कि होराशास्त्र के मर्मज्ञ महर्षि सूर्य के अंश के समान शुक्लादि तिथि बताते हैं । आचार्य कल्याणवर्मा कहते हैं कि कुछ विद्वान् सूर्यांश के तुल्य तिथि मानते हैं । और आचार्य मणित्थ का भी मत है कि प्रश्नकाल में स्पष्ट सूर्य के जितने भुक्तांश हों, शुक्लादि मास की उतनी तिथियाँ भुक्त माननी चाहिएं । उदाहरणार्थ, प्रश्नकाल में स्पष्ट रवि के अंशादि ६°/३० थे तो जन्म के दिन सूर्योदय के समय षष्ठी तिथि तथा जन्म के समय सप्तमी तिथि जाननी चाहिए ।

अथाधुना दिन-रात्रि-जन्म-ज्ञानं वेला-ज्ञानं च

1-13 **रात्रि-द्यु-संज्ञेषु विलोम-जन्म भागैश्च वेलाः क्रमशो विकल्प्याः ।**
तथा च ।

1-14 **द्यु-रात्रि-नामधेयेषु विलोमाज्जन्म-सम्भवः ।**
लग्न-भागैः क्रमेणैव वेला मृग्यानुपाततः ॥

उदाहरणम् । अत्र लग्नं ४।२५।१८ । इदं दिवा-संज्ञं सिंह-लग्नमतो रात्रौ जन्म । तदा रात्रि-मानं ३२।५, लग्न-भोग्यांशाः ४।४२ रात्रि-मान-पलानि १९२५, लग्न-भोग्य-कलाः २८२, एतद् द्वयं मिथो गुणितं जातं ५४२८५० हारेण स्वोदयेन ३४९ भक्तं लब्धं १५५५ । २७ पलात्मकं । इदं षष्टिहृतं २५।५५।२७ जातो घट्यादीष्टकालः ।
अथान्यदुदाहरणम् । अत्र लग्नम् १।१२।८।७ । इदं वृष-लग्नं रात्रि-संज्ञमतो दिने जन्म । लग्न-शेषांशादिः १७।५१।५३, दिनं ३० अनयोरा-हतिः ५१० त्रिशता हृता । लब्धमिष्टं १७।१० इति ।

दिन, रात्रि एवं जन्मकाल का ज्ञान

प्रश्नकाल में दिनसंज्ञक राशि हो तो रात्रि में और यदि रात्रिसंज्ञक राशि हो तो दिन में जन्म बताना चाहिए और लग्न के भुक्तांशों से दिनगत या रात्रिगत इष्टकाल का ज्ञान करना चाहिए।

आचार्य कल्याणवर्मा का भी कहना है कि लग्न में दिनसंज्ञक या रात्रि-संज्ञक राशि होने पर विलोम से रात्रि या दिन में जन्म कहना चाहिए। तथा लग्न के भुक्तांशों के आधार पर अनुपात से दिनगत या रात्रि-गत इष्टकाल निकालना चाहिए। दिनसंज्ञक राशियाँ सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक एवं कुम्भ हैं, और रात्रिसंज्ञक राशियाँ मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु, मकर हैं।

उदाहरण प्रस्तुत है। यदि स्पष्टलग्न ४।२५।१८ हो, तो यहाँ सिंह लग्न दिनसंज्ञक है। अतः रात्रि में जन्म मानना चाहिए। यहाँ रात्रि मान ३२ घटी ५ पल का पलात्मक मान १९२५ हुआ। तथा लग्न के भोग्यांश ४/४२ की कलाएँ २८२ हुई। इन दोनों का गुणा करने पर गुणनफल (१९२५ × २८२ =) ५४२८५० हुआ। इसमें स्वोदय मान ३४९ का भाग देने पर लब्धि १५५५ पल २७ विपल मिली। पलों में ६० का भाग देने पर २५ घटी ५५ पल एवं २७ विपल इष्टकाल हुआ। एक अन्य उदाहरण भी लीजिए। यदि स्पष्टलग्न १।१२।८।७ हो तो यहां वृक्ष लग्न के रात्रिसंज्ञक होने के कारण दिन का जन्म बताना चाहिए। यहां लग्न का भोग्यांश १७।५१।५३ है तथा रात्रिमान ३४ घटी है। इन दोनों का गुणनफल ५१० हुआ और इनमें ३० का भाग देने से १७।० इष्टकाल हुआ।

अथेदानीमर्थान्तरेण मास-ज्ञानम्

1-15 केचिच्छशाङ्काध्युषितान्-नवांशाच् छुक्लान्तसंज्ञंकथयन्ति मासम्
लग्न-त्रि-कोणोत्तम-वीर्य युक्तं भं प्रोच्यतेङ्गालभनादिभिर्वा ॥

अस्यार्थः। चन्द्र-भुक्त-नवांशाच्छुक्लान्त-मासं कथयन्ति। यस्य भस्य शुक्लान्तमासो नास्ति तत्र गुरु-चार-वंशान्मासो ज्ञेयः। इति। उक्तं च बृहत्संहितायाम्।

1-16 नक्षत्रेण सहोदयमस्तं वा येन यातिसुर-मंत्री ।
तत्संज्ञं वक्तव्यं वर्षं मास-क्रमेणैव ॥
1-17 वर्षाणि कार्तिकादीन्याग्नेयाद् भ-द्वयानि योज्यानि ।
क्रमशस्त्रि-भं तु पञ्चममुपान्त्यं च यद्वर्षम् ॥

प्रकारान्तर से मास-ज्ञान

कुछ आचार्यों का मत यह है कि चन्द्रमा के नवांश में जो नक्षत्र हो उससे शुक्लादि चान्द्रमास का ज्ञान करना चाहिए । और लग्न, पंचम एवं नवम इन तीनों में जो सर्वाधिक वली हो वह राशि या प्रश्नकाल में प्रश्नकर्ता का हाथ जिस अंग का स्पर्श करे उस अंग की राशि को जन्म राशि मानना चाहिए ।

तात्पर्य यह है कि प्रश्नकालीन चन्द्रमा के नवांश में जो नक्षत्र हो वह नक्षत्र जिस चान्द्रमास की पूर्णिमा को पड़ता हो, उस शुक्लादि चान्द्र-मास में जन्म मानना चाहिए, यथा, नवांश का नक्षत्र कृत्तिका हो तो कार्तिक में, मृगशिरा हो तो मार्गशीर्ष में, पुष्य हो तो पौष में, मघा हो तो माघ में, पूर्वा या उत्तरा फाल्गुनी हो तो फाल्गुन में, चित्रा हो तो चैत्र में, विशाखा हो तो वैशाख में, ज्येष्ठा हो तो ज्येष्ठ में, पूर्वा या उत्तराषाढ़ा हो तो आषाढ़ में, श्रवण हो तो श्रावण में, पूर्वा या उत्तराभाद्रपद हो तो भाद्रपद में और अश्विनी हो तो शुक्लादि (पूर्णान्त) आश्विन मास में जन्म बताना चाहिए । परन्तु जो नक्षत्र पूर्णमासी को नहीं पड़ता वह नक्षत्र प्रश्नकालीन चन्द्रमा के नवांश में हो तो वृहस्पति के चार के समान शुक्लान्त संज्ञक मास जानना चाहिए। बृहत्संहिता में कहा गया है कि बृहस्पति का उदय जिस मास के जिस नक्षत्र में हो, उस नक्षत्र के अनुसार मास तुल्य संज्ञा वर्ष की होती है । मास बारह होने के कारण कुल वर्ष भी बारह होते हैं ।

इस प्रकार कृत्तिकादि नक्षत्र से आरम्भ कर दो-दो नक्षत्रों के कार्तिक आदि वर्ष होते हैं । केवल पंचम, एकादश एवं द्वादश वर्ष में तीन-तीन नक्षत्र होते हैं ।

सुविधा के लिए नवांश चक्र यहां दे रहे हैं—

नवांश चक्र

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
३/२०	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४
६/४०	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५
१०/०	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६
१३/२०	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७
१६/४०	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८
२०/०	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९
२३/२०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०
२६/४०	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११
३०/०	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२

बारह राशियों द्वारा शरीर के अंगों का प्रतिनिधित्व इस प्रकार है—

मेष	सिर	तुला	पेडू (नाभि से नीचे का भाग)
वृष	मुख	वृश्चिक	लिंग
मिथुन	कन्धा, छाती	धनु	जांघ
कर्क	हृदय	मकर	घुटने
सिंह	पेट	कुम्भ	पिंडली
कन्या	कमर (कटि प्रदेश)	मीन	पैर

यवनेश्वरादिभिस्तु शुक्लान्त-मासाभावे कृष्णान्त एव मासः कथितः। तथा च यवनेश्वरः।

1-18 मासे तु शुक्ल-प्रतिपत्-प्रवृत्ते पूर्वे शशी मध्य-बलो दशाहे।
ग्रन्थान्तरे तु मास-ज्ञानं प्रकारान्तरेण स्पष्टमुक्तम्॥

1-19 यद्राशि-संज्ञे शीतांशुः प्रश्न-काले नवांशके।
स्थितस्तद्राशि-गः पूर्णो यस्मिन् भवति चन्द्रमाः॥

1-20 जन्म-मासः स निर्दिष्टः पुरुषस्य तु पृच्छतः।
कृष्ण-पक्षान्तिको मासो ज्ञेयोत्र तु विपश्चिता॥

यवनेश्वराचार्य प्रभृति आचार्यों ने शुक्लान्त मास के अभाव में कृष्णान्त (अमान्त) मास बताया है। उनके निम्नलिखित वाक्य में मासारम्भ के उल्लेख से स्पष्ट है: "मासे तु शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्ते पूर्वे शशी मध्य-बलो दशाहे।" अन्य ग्रहों में जन्ममास का ज्ञान इस प्रकार किया गया है:

प्रश्नकाल में चन्द्रमा जिस राशि के नवांश में हो, उस राशि में जाने पर जिस मास में चन्द्रमा पूर्णकला वाला होता हो अर्थात् जिस मास में वह राशि पूर्णमासी को पड़ती हो, वह मास प्रश्नकर्ता का जन्ममास होता है। यहां विद्वानों को चान्द्रमास अमान्त ही मानना चाहिए।

अथाधुना जन्म-राशि-ज्ञानम्

1-21 होरादि-वीर्याधिक-लग्न-भाजि स्थानं त्रि-कोणे शशिनोवधार्यम्।
अस्यार्थः। होरेति। लग्नात् त्रिकोणयोर्मध्याद्यस्तत्कालेधिक-बली स जन्म-राशिर्बोध्यः। इति। तथा च।

1-22 लग्नात् त्रिभाग-राशीनां यो बली जन्मकृद् भवेत्।
तेनैवाङ्ग-स्पर्शाज्जन्म-राशि-ज्ञानमुक्तम्।

1-23 शीर्षादि संस्पृशन् प्रष्टा पृच्छेत् तद्राशिमादिमेत्।
अथवा अङ्ग-लभनाच्छीर्षाद्यङ्ग-स्पर्शतो जन्म-राशिर्बोध्यः। इति।

प्रकारान्तरेण जन्म-राशि-ज्ञानम्

1-24 यावान्गतः शीतकरो विलग्नाच्
चन्द्राद् वदेत् तावति जन्म-राशिम्।

मीनोदये मीन-युगं प्रदिष्टं
भक्ष्याहृताकार-रुतैश्च चिन्त्यम् ॥
तथा च ।
1-25 **यावद्गतः शशी लग्नाच्चन्द्रात्तावति जन्म-भः ।**
मीनादेये वदेन्मीनभ्···।

जन्म-राशि का ज्ञान

जन्मराशि को जानने के लिए यवनेश्वर ने यह रीति वतायी है कि प्रश्नलग्न, उससे पंचम एवं नवम इन तीनों राशियों में जो राशि सर्वाधिक वलवान् हो, उस राशि को जन्मराशि मानना चाहिए। आचार्य कल्याणवर्मा का भी यही मत है। कल्याण वर्मा ने सारावली के नष्ट-जातकाध्याय में जन्मराशि जानने की एक अन्य रीति इस प्रकार वताई है कि प्रश्नकाल में प्रश्नकर्ता अपने हाथ से जिस अंग का स्पर्श करे, वह अंग 'कालाङ्गानि वराङ्गमानन' इत्यादि श्लोकोक्त नियमानुसार जिस राशि का द्योतक हो, वही राशि प्रश्नकर्ता की जन्मराशि होती है।

जन्मराशि जानने की एक अन्य रीति भी है। प्रश्नलग्न से जितने संख्यक स्थान में चन्द्रमा स्थित हो, चन्द्रमा से उतने संख्यक स्थान में जो राशि पड़ती हो, उस राशि को जन्मराशि कहना चाहिए। किन्तु यदि प्रश्नलग्न में मीन राशि हो तो मीन को ही जन्मराशि वताना चाहिए। आचार्य कल्याणवर्मा का भी यही मत है।

उक्त विभिन्न रीतियों से जन्मराशि का विचार करने पर एक ही राशि आये, तो उस राशि को जन्मराशि मानना चाहिए। और यदि उक्त रीतियों से भिन्न-भिन्न राशियां आती हों, तो प्रश्नकाल में दिखाई देने वाली खाने-पीने की चीजों, पशु-पक्षियों या उनकी वोलियों के आधार पर राशि का निश्चय करना चाहिए।

एवं जन्म-राशौ ज्ञाते लग्न-ज्ञानम्

1-26 **होरा-नवांश-प्रतिमं विलग्नं लग्नाद्रविर्यावति च दृकाणे।**
तस्माद्वदेत् तावति वा विलग्नं प्रष्टुः प्रसूताविति शास्त्रमाह ॥
तथा च सारावल्याम् ।
1-27 **······लग्नांश-सदृशोदयम् ।**

1-28 लग्नाद् भानुर्दृगाणे च यावदर्काच्च तावति ।
विलग्नं कथयेत् प्राज्ञ इति शास्त्रस्य निश्चयः ।।
अन्यैरप्येवमुक्तम् ।
1-29 पृच्छा-लग्न-नवांशस्य यो राशिः संज्ञया समः ।
तस्मिन् लग्न-गते राशौ वक्तव्यं जन्म पृच्छतः ।।
1-30 यावत्-संख्यो गतो लग्नाद् द्रेष्काणो दिनकृत्ततः ।
तावत्-संख्ये लग्न-राशौ प्रष्टुर्जन्म विनिर्दिशेत् ।।

अथ साम्प्रतं प्रकारान्तरेण लग्नानयनमाह ।
अस्यार्थः । जन्मेति । प्रश्न-लग्न-गत-ग्रहस्य तात्कालिकं लिप्तापिण्डं कृत्वा द्वादशांगुल-शंकुच्छायांगुलैर्गुणितं द्वादशभिर्भक्तं शेषं जन्म-लग्नम् । यदा लग्ने वहवो ग्रहाः स्युस्तदा तेषां मध्ये योधिक-वली तस्माज्जन्म-लग्नं ज्ञातव्यम् । इति ।

तथा च ।
1-31 जन्मादिशेल्लग्न-गे वीर्य-गे वा छायांगुलघ्नोर्कंहृतेवशिष्टम् ।।
1-32 लग्न-गे वीर्य-गे वापिच्छायांगुल हृते हृते ।
रविभिर्जन्म शिष्टं हि कथयेदविशङ्कितः ।।

अथ सम्प्रति प्रकारान्तरेण जन्म-लग्न-ज्ञानम् ।
1-33 आसीन-सुप्तोत्थित-तिष्ठतां भं जाया सुखाज्ञोदय-ग प्रदिष्टम् ।।
तथा च ।
1-34 तिष्ठतः शयनस्थस्य निविष्टस्योत्थितस्य च ।
लग्नादि-केन्द्र-वेश्मानि वदेज्जन्म विधौ क्रमात् ।।
1-35 भावं विचार्य सकलं यद्यत्तुल्यं तु तत्तथा ।
अन्येप्येवमाहुः ।
1-36 उत्तिष्ठतो विलग्नात् प्रष्टुः सुप्तस्य बन्धु-लग्नाच्च ।
उपविष्टस्यास्तमये वक्त्रतो मेषूरण-स्थानात् ।।

जन्मलग्न का ज्ञान

प्रश्नकालिक लग्न में जिस राशि का नवांश हो वही राशि जन्मलग्न होती है। अथवा प्रश्नलग्न में जो द्रेष्काण हो उससे जितने संख्यक द्रेष्काण में सूर्य हो, उसमें से, उतने संख्यक द्रेष्काण की राशि को जन्म-लग्न होना चाहिए ।

कल्याणवर्मा एवं अन्य आचार्यों का भी यही मत है। उपर्युक्त सभी श्लोकों में इसी बात की पुनरावृत्ति की गई है, अतः हमने पिष्टपेषण नहीं किया है। जन्मलग्न को जानने की दूसरी रीति भी है : प्रश्नलग्न में जो ग्रह हो उसका कलापिण्ड बनाकर द्वादशांगुल शंकु के तात्कालिक छायांगुलों से गुणाकर १२ का भाग देना चाहिए। यहां जो शेष बचता है, वह जन्मलग्न होता है। यदि लग्न में अनेक ग्रह हों, तो उनमें से बलवान् ग्रह का कलापिण्ड बनाकर उक्त रीति से जन्मलग्न का ज्ञान करना चाहिए। आचार्य कल्याणवर्मा का भी यही मत है।

जन्म लग्न जानने की एक रीति और भी है :

प्रश्नकर्ता बैठकर प्रश्न करे तो प्रश्नलग्न से सप्तम राशि, लेटे-लेटे प्रश्न करे तो प्रश्न लग्न से चतुर्थ राशि और उठते हुए प्रश्न करे तो प्रश्नलग्न से दशम राशि को जन्मलग्न बताना चाहिए। कल्याणवर्मा एवं अन्य आचार्यों ने भी इस मत का समर्थन किया है।

अथेदानीं प्रकारान्तरेण सर्वमेव नष्ट-जातकं कथयति

1-37 गो-सिंहौ जितुमाष्टमौ क्रिप-तुले कन्या-मृगौ च क्रमात्
संवर्ग्यौ दशकाष्ट-सप्त-विषयैः शेषाः स्व-संख्या गुणाः।
जीवारास्फुजिदैन्दवाः प्रथमवच्छेषा ग्रहाः सौम्यवद्
राशीनां नियतो विधिर्ग्रह-युतैः कार्या च तद्वर्गणा॥
तथा च।

1-38 वृष-सिंहौ दश-गुणितौ, वसुभिर्मिथुनालिकौ, वणिङ्-मेषौ।
मुनिभिः कन्या-मकरौ बाणैः शेषाः स्वसम्मितैरेव॥

1-39 गुरुणा कुजेन भृगुणा बुधेन्दुभान्वार्किभिः क्रमशः।
अथाधुनैतन्नष्टजन्मज्ञानं स्पष्टमुच्यते॥

1-40 मेषादितः प्रश्न-विलग्नलिप्ताः कार्याः क्रमात्ता मुनिभिः ख-चन्द्रैः।
गजैश्च वेदैर्दशभिश्च बाणैः शैलैर्भुजङ्गैः खचरैः शरैश्च॥

1-41 शिवै पतंगैर्निहताः पुनस्ता विलग्नगाश्चेद् भृगु-भौम-जीवाः।
तदा तुरङ्गैः करिभिः ख-चन्द्रैर्गुण्याः शरैरन्य-ख-गा यदि स्युः।

अनयोरर्थः। मेषादित इति शिवैरिति च। इह सलिलवत्-समीकृत भुवि द्वादशांगुलात्मक शंकुः स्थाप्य, तच्छायातः परमदिनम्० इत्यादिना

विधिना इष्टकालः संसाध्यः, तस्मात् स्वोदयेभ्यस्तत्कालार्कः सायनः० इत्यादि रीत्या लग्नं विधेयम् ।

ततस्तस्य स्फुटलग्नस्य कलाः कार्याः । ततस्ताः मेषात् क्रमात् सप्तभिर्, दिग्भिर्, अष्टाभिश्, चतुर्भिर्, दशभिः, पञ्चभिः, सप्तभिर्, अष्टाभिर्, नवभिः, पञ्चभिर्,एकादशैर्, द्वादशैर्, निहता गुणिताः कार्याः । पुनस्ता यदि लग्ने शुक्रस्तदा सप्तभिश्, चेद् भौमस्तदाष्टभिस्, तत्र गुरुश्चेत्तदा दशभिर्गुण्याः । यदि तत्रान्य-ख-गा रवि-चन्द्र-बुध-शनयः स्युस्तदा शरैः पञ्चभिर्गुण्याः । एवं च गुणिताङ्कमेकान्ते स्थापयेत् । अथ सम्प्रति लग्न-गतौ द्वौ ग्रहौ वा लग्न-गता वहवो ग्रहाश्चेत्तदा पिण्डानयन विधिः—

नष्ट-जातकज्ञानार्थ गुणांक कथन

वृष एवं सिंह का १०, मिथुन एवं वृश्चिक का ८, मेष एवं तुला का ७, कन्या एवं मकर का ५, तथा शेष राशियों का गुणांक अपनी संख्या के बरावर होता है । यथा—कर्क का ४, धनु का ९, कुम्भ का ११ एवं मीन का १२ होता है । गुरु का गुणांक १०, मंगल का ८, शुक्र का ७ तथा बुध का गुणांक ५ होता है । शेष ग्रहों का गुणांक बुध के समान अर्थात् ५ होता है । प्रश्नलग्न में ग्रह होने पर इन गुणांकों से गुणन किया जाता है ।

आचार्य कल्याणवर्मा ने भी राशियों एवं ग्रहों के ये गुणांक बताये हैं : राशियां—मेष ७, वृष १०, मिथुन ८, कर्क ४, सिंह १०, कन्या ५, तुला ७, वृश्चिक ८, धनु ९, मकर ५, कुंभ १२, मीन १२ । ग्रह—सूर्य ५, चन्द्र ५, मंगल ८, बुध ५, गुरु १०, शुक्र ७, और शनि ५ ।

पिण्डायन की रीति अग्रलिखित है। सर्वप्रथम धरातल को समतल वनाकर द्वादशांगुल शंकु स्थापित कर छाया का ज्ञान करना चाहिए । फिर उस छायांगुल से 'परमदिन०' इत्यादि श्लोकोक्त रीति से इष्ट-काल, जानना चाहिए । और फिर इष्टकाल सायन सूर्य एवं राशियों के स्वोदयमानों के आधार पर 'तत्कालार्कः सायनः स्वोदयघ्नः०' इत्यादि रीति से लग्नानयन करना चाहिए ।

इस प्रकार स्पष्टलग्न को जानकर उसकी कलाएं वनानी चाहिएं । और लग्न में मेषादि राशि होने पर यथाक्रम ७, १०, ८, ४, १०, ५,

७, ८, ६, ५, ११ एवं १२ से गुणा करना चाहिए। तत्पश्चात् लग्न में शुक्र हो तो ७ से, मंगल हो तो ८ से, गुरु हो तो १० से तथा अन्य कोई ग्रह हो तो उक्त गुणनफल को ५ से गुणा करना चाहिए। इस प्रकार साधित पिण्ड को एक स्थान में रखना चाहिए।

1-42 **ग्रह-द्वयं वा बहवो विलग्ने तदा तदीयैर्गुणकैश्च गुण्याः।**
एवं कृते कर्म विधाय योग्यो राशिः पृथक्-स्थः परिरक्षणीयः॥

अस्यार्थः। ग्रह-द्वयमिति। यदा लग्ने ग्रह-द्वयं व बहवो ग्रहाः सन्ति तदा द्वयोर्ग्रहयोर्वा बहूनां ग्रहणां ये पूर्वोक्त-गुणाङ्कास्ताभ्यां तैर्वा ताः कला गुणयेत्। एवं कृते सति तदा गुणिताङ्कमेकान्ते स्थापयेत्।

अत्रोदाहृतिः। स्पष्ट-लग्नं १।४।२५।०। अस्य कला-पिण्डम् २०६५। अत्र प्रश्न-काले वृष-लग्नमस्ति, तस्माद् वृष-राशि-गुणकेन १० गुणित-कला-पिण्डम् २०६५०।०। इह प्रश्न-लग्ने चन्द्र-गुरू व्यस्थितौ ततस्तयो र्गुणकाभ्यां ५।१० गुणितं जातं १०३२५००।० कर्म-योग्य-पिण्डम्। एतत् तु एकान्ते स्थाप्यम्।

प्रश्नलग्न में दो या अधिक ग्रह होने पर पिण्डानयन की रीति बताते हैं—

यदि प्रश्नलग्न में दो या अधिक ग्रह हों तो उन दोनों ग्रहों या उन सब ग्रहों के गुणांकों से उक्त कलापिण्ड अर्थात् गुणनफल को गुणित करना चाहिए। और फिर उस पिण्ड को नष्ट-जातक की जानकारी के लिए एक स्थान पर लिख लेना चाहिए।

इसका उदाहरण प्रस्तुत है। मान लीलिए कि नष्ट-जातक की जानकारी हेतु प्रश्न करते समय स्पष्टलग्न १।४।२५।० थी। इसकी कलाएं २०६५ हुईं। प्रश्न लग्न में वृष राशि होने के कारण इन कलाओं का वृष के गुणांक १० से गुणा किया २०६५×१०=२०६५०। यहां लग्न में चन्द्र एवं गुरु—ये दो ग्रह थे। अतः इनके गुणांक ५ एवं १० से गुणा करने पर २०६५०×५×१०=१०३२५०० हुआ। यह नष्ट-जातक की जानकारी के योग्य पिण्ड हुआ। इस पिण्ड को एक स्थान पर लिख लेना चाहिए।

कला पिण्ड बनाने के लिए राशि व अंशों की कला बनाकर उसमें लग्न स्पष्ट की कलाएं जोड़नी चाहिएं। उपर्युक्त उदाहरण में लग्न स्पष्ट १।४।२५।० है। एक राशि व चार अंश मिलकर कुल ३४ अंश हुए।

कलाएं वनाने के लिए ६० से गुणा किया, तव ३४×६०=२०४० कलाएं+२५ कलाएं=२०६५ कुल कलाएं हुईं।

अथेदानीं नक्षत्रानयनम्

1-43 **पृथक्-स्थ-राशिर्मुनिभिर्विनिघ्नस्त्वाद्ये दृकाणे नव-युग् द्वितीये।**
यथा-स्थितोयं नव-वार्जितोन्त्ये भ-संज्ञयाप्तोह्यवशेषमृक्षम्॥
तथा च।

1-44 **सप्ताहतं-त्रि-घन-भाजित-शेषमृक्षं**
दत्त्वाथ वा नव विशोध्य न वाथ वा स्यात्।

अत्रोदाहृतिः। इहैकान्ते स्थापितं पिण्डं१०३२५०० सप्तभिर्गुणितं जातं ७२२७५००। अत्र लग्ने प्रथमो द्रेष्काणो वर्तते ततस्तन्नवभिर्युक्तं जातं ७२२७५०९, सप्तविंशत्या भक्तं शेषं १४। अतोश्विनीतश्चतुर्दश-संख्याकं चित्रा-नक्षत्रं प्रष्टुर्वक्तव्यमिति।

जन्मनक्षत्र का ज्ञान

पूर्वानीत पिण्ड को ७ से गुणा करना चाहिए। फिर लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो गुणनफल में ९ जोड़ना चाहिए। यदि लग्न में द्वितीय द्रेष्काण हो तो गुणनफल में न तो कुछ जोड़ना चाहिए और न ही घटाना चाहिए। यदि लग्न में तृतीय द्रेष्काण हो, तो गुणनफल में से ९ घटाना चाहिए। फिर उसमें २७ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर अश्विनी आदि नक्षत्र को प्रश्नकर्ता का जन्म-नक्षत्र मानना चाहिए। आचार्य वराह-मिहिर का भी यही मत है।

अव उदाहरण लीजिए। जन्मनक्षत्र जानने के लिए उक्त पिण्ड को ७ से गुणा किया। १०३२५००×७=७२२७५००। यहां लग्न में प्रथम द्रेष्काण होने के कारण गुणनफल में ९ जोड़ने से ७२२७५०० +९=७ २२७५०९ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से १४ शेष वचा। अतः अश्विनी से गणना करने पर १४ वें नक्षत्र चित्रा को प्रश्नकर्ता का जन्मनक्षत्र मानना चाहिए।

अथाधुना स्त्री-पुत्रादीनां नक्षत्राद्यानयनम्

1-45 **स्त्री-पुत्र-मित्रादि-निमित्तकं चेत् पृच्छा-विलग्नं त्वृतुभिश्च वेदैः।**
त्रिभिः शरैर्युक्तमनुक्रमेण ततो विलग्नस्य कला विधेयाः।

1-46 लग्नस्य राशेर्गुणकेन गुण्याश् चेत् संभवो लग्न-गत-ग्रहस्य ।
पुनस्तदीयेन गुणेन गुण्याः प्रागुक्तवद् भं परिवेदितव्यम् ॥

1-47 एवं कलत्र-सहजात्मज-शत्रु-भेभ्यः
प्रष्टुर्वदेदुदय-राशि-वशेन तेषाम् ।

अनयोरर्थः । स्त्रीति, लग्नस्येति च । यदि पृच्छा स्त्री-पुत्र-मित्र-शत्र्वादि-निमित्तकं तदा तु क्रमाल्-लग्ने षट्, चत्वारस्, त्रयः, पञ्चैभिरङ्कैर्योज्यं तत्तद् भावो भवेत् । तं भावमेव लग्नं कल्पयेत् ।
ततस्तस्य कल्पित-लग्नस्य कलापिण्डं विधेयम् । पुनस्तत्कल्पित-लग्न-राशि-गुणकेन गुणयेत् । पुनस्तत्र ग्रहो भवति चेत् तदा तु ग्रह-गुणकेनापि गुणयेत् । सप्तभिर्गुणयेत् अथ तस्मिन् कल्पित-लग्ने यद्याद्यो द्रेष्काणोस्ति तदा तु तत्र पिण्डे नव देया अर्थाद्युक्ताः कार्याः । द्वितीयो द्रेष्काणश्चेत् तदा नव न देया, नापि शोध्याः । तृतीये तु नव शोध्या रहिताः कार्या इत्यर्थः । सप्तविंशत्या भक्तं शेषमश्विन्यादितः कलत्रादीनां जन्म-नक्षत्रम् ।

अत्रोद्देशकः । तात्कालिकं लग्नं १।४।२५।० । अत्र राशि-षट्कं देयम् । ७।४।२५।० एतल्लग्नं परिकल्प्य अस्य कलात्मकं पिण्डस् १२८६५ । इदं वृश्चिक-राशि-गुणकेन ८ गुणितं जातं १०२९२० । इह वृश्चिक-राशिर्ग्रह-रहितस्तेन ग्रह-गुणकेन न गुणितम् । ततश्च सप्तभिर्गुणितं जातं ७२०४४० । वृश्चिक-राशौ प्रथमो द्रेष्काणो वर्तते ततस्तत्र नव देयाः; ७२०४४९, एते सप्तविंशत्या हृताः । शेषं ८, अश्विनीतो गणनीयं जातं प्रष्टुः कलत्रस्यापि पुष्य नक्षत्रमिति । एवमनया रीत्या पुत्रादीनां जन्म-नक्षत्रानयनं कार्यम् । तथा च ।

अथाधुना प्रकारान्तरेण नक्षत्रानयनम् ।

स्त्री, पुत्र आदि के जन्मनक्षत्र का ज्ञान

यदि स्त्री, पुत्र, मित्र या शत्रु का जन्मनक्षत्र जानने के लिए प्रश्न किया जाए, तो प्रश्नलग्न में यथाक्रम ६, ४, ३ और ५ राशि जोड़कर उनकी कलाएं बनानी चाहिए। फिर उन कलाओं को राशि के गुणांक से गुणाकर यदि लग्न में कोई ग्रह हो तो उसके गुणांक से भी गुणा करना चाहिए। फिर नक्षत्रज्ञान की पूर्वोक्त रीति से जन्मनक्षत्र की

जानकारी करनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि प्रश्नलग्न की राशि में स्त्री, पुत्र आदि के लिए ६, ४, ३ और ५ छोड़कर पूर्वोक्त प्रकार से पिण्डसाधन करना चाहिए। उस पिण्ड को ७ से गुणा करना चाहिए। यदि प्रश्नलग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो गुणनफल में ९ और द्वितीय द्रेष्काण हो तो शून्य जोड़ना चाहिए। यदि प्रश्नलग्न में ९ और द्वितीय द्रेष्काण हो तो शून्य जोड़ना चाहिए। यदि प्रश्नलग्न में तृतीय द्रेष्काण हो तो गुणनफल में से ९ घटाना चाहिए। और अन्त में २७ का भाग देकर एक आदि शेष होने पर अश्विनी आदि नक्षत्र को प्रश्नकर्ता की पत्नी आदि का जन्मनक्षत्र मानना चाहिए।

इसका उदाहरण प्रस्तुत है। मान लीजिए कि किसी व्यक्ति ने अपनी पत्नी का जन्मनक्षत्र जानने के लिए प्रश्न लिया। उस समय स्पष्ट लग्न १।४।२५।० था, इसमें ६ राशि जोड़ने से ७।४।२५।० हुआ तथा इसकी कलाएं ७×३०=२१०+४=२१४×६०=१२८४०+२५ =१२८६५ हुईं। इसको वृश्चिक राशि के गुणांक ८ से गुणित किया १२८६५×८= १०२९२०। प्रश्नलग्न में कोई ग्रह न होने के कारण इस उदाहरण में पिण्ड १०२९२० हुआ। फिर पिण्ड को गुणा किया १०२९२०×७=७२०४४०। लग्न में प्रथम द्रेष्काण होने के कारण इसमें ९ जोड़ा, ७२०४४०+९= ७२०४४९। इसमें २७ का भाग देने पर ८ शेष बचा। अतः अश्विनी से गणना करने पर आठवां पुष्य नक्षत्र प्रश्नकर्ता की पत्नी का जन्मनक्षत्र सिद्ध हुआ।

1-48 **संस्कार-नाममात्रा द्वि-गुणाच्छायाङ्गुलैः समायुक्ताः।**
शेषं त्रि-नवक-भक्तान् नक्षत्रं तद् धनिष्ठादि॥

1-49 **संस्कार-नाममात्रा द्वि-गुणाच्छायाङ्गुलैः समायुक्ताः।**
त्रि-घन-भक्ता यच्छेषं नक्षत्रं तद् धनिष्ठादि॥

1-50 **द्वि-त्रि-चतुर्दश-दश-तिथि-सप्त-त्रि-गुणा नवाष्ट-चैन्द्राद्याः।**
पञ्चदश-घ्नास्तद्दिङ्मुखान्विता भं धनिष्ठादि॥

अस्य व्याख्या। संस्कारेति। नाम-करण-संस्कारे यन्नाम धृतं तस्मिन्नेव नाम्नि यावन्तो वर्णा विद्यन्ते तेषां या मात्रास्ताः संगृह्य द्वि-गुणाः कार्याः। अत्र हल् अर्धमात्रिकः अच् मात्रिकः। ततोभीष्ट समये द्वादशाङ्गुल शङ्कोर्यानिच्छायाङ्गुलानि तानि गृहीत्वा पूर्वानीता द्वि-गुण-मात्रा-

स्तैङ्गुलैर्युक्ताः कार्याः। ततः सप्तविंशत्या भक्ते यच्छेषं भवति तद् धनिष्ठादितो नक्षत्रं ज्ञातव्यमिति। तथा च।

अथाधुना पुनः प्रकारान्तरेण नक्षत्रानयनमाह (वराहः)।

अस्य व्याख्या। द्वीति। पूर्वाग्नेयादेः क्रमतो द्वौ, त्रयश् चतुर्दश, दश, पञ्चदशैक विंशतिर्, नवाष्ट एतेङ्का भवन्ति। पूर्वादीनां मध्ये यद्दिगभिमुखः प्रष्टा पृच्छति तद्दिक्-सम्बन्धिनो येङ्कास्ते पञ्चदशभिर्गुणिताः कार्याः। ततः प्रष्टुरभिमुखं दिशि यावन्ता नरास्तदभिमुख-स्थिता-स्तत्संख्यया युक्ताः कार्याः। एवं कृते यद् भवति तत् सप्त-विंशत्या भक्ताच्छेषं धनिष्ठादितो नक्षत्रं वाच्यमिति।

जन्मनक्षत्र जानने की दूसरी रीति अग्रलिखित है। नामकरण संस्कार के समय जो नाम रखा गया हो उस नाम में जितने अक्षर हों उनकी मात्राओं को जोड़कर द्विगुणित करना चाहिए। यहां स्वर सहित अक्षरों की १-१ मात्रा तथा स्वर रहित हल् अक्षरों की आधी-आधी मात्रा लेनी चाहिए। फिर प्रश्नकाल में द्वादशांगुल शंकु की छाया को अंगुलों से नापकर, उन अंगुलों की संख्या पूर्वफल में जोड़कर २७ का भाग देना चाहिए। यहां एक आदि शेष होने पर धनिष्ठा आदि जन्मनक्षत्र मानना चाहिए। आचार्य कल्याणवर्मा का भी यही मत है।

जन्मनक्षत्र जानने की एक और रीति भी है। पूर्व आदि आठों दिशाओं के क्रमशः २, ३, १४, १०, १५, २१, ९ एवं ८ अंक होते हैं। प्रश्न-कर्ता जिस दिशा की ओर मुंह करके बैठा हो उस दिशा के अंकों को १५ से गुणा करना चाहिए। और फिर प्रश्नकर्ता के सामने की दिशा में जितने मनुष्य हों उनकी संख्या उक्त गुणनफल में जोड़नी चाहिए। फिर इस संख्या में २७ का भाग देकर १ आदि शेष होने पर धनिष्ठा आदि नक्षत्र को प्रश्नकर्ता का जन्मनक्षत्र वताना चाहिए। यदि उस दिशा में कोई न हो तो मनुष्यों की संख्या नहीं जोड़नी चाहिए। माना कि प्रश्नकर्ता दक्षिण की ओर मुंह करके बैठा है। दक्षिण दिशा के ध्रुवांक १४ को १५ से गुणा किया तो १४ × १५ = २१० संख्या प्राप्त हुई। उस दिशा में कोई अन्य मनुष्य नहीं था। अतः बिना कोई और संख्या जोड़े २७ से भाग दिया। २१० ÷ २७ तो २१ शेष वचा। धनिष्ठा से गणना करने पर २१वां नक्षत्र विशाखा है; अतः प्रश्नकर्ता का जन्म नक्षत्र भी विशाखा ही वताना चाहिए।

अथ सम्प्रति वर्षर्तु-मासानयनम्

1-51 दशाहते कर्म-विधान-राशौ प्राग्वन्-नवोनेप्यथ वाधिकेस्मिन् ।
खार्कैर्हृते शेषमिताब्द-संख्यम् आयुर्गतं तत्खलु पृच्छकस्य ॥

1-52 षड्भिर्विभक्ते ऋतवो भवन्ति शेषाङ्क-तुल्याः शिशिरादय स्युः ।
द्वि-भाजिते शेषकमेक-मात्रं पूर्वापरौ तावृतु-जौ च मासौ ॥

1-53 वर्षर्तु-मास-तिथयो द्यु-निशं ह्युडूनि
वेलोदयर्क्ष-नव-भाग-विकल्पनाः स्युः ।
भूयो दशादि-गुणिताः स्व-विकल्प-भक्ता
वर्षादयो नवक-दान-विशोधनाभ्याम् ॥

1-54 विज्ञेया दशकेष्वब्दा ऋतु-मासास्तथैव ।

तथैव ऋतु-मासा विज्ञेयाः । इति । तथा च ।

1-55 वर्षर्तु-मास-तिथयो द्यु-निशा-भ-नवांश-वेलाश्च ।
एवं क्रमेण हृत्वा स्व-विकल्प-भाजिताच्छेषम् ॥

1-56 एवं भवन्ति सर्वे नव-दान-विशोधने च पुनः ।
यवनेन्द्र-दर्शनाद्यैः कथितं तदिहात्र सर्वमेव मया ॥

1-57 किन्तु स्फुटं न सर्वं स्पष्टं सा (स्वा) रस्वतं चिन्त्यम् ।

अनयोर्व्याख्या । दशाहत इति, षड्भिरिति च । पूर्वानीतं विधान-राशि दशभिर्गुणयेत् । ततो नवक-दान-विशोधनं कारयेत् । पुनस्तं कर्म-योग्य राशिं विंशत्यधिक-शतेन विभजेत् । तदा यच्छेषं तत्समं तस्य वर्ष-संख्यानं वाच्यन् । प्रष्टुरिति शेषः । ततः स राशिः षड्भिर्विभक्तस्तदा शेष तुल्याः शिशिरादय ऋतवो वाच्याः । ततः स एव राशिर्द्वाभ्यां हृतः शेषम् ऋतोः पूर्वापर-मासौ वाच्यौ । इति ।

अत्रोदाहरणम् । कर्म-विधान-पिण्डं १०३२५०० दशभिर्गुणितं जातं १०३२५००० । अत्र लग्ने प्रथमो द्रेष्काणोस्ति, तेन नव देया जाताः १०३२५००९ । इने विंशत्यधिक-शतेनाप्ताः, शेषं ८९ प्रष्टुर्गताब्दाः । पुनस्तदेव विशुद्ध-कर्म योग्य पिण्डं १०३२५००९ षड्भिर्विहृतं शेषं ५ शिशिरादारभ्यतौ शरदि प्रष्टुर्जन्म ।

पुनस्तदेव पिण्डं १०३२५००९ द्वाभ्यां विभक्तम् । तदा शेषं १ शरदः पूर्वे मासि आश्विने प्रष्टुर्जन्म । इति । तथा च ।

अस्य व्याख्या । त्रर्षेति, विज्ञेया इति च । अत्र कर्म-विधान-पिण्डं भूयः पुनर् दशाष्टादिभिर्गुणिताः स्व-विकल्प-भक्ता विंशत्युतर-शतादि विभाजिता नवक-दान-विशोधनाभ्यां वर्षादयः । अर्थाद् वर्षर्तु-मास तिथि-दिवा-रात्रि-नक्षत्र-वेला-उदयर्क्ष-नव-भागादयः स्युः ।
अत्र तेनैव स्पष्टमुक्तम । तद्यथा दशकेषु दशषु वर्गेषु दशाहतेष्वब्दा विज्ञेयाः ।

वर्ष, ऋतु एवं मास का ज्ञान

पूर्वोक्त रीति से साधित पिण्ड को १० से गुणा कर पूर्ववत् ९ जोड़ना या घटाना चाहिए । फिर इसमें १२० का भाग देने पर जो शेष वचे, वह प्रश्नकर्ता की आयु के वर्ष होते हैं। उक्त दशगुणित राशि में ६ का भाग देने से जो शेष वचे वह शिशिर आदि ऋतु होती है। उस राशि में २ का भाग देने से १ शेष रहे तो ऋतु का प्रथम मास तथा शून्य शेष रहे तो ऋतु का द्वितीय मास जन्ममास मानना चाहिए। इसका उदाहरण प्रस्तुत है । पूर्वसाधित पिण्ड १०३२५०० है। इसको १० से गुणा किया तो १०३२५००×१०=१०३२५००० । यहां लग्न में प्रथम द्रेष्काण होने के कारण ९ जोड़ा तो १०३२५०००+९= १०३२५००९ । फिर इसमें १२० का भाग दिया, तो शेष ८९ वचे । अतः प्रश्नकर्ता की आयु ८९ वर्ष की वतानी चाहिए ।

ऋतु का ज्ञान करने के लिए कर्मयोग्य पिण्ड १०३२५००९ में ६ का भाग दिया, तो शेष ५ वचा । अतः शिशिर से गणना करने पर ५वीं अर्थात् शरद् ऋतु में प्रश्नकर्ता का जन्म कहना चाहिए ।

उक्त कर्मविधान योग्य पिण्ड १०३२५००९ में २ का भाग देने पर १ शेष बचता है। अतः शरद् ऋतु में प्रथम मास आश्विन में प्रश्नकर्ता का जन्म मानना चाहिए । इस सम्बन्ध में वराहमिहिर का मत प्रस्तुत है:

पिण्ड को १० आदि से गुणा कर अपने-अपने १२० आदि विकल्पों से भाग देकर पूर्वोक्त रीति से यथास्थिति में ९ जोड़ने या घटाने पर वर्ष, ऋतु, मास, तिथि, दिन, रात्रि नक्षत्र, वेला, उदयर्क्ष एवं नवांश होते हैं। यथा पिण्ड को १० से गुणा कर १२० का भाग देने से शेष वर्ष होते हैं ।

इसी प्रकार ऋतु, मास आदि की जानकारी करनी चाहिए। आचार्य कल्याणवर्मा का मत भी यही है।

अथ साम्प्रतं पक्ष-तिथ्यानयनम्

1-58 अष्टाहते कर्म-विधान-राशौ प्राग्वन् नवोनेप्यथ वाधिकेस्मिन्।
द्वि-भाजिते शेषकमेकमभ्र-तुल्येस्ति पूर्वापर-पक्षकौ स्तः।

1-59 पञ्चेन्दु-भक्ते सति शेष-तुल्याः पक्षे च तस्मिंस्तिथयो भवन्ति।
नक्षत्र-तिथ्यानयनाय योग्याद् अहर्गणाद्-वार-विचारणात्र॥
तथा च

1-60 अष्टकेष्वपि मासार्धास्तिथयश्च तथा स्मृताः।

अनयोर्व्याख्या। अष्टाहत इति, पञ्चेन्दु-भक्त इति च। पूर्वागत-कर्म-विधान-राशिरष्टभिर्गुणितस्, ततः प्राग्वन् नव देयाः। न देया नापि शोध्याः अनेन विधिना जातं स्फुटं पिण्डम्।

तद् द्वाभ्यां भाजिते सति तदैक-शेषेण शुक्ल-पक्षः। शून्य-शेषण कृष्ण-पक्षो ज्ञातव्यः। पुनस्तदेव स्फुटं पिण्डं पञ्चदशभिर्भक्तं सत् तदा शेषं तत्प्रतिपत्-तस् तिथयो भवन्ति। नक्षत्र-तिथ्यानयनार्थो दिन-गणः साध्यते। तस्माद् योग्यादहर्गणादयः वार-विचारणा कार्या। सुधियेति शेषः।

अत्र प्रदर्शकः। कर्म-विधान-राशिः १०३२५०० अष्टभिर्गुणितो जातः ८२६०००० । अत्र लग्ने आद्यो द्रेष्काणस्तेन नव देया, जातः कर्म योग्य-शुद्ध-राशिः ८२६०००९।

अस्मिन् द्वाभ्यां विभाजिते सति तदा शेषम् १, अतः शुक्ल-पक्षे प्रष्टु र्जन्म। पुनः स एव कर्म-योग्य-शुद्ध राशिः ८२६०००९ पञ्चदशभिर्हृतः सन् तदा शेषं ४ अतोस्यैव शुक्ल-पक्षस्य चतुर्थी-तिथौ प्रष्टुर्जन्मेति।

अस्यार्थः। अष्टकेष्विति। अष्टकेष्वष्ट-वर्गेष्वष्ट-गुणितेषु कर्म-विधान-राशिषु मासार्धौ तथा तिथयश्च स्मृताः। इति।

पक्ष एवं तिथि का ज्ञान

पिण्ड को ८ से गुणा कर उसमें प्रश्न लग्न के द्रेष्काण के अनुसार यथावसर ९ जोड़ने, शून्य जोड़ने या ९ घटाने से स्पष्टपिण्ड होता है।

इसमें २ का भाग देने पर १ शेष वचे तो शुक्लपक्ष तथा शून्य शेष वचे तो कृष्णपक्ष मानना चाहिए। पूर्वोक्त स्पष्टपिण्ड में १५ का भाग देने से १ आदि शेष होने पर प्रतिपदा आदि तिथि को जन्मतिथि मानना चाहिए। और अहर्गण से वार का ज्ञान करना चाहिए।

इसका उदाहरण प्रस्तुत है। पिण्ड १०३२५०० है। इसको ८ से गुणा किया तो १०३२५००×८=८२६००००। यहां लग्न में प्रथम द्रेष्काण होने के कारण ९ जोड़ा तो ८२६००००+९=८२६०००९ हुआ। इसमें २ का भाग देने से १ शेष वचता है। अतः शुक्लपक्ष में प्रश्नकर्ता का जन्म कहना चाहिए।

स्पष्टपिण्ड ८२६०००९ में १५ का भाग देने पर ४ शेष वचता है। इसलिए शुक्लपक्ष की चतुर्थी तिथि को प्रश्नकर्ता का जन्म वताना चाहिए। आचार्य वराहमिहिर ने भी यही कहा है :

पक्ष एवं तिथि का ज्ञान करने के लिए पिण्ड को ८ से गुणा कर अपने विकल्प से भाग देकर पक्ष एवं तिथि का ज्ञान किया जाता है।

अथाधुना दिवा-रात्रि-प्रसूति-ज्ञानम्

1-61 **सप्ताहते कर्म-विधान-राशौ प्राग्वन् नवोनेप्यथ वाधिकेस्मिन्।**
द्वि-भाजितं शेषकमेकमत्र दिवा च रात्रौ जननं तदानीम्॥
तथा च।

1-62 **दिवा-रात्रि-प्रसूतिं च नक्षत्रानयनं तथा।**
सप्तकेष्वपि वर्गेषु नित्यमेवोपचक्षयेत्॥

अस्य व्याख्या। सप्ताहत इति। कर्म-विधान-राशिः सप्तभिर्गुणितस्ततो। नवक-दान-विशोधनाभ्यां जातः स्फुटः कर्म-योग्य-राशिः। अयं द्वाभ्यां विभक्तः। तत्रैक-शेषेण दिवा, शून्यशेषेण रात्रौ जन्म वाच्यमिति।

अत्रोद्देशकः कर्म-विधान-राशिः १०३२५०० सप्तभिर्गुणितो जातः ७२२७५००। अत्र लग्ने प्रथमो द्रेष्काणस्तेन नवभिर्युक्तो जातः ७२१७५०९। द्वाभ्यां विभाजिते सति तदा शेषं १, अतः प्रष्टुर्दिने जन्म वक्तव्यम्।

अस्यार्थः। दिवेति। सप्तकेषु वर्गेषु सप्त-गुणितेष्वपि दिवा-रात्रि-प्रसूतिं

दिन-रात्रि-जन्म तथा नक्षत्रानयनं नित्यमेव सर्वदैव उपलक्षयेत् कथये-दित्यर्थः।

दिन या रात्रि में जन्म का ज्ञान

पिण्ड को ७ से गुणा कर उसमें यथावसर ६ जोड़ना या घटाना चाहिए। फिर इसमें २ का भाग देने पर १ शेष रहे तो दिन में और शून्य शेष रहे तो रात्रि में जन्म कहना चाहिए।

इसका उदाहरण प्रस्तुत है। पिण्ड १०३२०० है। इसको ७ से गुणा किया तो १०३२५००×७=७२२७५००। यहां लग्न में प्रथम द्रेष्काण होने के कारण ६ जोड़ा तो ७२२७५००+६=७२२७५०६। इसमें २ का भाग देने से १ शेष बचता है। अतः प्रश्नकर्ता का दिन में जन्म बताना चाहिए। वराहमिहिर का मत भी ऐसा ही है :

दिन या रात्रि में जन्म तथा नक्षत्र दोनों का ज्ञान करने के लिए सदैव पिण्ड को ७ से गुणा करना चाहिए।

अथ सम्प्रति दिन-रात्रि-घटी-ज्ञानम्

1-63 **पञ्चाहते कर्म-विधान-राशौ प्राग्वन् नवोनेप्यथ वाधिकेस्मिन्।**
दिनस्य रात्रेरथ वा प्रमित्या भक्तेवशिष्टं दिन-रात्रि-नाड्यः॥

तथा च।

1-64 **वेलाऽमथ विलग्नं च होरामंशकमेव च।**
पञ्चकेषु विजानीयान्-नष्ट-जातक-सिद्धये॥

अस्य व्याख्या। पञ्चाहत इति। कर्म-विधान-राशिः पञ्चभिर्गुणितः, ततो लग्न-द्रेष्काण-वशतो नवक-दान-विशोधनाभ्याम्० इत्यादि-विधिना स्फुटः कर्म-विधान-राशिर्भवति। यदा प्रष्टुर्दिने जन्म तदा स दिन-मान प्रमित्या, यदा च रात्रौ जन्म तदा रात्रि-मान-प्रमित्या विभाज्यः, तदा शेषमिष्ट-घट्यो भवन्तीति।

अत्रोद्देशकः। पूर्वागत-कर्म-विधान-राशिः १०३२५००। अयं पञ्चभि-र्गुणितो जातः ५१६२५००। इह लग्ने प्रथमो द्रेष्काणस्तेन नवभिर्युक्तो जातः ५१६२५०९ स्फुट-कर्म-योग्य-राशिः।

इह प्रष्टुर्दिवा जन्म तेन दिन-माने ३०।० प्रमित्या भक्ते सति तदा शेषं १९।० प्रष्टुर्जन्म-समये दिन-गत-घट्यो भवन्ति। अर्थादेतत्-प्रमित-घटीषु प्रष्टुर्जन्म वाच्यमिति।

अस्यार्थः। वेलामिति। पञ्चकेषु पञ्च-वर्गेषु पञ्च-गुणितेषु कर्म-विधान-राशिषु वेलामिष्ट-कालं विलग्नं स्पष्ट-लग्नं होरांराश्यर्धं मंशकं नवांशकं चैतत्सर्वं नष्ट-जातक-सिद्धये विजानीयादति।
इति श्रीमत्पण्डित-मुकुन्द-दैवज्ञ-संगृहीते नष्ट-जातके वराहादि-युक्ति-प्रकरणं प्रथमं समाप्तिमगमत्।

इष्टकाल (दिन, रात्रि और घड़ी) का ज्ञान

कर्मविधान राशि (पिण्ड) को ५ से गुणा कर उसमें द्रेष्काण के अनुसार ९ जोड़ना या घटाना चाहिए।

यदि प्रश्नकर्ता का दिन में जन्म हो तो दिनमान से और रात्रि में जन्म हो तो रात्रिमान से उक्त राशि में भाग देने पर शेष दिनगत या रात्रि में जन्म हो तो रात्रिगत इष्टकाल होता है।

उदाहरण। पूर्वोक्त पिण्ड १०३२५०० को ५ से गुणा करने पर ५१६२५०० हुआ। लग्न में प्रथम द्रेष्काण होने के कारण इसमें ९ जोड़ा तो ५१६२५०९, यह स्पष्टपिण्ड हुआ।

प्रश्नकर्ता का दिन में जन्म हुआ है। अतः स्पष्टपिण्ड में दिनमान ३० घटो से भाग देने पर शेष १९ रहा। अतः प्रश्नकर्ता का दिनगत इष्ट-काल १९ घटी बताना चाहिए। वराह मिहिर का मत भी यही है। नष्ट-जातक का विचार करने के लिए पिण्ड को ५ से गुणा कर इष्टकाल, स्पष्टलग्न, होरा एवं नवांश की जानकारी करनी चाहिए।

इस प्रकार श्रीमान् पण्डित मुकंद दैवज्ञ द्वारा संगृहीत ग्रंथ नष्ट-जातक के वराहादि-युक्ति नामक प्रथम प्रकरण की श्री शुकदेव चतुर्वेदी की भावार्थ बोधिनी नामक हिंदी टीका समाप्त हुई।

अमीरचन्द्र-संग्रहस्थ-युक्ति-प्रकरणं द्वितीयम्

प्रश्न-काल लग्नादयन-ज्ञानम्

2-1 प्रश्न-कालस्य लग्नस्य पूर्वार्धं ह्युत्तरायणम् ।
अपरे दक्षिणं ब्रूयाज्जन्म सम्पृच्छतो बुधः ॥

अस्य व्याख्या । प्रश्नेति । प्रश्न-कालिक-लग्ने पूर्वार्धं प्रथम-होरा चेत् तदा प्रश्नकर्तुरुत्तरायणे मकरादि-षट्क-स्थे सूर्ये जन्म वक्तव्यम् । द्वितीया होरा चेत् तदा दक्षिणायने कर्कादि-षट्कस्थे सूर्ये प्रष्टुर्जन्म वक्तव्यम् इति ।

प्रश्नलग्न से अयन का ज्ञान

यदि प्रश्नकाल में पूर्वार्ध अर्थात् प्रथम होरा हो तो प्रश्नकर्ता का जन्म उत्तरायण (मकर आदि ६ राशियों में सूर्य के विचरण करते समय) और यदि प्रश्नकाल में द्वितीय होरा हो तो दक्षिणायन (कर्क आदि ६ राशियों में सूर्य के विचरण करते समय) हुआ मानना चाहिए । होरा का मान १५ अंश होता है । अर्थात् १५ अंश तक उत्तरायण और १६ अंश से ३० अंश तक दक्षिणायन समझना चाहिए ।

प्रश्न-लग्नाद् ऋतु-ज्ञानम्

2-2 ऋतुर्वाच्यो दृगाणेशे लग्न-संस्थेपि वा ग्रहे ।
अयनस्य विलोमे तु परिवर्त्य परस्परम् ॥

अस्य व्याख्या । ऋतुरिति । प्रश्न-लग्ने यो द्रेष्काणस्तस्येशो यदि शनिर्भवति लग्न-संस्थो वा शनिर्भवति तदा शिशिरे मकर-कुम्भयो-रन्यतमेर्के जन्म वक्तव्यम् । शुक्रस्य द्रेष्काणे शुक्रे लग्न-स्थे वा वसन्ते मीन-मेषयोरन्यतमेर्के जन्म वक्तव्यम् । कुज-द्रेष्काणे कुजे लग्न-स्थे वा ग्रीष्मे

वृष-मिथुनयोरन्यतमेर्के जन्म वक्तव्यम् । चन्द्रद्रेष्काणे चन्द्रे लग्न-स्थे वा वर्षायां कर्क-सिंह-स्थे सूर्ये जन्म वक्तव्यम् । बुध-द्रेष्काणे बुधे लग्न स्थे वा शरदि कन्या-तुला-स्थेर्के जन्म वक्तव्यम् । जीवे लग्न-स्थे वा हेमन्ते वृश्चिक-धनुः-स्थे रवौ जन्म वक्तव्यम् । सूर्ये वा लग्न-स्थे ग्रीष्मे वृष-मिथुनयोरन्यतमेर्के जन्म वक्तव्यम् । इति ।

प्रश्नलग्न से ऋतु का ज्ञान

प्रश्नलग्न के द्रेष्काण का स्वामी शनि हो अथवा प्रश्नलग्न में शनि बैठा हो, तो शिशिर ऋतु में अर्थात् मकर या कुम्भ राशि के सूर्य में जन्म वताना चाहिए। प्रश्नलग्न में शुक्र का द्रेष्काण हो अथवा शुक्र लग्न में स्थित हो तो वसन्त ऋतु में जन्म कहना चाहिए । प्रश्नलग्न में मंगल का द्रेष्काण हो अथवा वह लग्न में बैठा हो तो ग्रीष्म ऋतु में जन्म वताना चाहिए। इसी प्रकार, प्रश्नलग्न में चन्द्रमा का द्रेष्काण हो या चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तो वर्षा ऋतु में, लग्न में बुध का द्रेष्काण हो या बुध लग्न में हो तो शरद् ऋतु में, लग्न में गुरु का द्रेष्काण हो या गुरु लग्न में बैठा हो तो हेमन्त ऋतु में और यदि प्रश्नलग्न में सूर्य द्रेष्काण हो या सूर्य लग्न में बैठा हो तो प्रश्नकर्ता का जन्म ग्रीष्म ऋतु में वताना चाहिए ।

तत्र विशेषः—

2-3 अयनस्य विलोमे तु परिवर्त्य परस्परम् ।
शशि-ज्ञ-गुरुभिः सार्धं शुक्र-लोहित-सूर्यजाः ॥

अस्य व्याख्या । अयनस्येति । अयनस्य विलोमे विपर्यये चन्द्र-बुध-जीवैः सार्धं शुक्र-भौम-शनैश्चराः परिवर्तनीयाः । यद्युत्तरायणे ज्ञाते चन्द्रर्तुः प्रावृट्-कालः स्यात्तदा शुक्रर्तुर्वसन्त-कालो ग्राह्यः। यदि दक्षिणायने वसन्तो ज्ञातस्तदा वर्षा-कालो ग्राह्यः । अथ यदि चोत्त-रायणे बुधर्तुः शरत्-कालः समागतस्तदा भौमर्तुर्ग्रीष्मो ग्राह्यः । अथ दक्षिणायने ग्रीष्मः प्राप्तस्तदा शरद् ग्राह्यः । अथोत्तरायणे गुर्वृतु-र्हेमन्तो जातस्तदा शने ऋतुः शिशिरो ग्राह्यः । दक्षिणायने शिशिरो ज्ञातस्तदा गुरो ऋतुर्हेमन्तो ग्राह्यः । एवमयन-विपर्यये ऋतु विपर्ययो वक्तव्यः । इति ।

अयन एवं ऋतु में भेद हो तो क्या करना चाहिए ? अयन एवं ऋतु में भेद होने पर चन्द्रमा, बुध एवं गुरु को यथाक्रम शुक्र, मंगल एवं शनैश्चर के रूप में परिवर्तित कर देना चाहिए। तात्पर्य यह कि यदि उत्तरायण में चन्द्रमा की ऋतु वर्षा आती हो तो उसके स्थान पर शुक्र की वसन्त ऋतु लेनी चाहिए। यदि उत्तरायण में बुध की ऋतु शरद् आती हो तो उसके स्थान पर मंगल की ग्रीष्म ऋतु लेनी चाहिए और दक्षिणायन में ग्रीष्म ऋतु आती हो तो उसकी जगह शरद् ऋतु लेनी चाहिए। इसी प्रकार, उत्तरायण में गुरु की ऋतु हेमन्त आती हो तो उसके स्थान पर शनि की शिशिर ऋतु लेनी चाहिए, तथा दक्षिणायन में शिशिर ऋतु आती हो तो हेमन्त ऋतु लेनी चाहिए। इस तरह अयन एवं ऋतु का परिवर्तन करना चाहिए।

प्रकारान्तरेणर्तुज्ञानम्।

2-4 अयनस्य विलोमे च रवि-चार-वशेन वा।
ऋतुर्वाच्यः सुधीभिस्तु नष्ट-जातक-जन्मनः॥

अस्य व्याख्या। अयनस्येति। मकरादि-गे रवौ शिशिरादिकं वक्तव्यम्। कर्कादि-गे रवौ वर्षादिकं वक्तव्यम्। इति

ऋतुज्ञान की अन्य रीति भी प्रचलित है कि अयन एवं ऋतु में भेद होने पर सूर्य के राशिचार के अनुसार नष्ट-जातक वाले व्यक्ति के जन्म की ऋतु बतानी चाहिए।

अर्थात् अयन और ऋतु में भेद होने पर सूर्य की संक्रान्ति चार के सम्भव के आधार पर ऋतु का निर्णय करना चाहिए। इस प्रसंग में अयन को अपरिवर्तनीय मानकर तदनुसार ऋतु का निश्चय किया जाना चाहिए।

प्रश्न-लग्नात्-मास-ज्ञानम्

2-5 द्रेष्काणार्धे भवेत् पूर्वो मासो ज्ञेयो परे परः।
अनुपातात् तिथिः कल्प्या केचित् प्राहुरिनांशजा॥

2-6 पृच्छाकाले रविणा यावन्तोंशा स्फुटेन संभुक्ताः।
राशेस्तास् तिथयः स्युः शुक्लादावर्क-मासस्य॥

अस्य व्याख्या। द्रेष्काणेति। प्रश्न-लग्नस्य द्रेष्काणार्धे पञ्चमांशे यावज्ज्ञातर्तौ पूर्वो मासः अपरे द्वितीये द्रेष्काणार्धे दशमांशं यावद् द्वितीयो मासो ज्ञेयः।

अथ तत्र मासे तिथि-ज्ञानार्थमनुपातः, यथा द्रेष्काणस्य षड्-लिप्ता-शतानि ६०० तेनर्तु-ज्ञान-तदर्धेन लिप्ता शत-त्रयेण ३०० सूर्य-मास-ज्ञानम्। तत्रानुपातात् तिथिर्लिप्ता-दशकेन१ ज्ञेया। अर्क-राशि-मासः, एकोंशस्तिथिः, केचिदाचार्या इति प्राहुः। इन इति किम् इनः सूर्य स्तस्य ये अंशाः प्रश्न-काले भुक्तास्तावन्तः शुक्र-प्रतिपत्-प्रभृति-ज्ञात-मासस्य तिथयो व्यतीताः मासाच्च मासो ज्ञेयः। चन्द्र-मासेन मकर मासे ज्ञाते स एव चन्द्र-मासो ज्ञेयः। एवमन्येष्वपि मासेषु मास-कल्पना विधेया। तत्र ग्रन्थान्तरम्—

अस्य व्याख्या। पृच्छा-काल इति। पृच्छा-काले प्रश्न-समये रविणा सूर्येण स्फुटेन स्पष्टेन राशेर्यावन्तोंशा लवाः संभुक्ताः, शुक्लादावर्क-मासस्य तास्तिथयः स्युः। इति।

प्रश्नलग्न से मास का ज्ञान

प्रश्नलग्न में द्रेष्काण का पूर्वार्ध हो, ज्ञात ऋतु के प्रथम मास में और लग्न में द्रेष्काण का उत्तरार्ध हो तो ज्ञात ऋतु के द्वितीय मास में जन्म वताना चाहिए। जन्मतिथि का ज्ञान अनुपात से करना चाहिए जिसे यहां अनुपात के साथ स्पष्ट किया जा रहा है।

यथा एक द्रेष्काण में १० अंश या ६०० कलाएं होती हैं और एक द्रेष्काण में १ ऋतु या २ मास या ६० तिथियां होती हैं। अतः अनुपात किया ६००×१÷६०=१० कला। इस प्रकार द्रेष्काणकी भुक्तकला वनाकर १०-१० कलाओं से १-१ तिथि की कल्पना कर तिथि का ज्ञान करना चाहिए। कुछ आचार्यों का मत है कि तिथि का ज्ञान सूर्य के अंशों से करना चाहिए। उनका कहना है कि प्रश्नकाल में सूर्य के जितने भुक्तांश हों, शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से उतनी तिथियां भुक्त होती हैं और उससे अग्रिम तिथि जन्मतिथि होती है। इस प्रसंग में आचार्य मणित्थ का मत उल्लेखनीय है :

प्रश्नकाल में स्पष्ट सूर्य के जितने भुक्तांश हों, रवि संक्रान्ति सहित

चान्द्रमास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से उतनी गत तिथियां माननी चाहिएं।

प्रश्न-कर्तुर्गत-वर्ष-ज्ञानम्

2-7 लग्नांशका द्विरभ्यस्ताः पञ्चभिर्लभ्यते गुरुः।
वयोनुमानाद्वर्षाणि द्वादश द्वादश क्षिपेत्॥

अस्य व्याख्या। लग्नांशका इति। प्रश्न-लग्ने येंशकास्ते द्वि-गुणा-कार्याः, तत्र पञ्चभिर्विभज्य यल्लभ्यते तत्संख्य-राशौ गुरुर्जन्म-काले ज्ञातव्यः। एवं ज्ञाते वयोनुमानेन वर्षाणि वाच्यानि। यदि प्रश्न कर्ता विंशति-वर्षादर्वाग्भवति तदैकवारं द्वादश क्षिपेत्, यदि त्रिंशद्वर्षादर्वाक् तदा द्विवारं द्वादश क्षिपेत्। इत्थं वयोनुमानं ज्ञात्वा द्वादश दाद्वश क्षिपेत्।

प्रश्नकर्ता की आयु का ज्ञान

प्रश्नकालीन स्पष्टलग्न के अंशों को २ से गुणा कर ५ का भाग देने से प्राप्त भजनफल की संख्या वाली राशि में जन्मकाल में गुरु वताना चाहिए। इस प्रकार गुरु की राशि जानकर अनुमान से प्रश्नकर्ता की उम्र वतानी चाहिए। यदि प्रश्नकर्ता २० वर्ष से छोटा लगता हो तो एक वार १२ जोड़कर और यदि वह ३० वर्ष से छोटा लगता हो तो दो वार १२ जोड़कर प्रश्नकर्ता की आयु की जानकारी करनी चाहिए।

केचित्तु प्रश्न-लग्ने यो द्रेष्काणस्तत्क्रमेण गुरु-स्थितिं वदन्ति। तत्र यवनेश्वर आह—

2-8 द्रेष्काण-लग्न-क्रमशस्तु राशेर् गुर्रुविलग्नादि-त्रि-कोणगोभूत्।
समुद्भवस्तद्भवन-क्रमेण स्व (स्वा)चार-भादब्द-गतिः प्रमाण्या॥

अस्य व्याख्या। द्रेष्काणेति। अथ प्रश्नलग्ने यदि प्रथम-द्रेष्काणो भवति तदा लग्न-स्थे गुरौ जन्म वक्तव्यम्। तत्र द्वितीय-द्रेष्काणश्चेत् तदा प्रश्न-लग्नात् पञ्चम-राशौ गुरौ स्थिते जन्म वक्तव्यम्। तृतीय-द्रेष्काणश्चेत् तदा नवम-राशौ गुरौस्थिते जन्म वक्तव्यम्। इति एतच्च सामान्यमात्रं विशेषस्तु पूर्वोक्त एव ज्ञेयः। इति।

अस्योदाहरणम् । संवत् १९०८, शाके १७७३ आश्विन-शुक्ल-पूर्णिमायां भृगु-दिने प्रश्नेष्टं २।४९, रविः ५।२४।१२।३, लग्नं ६।८।३३।३६, लग्नांशाः ८, द्वि-गुणाः १६, पञ्चभिर्विभज्य लब्धं ३, शेषं १, तुर्यं (४) सदृशे, द्वादशांश-गुरौ जन्म वक्तव्यम् । अत्र तुला-लग्नं तत्तुरीय-मकर-राशौ गुरौ स्थिते जन्म वक्तव्यम् । अत्र प्रश्नकर्ता त्रिंशद्वर्षादर्वाग् अस्ति अतो द्विवारं द्वादशाक्षेपे जातानि गतवर्षाणि ३४ ।

कुछ आचार्यों ने प्रश्नलग्न के द्रेष्काण के आधार पर गुरु की स्थिति बतायी है । जैसे यवनेश्वर का मत है कि यदि प्रश्नलग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो लग्नस्थ राशि में गुरु के होने पर जन्म बताना चाहिए । यदि लग्न में द्वितीय द्रेष्काण हो तो प्रश्नलग्न में पंचम राशि में गुरु होने पर जन्म कहना चाहिए और यदि लग्न में तृतीय द्रेष्काण हो तो लग्न से नवम राशि में गुरु होने पर जन्म होता है । आयु का निर्णय करने के लिए गुरु की राशि विशेष में स्थिति जानने की यह सामान्य रीति है । विशेष रीति पहले बतायी जा चुकी है ।

अब उसका उदाहरण प्रस्तुत है । किसी प्रश्नकर्ता ने नष्ट-जातक के पुनर्निर्धारण के लिए संवत् १९०८, शक १७७३, आश्विन शुक्ला पूर्णिमा, शुक्रवार को प्रश्न किया । उस समय इष्टकाल २ घटी ४९ पल, स्पष्टसूर्य ५।२४।१२।३५ तथा स्पष्टलग्न ६।८।३३।३६ थी । अतः तात्कालिक लग्न के अंशों को द्विगुणित कर ५ का भाग दिया, ८ × २ = १६ ÷ ५, तो लब्धि ३ एवं शेष १ रहा । इस प्रकार प्रश्नलग्न से चौथी राशि में अर्थात् मकर राशि में गुरु होने पर प्रश्नकर्ता का जन्म सिद्ध हुआ । प्रश्नकर्ता की आयु ३० वर्ष के आसपास दिखायी देती थी, इसलिए मकर राशि की संख्या १० में दो बार १२ जोड़ने पर (१० + १२ + १२ =) ३४ हुआ । अतः प्रश्नकर्ता की आयु ३४ वर्ष की बतानी चाहिए ।)

अथ द्वितीय-मते प्रश्नलग्ने प्रथम-द्रेष्काणः । अथ प्रश्न-लग्ने आद्या होरा तेनोत्तरायणे जन्म ज्ञातं । अथ लग्ने भृगु-द्रेष्काणस्तेन वसन्तर्तुर्ज्ञातः, चैत्र-वैशाखयोरन्यतमे जन्म वक्तव्यम् । अथ पञ्चमांशादुपरि लग्ने द्रेष्काणोस्त्यतो ज्ञातं वैशाख-मासे मेषार्क-गते सूर्ये प्रश्नकर्तुर्जन्म जातम् । तत्र तिथिरनुपातात् कल्पनीया । अथ लग्नांशाः ८।३३।३६

पञ्चभक्ताः शेषं ३।३३।३६ षष्टि-गुणं २१३।३६ त्रिशद्भक्ते लब्धं ७, शेषं ३।३६। एवं कृते चैत्र-शुक्ल-प्रतिपदमारभ्य सप्तमीगताष्टम्यां प्रश्नकर्तुर्जन्म ज्ञातम्। संवत् १८७५ चैत्र-शुक्लाष्टम्यां भौमवासरे मेषार्कात् ४ चन्द्र-मानेन सूर्यांशतस्तिथिर्ज्ञेया।

दूसरे मत के अनुसार विचार करते हैं। प्रश्न लग्न में प्रथम द्रेष्काण है; अतः प्रश्नलग्न में प्रथम होरा है, इसलिए उत्तरायण में जन्म कहना चाहिए। प्रश्नलग्न में शुक्र का द्रेष्काण है, अतः वसन्त ऋतु में जन्म हुआ। यहां द्रेष्काण में उत्तरार्ध होने के कारण वैशाख मास में जन्म हुआ। लग्न के अंशों ८।३३।३६ में से ५ घटाकर शेष ३।३३।३६ को ६० से गुणा कर ३० का भाग देने से (२१३।३६÷३०) लब्धि ७ तथा शेष ३।३६ रहा। इस प्रकार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से प्रारम्भ कर सप्तमी व्यतीत होने पर अष्टमी में जन्म वताना चाहिए। इस रीति से संवत् १९७५, चैत्र शुक्ला अष्टमी, मंगलवार को वैशाख मास की ४ तारीख को प्रश्नकर्ता का जन्म सिद्ध हुआ।

दिन-रात्रि-वेला-ज्ञानम्

तद्दिने सूर्योदयादिष्ट-ज्ञानार्थमुपाय उच्यते।

2-9 **द्यु-रात्रि-नामधेयेषु विलोमे जन्म-सम्भवः।**
लग्न-भागैः क्रमेणैव वेला-मृग्यानुपातः॥

अस्य व्याख्या। द्यु-रात्रीति। मेष-वृष-मिथुन-कर्क-धनु-र्मकरा निशा-वलाः। सिंह-कन्या तुला-वृश्चिक-कुम्भाश्च दिवा-बलाः। तत्र यदि प्रश्न-काले दिन-वलं लग्नं तदा रात्रौ जन्म, यदि रात्रि-वलं लग्नं तदा दिवसे जन्म वक्तव्यम्। लग्नस्य भागैः क्रमेण वेला विचार्यानुपातेनेति। अत्र यस्मिन् दिने जन्म तद्दिनीय आदित्योपि ज्ञातः। दिवा जन्म चेत्तदा दित्याद्दिन-मानं साध्यम्। रात्रौ चेद्रात्रि-मानं साध्यम्। तत्र प्रश्न-लग्नस्य यावन्तश्चषका पलानि चेति भुक्तास्तैरनुपातः कार्यः। यदि पुरुषस्य दिवा जन्म तदा दिन-प्रमाणेन चषका गुणनीया, रात्रौ चेद्रात्रि-प्रमाणेन च। अथ प्रश्न लग्नस्य त्रिशद्भिर्भागमपहृत्यावाप्तं वेला तस्मिन् काले दिनस्य रात्रेर्वा जन्म वक्तव्यम्।

अत्रोदाहृतिः। इह प्रश्न-लग्नं ६।८।३३।३६ दिवा-वलं, तेन रात्रौ जन्मेति वक्तव्यम्। दिन-मानं ३२, रात्रि-मानं २८, प्रश्न-लग्न-भागाः

८।३३।३६ रात्रि-मानेन २८ गुणिताः २३६।४०।४८, त्रिंशद्भक्ते लब्धं ७।५९ रात्रि-गतेष्टं जन्म-काले तच्च वृश्चिक-लग्ने जन्मेति ।

दिन या रात्रि का एवं इष्टकाल का ज्ञान

मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु एवं मकर राशियां रात्रिबली तथा सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक एवं कुम्भ राशियां दिवाबली होती हैं। यदि प्रश्न के समय दिवाबली राशि लग्न में हो तो रात्रि में और यदि रात्रिबली राशि लग्न में हो तो दिन में जन्म होता है।

लग्न के अंशों से अनुपात के द्वारा इस काल का ज्ञान किया जाता है। जिस दिन जन्म हो उस दिन स्पष्ट सूर्य बनाकर दिनमान एवं रात्रिमान बना लेना चाहिए। फिर यदि दिन में जन्म हो तो दिनमान से और यदि रात्रि में जन्म हो तो रात्रिमान से लग्न के अंशों को गुणा कर ३० का भाग देने से लब्धि दिनगत या रात्रिगत इष्टकाल होता है।

इसका एक उदाहरण लीजिए। प्रश्नलग्न ६।८।३३।३८ है। यहां तुला लग्न दिवाबली है, अतः रात्रि में जन्म सिद्ध हुआ। उस दिन का दिनमान ३२ घटी तथा रात्रिमान २८ घटी था। अतः प्रश्नलग्न के अंशों ८।३३।३६ को २८ से गुणाकर ३० का भाग देने से (८।३३।३६ ×२८÷३०) लब्धि होगी ७।५९ और वही रात्रिगत इष्टकाल हुआ।

जन्म-राशि-ज्ञानम्

2-10 लग्न-त्रि-कोण-राशीनां यो बली जन्म-भं वदेत्।
शीर्षादि संस्पृशन् प्रष्टा प्रच्छेत् तं राशिमादिशेत् ॥

प्रकारान्तरेण राशि-ज्ञानम्

2-11 यावद् भ-तः शशी लग्नाच् चन्द्रात् तावति जन्म-भम् ।
मीनोदये वदेन्मीनं लग्नांश-सदृशोदयम् ॥

अस्य व्याख्या। लग्नेति। प्रश्न-लग्नात् त्रिकोणयोर्नवम-पञ्चमयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान् स जन्म-भं, तत्र राशौ गते चन्द्रे जन्म वक्तव्यम्।

अथवा यमेव शीर्षादिकमङ्गं संस्पृशति प्रष्टा तस्याङ्गस्य या राशि स्तं राशिमादिशेत्, तद्राशि-स्थे चन्द्रे जात इति वक्तव्यं, एतदुक्तं भवति।

शीर्षे संस्पृष्टे मेष-राशिं वदे, मुखे वृष-राशिम्, उरसि स्पृष्टे मिथुनं, हृदये स्पृष्टे कर्कटम् उदरे सिंह, कटिं स्पृशतः कन्यां, नाभि-गुदयोरन्त-स्थावस्ति स्पृशतः तुलां, लिङ्गे स्पृष्टे वृश्चिकम्, ऊरु-युगले धनुः, जानु-युगले मकरं, जंघा-युगले कुम्भम्, अंघ्रि-द्वये स्पृष्टे मीनमादिशेत्। इत्थमङ्ग-स्पर्शनं चन्द्र-राशिं वदेदिति।

अस्य व्याख्या। यावदिति। प्रश्न-लग्नाच् चन्द्रमा यावति राशौ व्यवस्थितः तस्माद्यस्तावतिथो राशिस्तत्रस्थे चन्द्रमसि जात इति वक्तव्यम्। अथ मीन-राशौ गते लग्ने तदा मीन-राशि-गते-चन्द्रमसि जन्म वक्तव्यम्।

जन्म राशि का ज्ञान

प्रश्नलग्न से पंचम एवं नवम स्थान में जो राशियां हों, उनमें से वलवान् राशि ही मनुष्य की वही जन्मराशि होती है। अथवा प्रश्नकाल में प्रश्नकर्ता की जन्म राशि होती है। उदाहरणार्थ प्रश्नकाल में प्रश्न-कर्ता सिर का स्पर्श करे तो मेष, मुख का स्पर्श करे तो वृष, वक्षस्थल का स्पर्श करे तो मिथुन, हृदय का स्पर्श करे तो कर्क, उदर का स्पर्श करे तो सिंह, कमर का स्पर्श करे तो कन्या, बस्ति का स्पर्श करे तो तुला, गुप्तांग का स्पर्श करे तो वृश्चिक, उरुओं का स्पर्श करे तो धनु, जानुओं का स्पर्श करे तो मकर, जंघाओं का स्पर्श करे तो कुम्भ तथा पैरों का स्पर्श करे तो उसकी जन्मराशि मीन होती है। इस प्रकार अंग-स्पर्श से जन्म राशि वताई जा सकती है।

जन्मराशि जानने की एक अन्य रीति भी है। प्रश्नलग्न से जितनी संख्या की राशि में चन्द्रमा हो तो उस चन्द्रमा से उतनी संख्या की अगली राशि को जन्मराशि कहना चाहिए। किन्तु यदि प्रश्नलग्न में मीन राशि हो तो प्रश्नकर्ता की जन्मराशि मीन होती है।

अथ लग्न-ज्ञानार्थमाह

प्रश्न-लग्ने यो नवांशकोस्ति तत्तुल्यमुदयं लग्नं यस्य राशेर्नवांशक-राशिस्तस्यैव राशेर्जन्म-लग्नमित्यर्थः। उक्तं च।

2-12 प्रश्न-लग्न-नवांशस्य यो राशिः संज्ञया समः।
तस्मिन् लग्न-गते राशौ वक्तव्यं जन्म पृच्छतः॥

अस्य व्याख्या । प्रश्नेति प्रश्न-लग्न-नवांशस्य पृच्छोदय-नव-भागस्य यो राशिः यद्भ संज्ञया संज्ञातः समः समानस्तस्मिन् राशौ लग्न गते उदयोपगते पृच्छतः प्रष्टुर्जन्म वक्तव्यम् । यथात्र तुला-लग्ने तृतीयं नवांशकं धनुराशि-नवांशकं तेन धनुर्लग्ने जन्म वाच्यम् ।

जन्मलग्न का ज्ञान

प्रश्नलग्न में जिस राशि का नवांश हो, वही राशि उसका जन्मलग्न होती है । अन्य आचार्यों ने भी जन्मलग्न जानने की यही रीति बतायी है ।

प्रश्नलग्न में जिस राशि का नवांश हो, उसी राशि के लग्न में होने पर प्रश्नकर्ता का जन्म होता है । उदाहरणार्थ यहां प्रश्नलग्न ६।८।३३।३६ में तृतीय नवांश है । तुला राशि में तृतीय नवांश धनु का होता है । अतः इस उदाहरण में प्रश्नकर्ता का जन्म धनुलग्न में बताना चाहिए ।

प्रकारान्तरेण जन्म लग्न ज्ञानम्

2-13 **लग्नाद् भानुर्दृगाणे च यावत्यर्काच्च तावति ।**
विलग्नं कथयेत् प्राज्ञ इति शास्त्रस्य निश्चयः ॥

2-14 **यावत्संख्ये गते लग्नाद् द्रेष्काणे दिनकृत्ततः ।**
तावत्संख्ये कृते राशौ प्रष्टुर्जन्म विनिर्दिशेत् ।

अस्य व्याख्या । लग्नादिति । लग्न-द्रेष्काणमारभ्य यावति द्रेष्काणे भानू रविर्व्यवस्थितः ततो लग्नादारभ्य तावतिथे राशौ लग्न-गते प्रश्न-कर्तुर्जन्म प्राज्ञः कथयेद्, द्वादशाधिके द्वादशापास्य संख्या-निर्देश इति शास्त्रस्य निश्चयः, शास्त्र-द्वारेणैवोच्यन्ते न तु स्वमानसीय इत्यर्थः । तथा च ।

अस्य व्याख्या । यावदिति । व्याख्या तु प्राग्वद् बोध्या । अत्रोदाहरणम् । यथा लग्नं ६।८।३३।३६, रविः ५।२४।१२।३५ । अत्र लग्न-प्रथम-द्रेष्काणमारभ्य पञ्चत्रिंशत्तमे (३५) द्रेष्काणे भानुर्वर्तते, द्वादशापास्य शेषं ११ तुलातो गणनीयं सिंह-लग्नं जातमिति ।

जन्मलग्न जानने की एक रीति और भी है। प्रश्नलग्न के द्रेष्काण से जितने संख्या के द्रेष्काण में सूर्य हो, लग्न से उतनी संख्या की राशि में प्रश्नकर्ता का जन्मलग्न कहना चाहिए। यदि यहां संख्या बारह से अधिक हो तो १२ का भाग देना चाहिए, यह शास्त्रसम्मत पक्ष है। सूर्य प्रश्नलग्न के द्रेष्काण से जितने संख्या के द्रेष्काण में हो, प्रश्नलग्न से उतनी संख्या की राशि को प्रश्नकर्ता का जन्मलग्न मानना चाहिए। इसका उदाहरण लीजिए।

प्रश्नलग्न ६।८।३३।३६ एवं स्पष्ट ५।२४।१२।३५ है। इस उदाहरण में लग्न के द्रेष्काण से सूर्य ३५ वें द्रेष्काण में है। अतः ३५ में १२ का भाग देने से ११ शेष बचा। इस प्रकार तुला से ११वीं राशि सिंह को प्रश्नकर्ता की जन्मलग्न मानना चाहिए।

अथापर-लनग-ज्ञानम्

2-15 लग्न-गे वीर्य गे राशौ छायाङ्गुल-हते हृते।
रविभिर्जन्म शिष्टे हि कथयेदविशङ्कितः॥

अस्य व्याख्या। लग्न-ग इति। प्रश्न-लग्ने यो ग्रहो व्यवस्थितस्तं तात्कालिकं कृत्वा लिप्तापिण्डीकार्यं, वीर्यवति ग्रहे वा। अथ वहवो लग्न-गताः सन्ति तदा तेषां यो वलवान् तं तात्कालिकं लिप्तापिण्डी-कार्यं ततो द्वादशांगुल-शंकुच्छायांगुलैः तात्कालिकं लिप्ता-पिण्डीकृतं गुणयेद् द्वादशभिर्विभज्य शिष्टं मेषमारभ्य लग्नं जन्म-काले ज्ञातव्यम्।

जन्मलग्न जानने की एक अन्य रीति भी है। प्रश्नलग्न में जो ग्रह हो, उसको स्पष्ट कर उसकी कलाएं बनानी चाहिएं। यदि लग्न में अनेक ग्रह हों तो उनमें से बलवान् ग्रह को स्पष्ट कर उसकी कलाएं बनानी चाहिएं। फिर द्वादशांगुल शंकु की छाया नापकर उसके अंगुलों की संख्या से उक्त कलाओं की संख्या को गुणाकर १२ का भाग देना चाहिए। इस प्रकार एकादि संख्या के शेष रहने पर मेषादि राशि प्रश्नकर्ता की जन्मलग्न होती है।

प्रकारान्तरेण जन्म-लग्न-ज्ञानम् ।

2-16 तिष्ठतः शयन-स्थस्य निविष्टस्योत्थितस्य च ।
लग्नादि-केन्द्र-वेश्मादि वदेज्जन्म-विधौ क्रमात् ।।

2-17 उत्तिष्ठतो विलग्नात् प्रष्टुः सुप्तस्य बन्धु-लग्नाच्च ।
उपविष्टस्यास्त-लग्नाद् व्रजतो मेषूरण-स्थानात् ।।

अस्य व्याख्या । तिष्ठत इति । तिष्ठतः शयनादुत्थितस्य प्रश्न-लग्नमेव जन्म-लग्नं वदेत् अथशयन-स्थस्य शय्यायां पतितस्य प्रश्न-कर्तुर्लग्नाच्चतुर्थ-राशिर्जन्म-लग्नम् । अथ निविष्टस्यासीनस्य प्रश्न-लग्नात् सप्तम-राशिर्जन्म-लग्नं वक्तव्यम् । उत्थितस्य व्रजतः प्रश्न-कर्तुः प्रश्नलग्नाद् दशम-राशिर्लग्नं जन्म-कालिकं वक्तव्यमिति । तथोक्तम् । अस्य व्याख्या । उत्तिष्ठत इति । अस्य व्याख्या तु पूर्ववत् सुगमा इति ।

जन्मलग्न जानने की एक और विधि वताई गई है । यदि प्रश्नकर्ता सोने से उठकर या खड़े-खड़े प्रश्न करे तो प्रश्नलग्न को ही जन्मलग्न मानना चाहिए । यदि प्रश्नकर्ता शय्या पर लेटे हुए या कहीं भी सोते हुए प्रश्न करे तो प्रश्नलग्न से चतुर्थ राशि जन्मलग्न होती है । यदि वह बैठे हुए प्रश्न करे तो प्रश्नलग्न से सप्तम राशि और यदि वह उठकर चलते-चलते प्रश्न करे तो प्रश्नलग्न से दशम राशि जन्मलग्न होती है ।

अन्य ग्रंथों में भी इसी रीति से जन्मलग्न का निर्धारण किया गया है । खड़े-खड़े प्रश्न करने पर प्रश्नलग्न की राशि, लेटे-लेटे पूछने पर प्रश्नलग्न से चतुर्थ राशि, वैठे हुए प्रश्न करने पर प्रश्नलग्न से सप्तम राशि तथा चलते फिरते प्रश्न करने पर प्रश्नलग्न से दशम राशि को जमलग्न मानना चाहिए ।

अथेदानीं नक्षत्र-ज्ञानम्

2-18 संस्कार-नाममात्रा द्विगुणाच्छायाङ्गुलैः समायुक्ता ।
त्रि-नवक-भक्त-शेषाच्छेषं नक्षत्रं तद् धनिष्ठादि ।।

अस्य व्याख्या । संस्कारेति । पुरुषस्य यन्नाम-संस्कारेण कृतमस्य मात्राः हल्, स्वर-रहितः ककारादि-वर्णोर्ध-मात्रिको; ह्रस्वः अ-इ-उ-

ऋ-लृ-युक्त-ककरादि-वर्ण एक-मात्रिको; दीर्घश्च आ-ई-ऊ-ॠ-ॡ-ए ऐ-ओ-औ युक्त-ककारादि-वर्णो द्वि-मात्रिकः; ह्रस्वोपि संयोग-परः, सविसर्गः, सानुस्वारश्च द्वि-मात्रिकः; इत्यनया रीत्या मात्राः संगृह्य द्विगुणीकार्याः।

तात्कालिक-द्वादशाङ्गुल-शङ्कुच्छायाङ्गुलै संयुक्ताः सप्तविंशति-भक्त-शिष्टं धनिष्ठादि-नक्षत्रं जन्म-कालिकं वक्तव्यम्।

जन्मनक्षत्र का ज्ञान

नामकरण संस्कार के समय मनुष्य का जो नाम रखा गया हो उस नाम के स्वर-वर्णों की मात्राओं को जोड़ना चाहिए। स्वरों में ह्रस्व स्वरों की एक १-१ मात्रा तथा दीर्घ स्वरों की २-२ मात्राएं होती हैं। अ, इ, उ, ऋ एवं लृ को ह्रस्व स्वर तथा आ, ई, ऊ, ॠ, ॡ, ए, ऐ, ओ एवं औ को दीर्घ स्वर कहते हैं। जिस आदि वर्ण में ह्रस्व स्वर हो उसकी १ मात्रा, जिस वर्ण में दीर्घस्वर हो उसकी २ मात्राएं तथा जिस वर्ण में स्वर न हो उसकी आधी मात्रा लेनी चाहिए। संयुक्त अक्षर से पूर्व आये ह्रस्ववर्ण की भी दो मात्राएं मानी जाएं। अनुस्वार या विसर्ग सहित वर्ण की भी सदैव दो मात्राएं ही मानी जाती हैं।

इस प्रकार नाम के स्वरवर्णों की मात्राओं को जोड़कर द्वादशांगुल शंकु के छायांगुलों को उसमें जोड़ना चाहिए। फिर २७ का भाग देने से एक आदि संख्या शेष होने पर उसीके क्रमांक से धनिष्ठा आदि नक्षत्र को प्रश्नकर्ता का जन्मनक्षत्र मानना चाहिए। यह विषय युक्ति प्रकरण में उदारहण सहित समझाया जा चुका है।

प्रकारान्तरेण नक्षत्र-ज्ञानमाह

2-19 द्वि-त्रि-चतुर्दश-द्वादश-तिथि-सप्तत्रिगुणा नवाष्ट चैन्द्राद्याः।
पञ्चदश-घ्नास्तद्दिङ्-मुखान्वितं भं धनिष्ठादि ॥

अस्य व्याख्या। द्वीति। द्वौ, त्रयश्, चतुर्दश, द्वादश, तिथयः पञ्चदश, सप्तत्रिगुणाः (२१), नव, अष्टौ, चेत्येतेङ्काः पूर्वादि-क्रमेण लेखनीयाः यद्दिङ्-मुखः प्रष्टा पृच्छति तद्दिगङ्कं गृहीत्वा सोङ्कः पञ्चदश-गुणः कार्यः। तत्र यस्मिन् प्रदेशे यावन्तः पुरुषास्तद्दिङ्-मुखाः स्थितास्त-

त्संख्यमङ्कं क्षिपेद्, एवं कृते यद्भवति तस्य सप्तविंशत्या भागमपहृत्य यदवशिष्टं तत्समं धनिष्ठादि नक्षत्रं ज्ञातव्यम् ।

जन्मनक्षत्र ज्ञान की एक अन्य रीति है कि पूर्व आदि आठों दिशाओं में यथाक्रम २, ३, १४, १२, १५, २१, ६ एवं ८ अंक लिख देना चाहिए। प्रश्नकर्ता जिस दिशा की ओर मुंह करके प्रश्न करे, उस दिशा के अंक को १५ से गुणा कर देना चाहिए। यदि प्रश्न के समय प्रश्नकर्ता के अलावा कुछ और लोग भी उसी दिशा की ओर अभिमुख हों तो उनकी संख्या उक्त गुणनफल में जोड़ देनी चाहिए। और फिर २७ का भाग देने से शेष वची एक आदि संख्या के क्रमांक के धनिष्ठा आदि नक्षत्र को प्रश्नकर्ता का जन्मनक्षत्र मानना चाहिए।

पिछले प्रकरण में प्रश्नकर्ता के सामने वाली दिशा में प्रश्नकर्ता की ओर मुख किए मनुष्यों का ग्रहण था। यहां पर थोड़ा भेद है, इन्होंने प्रश्नकर्ता के साथ या पास बैठे उन मनुष्यों का ग्रहण किया है, जो उसी दिशा की ओर मुख किए हुए हों जिधर प्रश्नकर्त्ता अभिमुख है।

अथाधुना वयोमाने वर्ष-भ्रान्तौ सत्यामङ्ग-स्पर्शनेन वर्ष-ज्ञानम् ।

2-20 स-गुल्फ-पाद-संस्पर्शे प्रथमं द्वादश क्षिपेत् ।
स-जानु-वक्त्र-जंघे च स्पर्शतस्तु द्वितीयकः ।।

2-21 मेढ्रोरु-मुष्के त्रितयं, कटिं नाभिं चतुर्थकम् ।।

2-22 उदरं पञ्चमं, षष्ठं हृदयं च स्तनान्वितम् ।
सप्तमं सक्थिनी, ह्यत्र चाष्टमं ज्ञेयमोष्ठकम् ।।

2-23 स-भ्रू-नयने नवमं, ललाटमं दशमं शिरः ।
द्वादश द्वादश क्षिप्त्वा ज्ञेयमायुर्बुधैस्तदा ।।

एषां व्याख्या। सगुल्फेती, मेढ्रोविति, सप्तममिति, द्वादशेति च। गुल्फादीनां पद्यानां व्याख्या सुगमा। इति नष्ट-जातक-निर्णये प्रथम-प्रकारः।

प्रश्नकर्ता की आयु या जन्मवर्ष के विषय में भ्रान्ति होने पर वर्षज्ञान कैसे प्राप्त किया जाए? प्रश्नकर्ता की आयु या जन्मवर्ष के बारे में

पूर्वोक्त रीति से विचार करते समय किसी प्रकार की भ्रान्ति हो तो प्रश्नकर्ता के द्वारा प्रश्न के समय किए गए अंगस्पर्श को देखकर अग्र-लिखित रीति से निश्चित वर्ष जोड़कर उसकी आयु का निर्धारण करना चाहिए।

यदि प्रश्तकर्ता टखने के साथ पैर का स्पर्श करता हो तो १२ जोड़ना चाहिए; जानु एवं मुख के साथ जंघा का स्पर्श कर रहा हो तो २४; लिंग, ऊरु एवं अण्डकोषों का स्पर्श कर रहा हो तो ३६; कमर या नाभि का स्पर्श कर रहा हो तो ४८; पेट का स्पर्श कर रहा हो तो ६०; स्तन एवं हृदय का स्पर्श कर रहा हो तो ७२; गर्दन का स्पर्श कर रहा हो तो ८४; ओठों का स्पर्श कर रहा हो तो ९६; भौहों एवं आंखों का स्पर्श कर रहा हो तो १०८; और माथे या सिर का स्पर्श कर रहा हो तो १२० जोड़ना चाहिए।

अथ साम्प्रतं प्रकारान्तरेण नष्टजातकमाह।

2-24 गो-सिंहौ दशभिर्गुण्यान्-मिथुनाली तु ह्यष्टभिः।
सप्तभिस्तुल-मेषौ च स्त्री-मृगौ पञ्चभिस्तथा॥

2-25 शेषाः स्वसंख्या-गुणिता लिप्तापिण्डीकृता ग्रहाः।

अथेदानीं ग्रह गुणकारमाह

2-26 लिप्तापिण्डीकृतं लग्नं यदि तत्र ग्रहो भवेत्।
गुणकारेण तद्गुण्याद् बहवश्चेद् बहुभिर्गुणै॥

2-27 गुणयेद् दशभिर्जीवे मङ्गले ह्यष्टभिस्तथा।
सप्तभिर्भृगुपुत्रे च पञ्चभिर्बुधमात्रके॥

2-28 शेषास्तु बुधवज्ज्ञेया गुणकार-विधौ क्रमात्॥

अस्य व्याख्या। गोसिंहाविति, शेषा इति च। अथ नष्ट-जन्म-ज्ञानार्थं प्रश्नकाले यल्लग्नं तल्लिप्तापिण्डीकृतं स्व-गुणकारेण गुणयेत्, प्रश्न-काले वृष-लग्नं चेत् तदा दशभिर्गुणयेत्, सिंहलनमपि दशभिर्गुणयेत्, मिथुन-वृश्चिकौ अष्टभिर्गुणयेत्, तुला-मेषौ सप्तभिर्गुणयेत्, कन्या-मकरौ पञ्चभिर्गुणयेच् छेषाः स्व-संख्या-गुणाः। कर्कं लग्नं चतुर्भिर्,

धनुर्लग्नं नवभिः, कुम्भ-लग्नमेकादशभिर्, मीन-लग्नं द्वादशभिर्गुणयेत्। एवं प्रश्न-लग्नं गुणकारेण गुणयेल्, लग्ने यदि ग्रहो भवति तदा ग्रह-गुणकारेणाप्यवश्यं गुणयेत् इति।

अनयोर्व्याख्या। लिप्तेति, गुणयेदिति, शेषा इति च। प्रश्न-लग्ने यदि ग्रहो भवति तदा लिप्तापिण्डीकृतं लग्नं ग्रह-गुणकारेण गुणयेत्। वह-वश्चेल्लग्ने ग्रहास्तदा सर्वेषां ग्रहाणां गुणकारेण गुणयेत्। जीवे लग्न-गते लिप्तापिण्डीकृतं लग्नं स्व-गुणाकार-गुणितं पुनर्दशभिर्गुणयेत्। भौमेष्टभिः, शुक्रे सप्तभिर्, बुधे पञ्चभिश्, शेषा रवि-चन्द्र-सौराः पञ्चभिर्गुणनीयाः। इत्थं लिप्तापिण्डीकृत स्व-गुणाकार-गुणं ग्रह-गुणाकारेण गुणयित्वा एकान्ते स्थापयेत्। इति।

अन्य रीति से नष्ट-जातक पर विचार करते हैं। नष्ट-जातक के पुनर्निर्धारण के लिए प्रश्नकालीन स्पष्टलग्न की कलाएं वनाकर, उनको लग्न की राशि के गुणांक से गुणा करना चाहिए।

प्रश्नलग्न में वृष या सिंह राशि हो तो १० से, मिथुन या वृश्चिक राशि हो तो ८ से, मेष या तुला राशि हो तो ५ से तथा शेष कोई राशि हो तो उसकी संख्या से कलाओं को गुणा करना चाहिए। शेष राशियों में कर्क की संख्या ४, धनु की ९, कुम्भ की ११ तथा मीन की १२ होती है। यदि लग्न में कोई ग्रह हो तो उस ग्रह के गुणांक से भी उक्त गुणनफल को ध्यानपूर्वक गुणा करनी चाहिए।

यदि प्रश्नलग्न में कोई ग्रह हो तो उस ग्रह के गुणांक से और यदि लग्न में अनेक ग्रह हों तो उन सव ग्रहों के गुणांक से उक्त (लग्न की कला एवं राशि के गुणांक के) गुणनफल को तो अवश्य गुणा करना चाहिए। लग्न में गुरु हो तो १० से, मंगल हो तो ८ से, शुक्र हो तो ७ से तथा बुध हो तो ५ तथा अन्य कोई ग्रह होने पर भी ५ से गुणा करना चाहिए। इस प्रकार प्रश्नलग्न की कलाओं को राशि के गुणांक तथा प्रश्नलग्न में स्थित ग्रहों के गुणांक से गुणा कर एक जगह सुरक्षित लिख देना चाहिये।

स्फुट-पिण्ड-साधनमाह ।

2-29 स्थाने चतुष्टये स्थाप्यः स राशिर्गुणकैर्हतः ।
प्रथमं दशभिर्गुण्यं द्वितीयं त्वष्टभिस्तथा ।।

2-30 तृतीयं पञ्चभिर्हन्याच् चतुर्थं पञ्चभिः पुनः ।
पुनर्दृगाणमाश्रित्य नवक-दान-विशोधनम् ।।

2-31 कार्यं पुनर्भवेद्राशिः कर्म-योग्यो विनिश्चितम् ।।

अनयोर्व्याख्या । स्थान इति, तृतीयमिति, कार्यमिति, च । पूर्वमेकान्ते स्थापितो राशिः सः स्थान-चतुष्टये स्थाप्यः, प्रथमं राशिं दशभिर्गुणयेद् द्वितीयमष्टभिस्, तृतीयं सप्तभिश्, चतुर्थं पञ्चभिरिति । पुनर्दृगाण-माश्रित्य नवक-दान-विशोधनं कार्यम् । प्रश्न-लग्ने यदि प्रथम-द्रेष्काणो भवति तदा नव दानं कार्यं, द्वितीये नवक-विशोधनं कार्यं तृतीये न किंचित् कार्यम् ।

स्पष्टपिण्ड के साधन की विधि अग्रलिखित है । उस एक स्थान पर लिखी हुई पूर्वोक्त राशि को चार स्थानों पर लिखकर प्रथम को १० से, द्वितीय को ८ से, तृतीय को ७ से तथा चतुर्थ को ५ से गुणा करना चाहिए । फिर द्रेष्काण के अनुसार उस गुणनफल में ९ जोड़ना या घटाना चाहिए । यथा, प्रश्नलग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो ९ जोड़ना चाहिए । द्वितीय द्रेष्काण हो तो गुणनफल में कुछ भी जोड़ना या घटाना नहीं चाहिए । और प्रश्नलग्न में तृतीय द्रेष्काण हो तो उक्त गुणनफल में से ९ घटाना चाहिए ।

इस प्रसंग में एक प्रश्न विशेष रूप से विचारणीय है । इस श्लोक की संस्कृत टीका में टीकाकार ने "पुनर्दृकाणमाश्रित्य नवक-दान-विशोधनं कार्यम्" का अर्थ वताया है कि यदि प्रश्नलग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो ९ जोड़ना चाहिए । द्वितीय द्रेष्काण हो तो ९ घटाना चाहिए और तृतीय द्रेष्काण हो तो कुछ भी जोड़ना या घटाना नहीं चाहिए । किन्तु संस्कृत टीकाकार का उक्त अर्थ जातक ग्रन्थों की परम्परा से हटकर है । हमारी राय में इसका अर्थ होना चाहिए कि यदि प्रश्नकाल में प्रथम द्रेष्काण हो तो उक्त गुणनफल में ९ जोड़ना चाहिए, द्वितीय

द्रेष्काण हो तो कुछ भी जोड़ना या घटाना नहीं चाहिए और तृतीय द्रेष्काण हो तो ९ घटाना चाहिए।

जातकग्रन्थों के प्रसिद्ध टीकाकार आचार्य भट्टोत्पल एवं जातकाभरण के प्रणेता आचार्य ढुन्ढिराज ने भी नष्ट-जातक के निर्णयार्थ पिण्ड के स्पष्टीकरण में इसी प्रकार ९ जोड़ा या घटाया है, यथा "यदि प्रश्न-लग्ने प्रथमो द्रेष्काणो भवति तदा नव देयाः। द्वितीये न देयाः, नापि शोध्या। तृतीये नव शोध्याः।" (बृहज्जातक, नष्ट-जातकाध्याय, श्लो० ११, भट्टौत्पल टीका); "···त्वाद्ये दृकाणे नव-युग द्वितीये। यथा स्थितोयं नव-वर्जितोन्त्ये···।" (जातकाभरण, नष्ट-जातकाध्याय, श्लोक ६)।

अथाधुना वर्षाद्यानयनमाह

2-32 **विज्ञेया दशकेष्वब्दा ऋतुमासास्तथैव च।**
अष्टकेषु तु मासार्धं तिथयश्च तथा स्मृताः॥

2-33 **दिवा-रात्रि-प्रसूतिं च नक्षत्रानयनं पुनः।**
सप्तकेषु तु वर्गेषु नित्यमेवोपलक्षयेत्॥

2-34 **वेलामथ विलग्नं च होरामंशकमेव च।**
पञ्चकेष्वेव जानीयान् नष्टजातक-सिद्धये॥

2-35 **स्व-विकल्प-विभागेन वर्षादीनि वदेद् बुधः॥**

एषां व्याख्या। विज्ञेया इति, दिवा-रात्रीति, वेलामिति, स्वविकल्पेति च। स्व-विकल्पान्यब्दा (१२०) ऋतवो (६) मासौ (२), एवं सर्वत्र। दशकेष्विति। दश-गुणितेषु विंशत्यधिक-शतेन (१२०) भागमपहृत्य योऽङ्कोवशिष्टस्तत्समानि गत वर्षाणि। ऋतु-ज्ञानार्थं तत्रैव षड्-भक्ते योऽङ्कोवशिष्टस्तत्समः शिशिरादि ऋतुः। एकावशिष्टे शिशिरो, द्वितीये वसन्तस्, तृतीये ग्रीष्मश्, चतुर्थे वर्षा, पञ्चमे शरत्, षष्ठे हेमन्त इति क्रमुर्तु-ज्ञाने, मास-ज्ञानार्थं तत्रैव द्वाभ्यां भागमपहृत्य यद्येकोवशिष्टस्तदा प्रथमो मासश्, शून्योवशिष्टश्चेत् तदा द्वितीयो मासः।

वर्ष आदि का ज्ञान

पूर्वोक्त चार स्थानों में प्रथम स्थान पर लिखी दशगुणित राशि में १२० का भाग देने से शेष प्रश्नकर्ता की आयु के व्यतीत वर्ष होते हैं। उसी राशि में ६ का भाग देने पर एक शेष वचे तो शिशिर में, २ शेष वचे तो वसन्त में, ३ शेष वचे तो ग्रीष्म में, ४ शेष वचे तो वर्षा में, ५ शेष वचे तो शरद् में और शून्य शेष रहे तो हेमन्त में जन्म वताना चाहिए। तथा उक्त राशि में दो का भाग देने पर १ शेष वचे तो ऋतु के प्रथम मास में और शून्य शेष वचे तो ऋतु के द्वितीय मास में जन्म कहना चाहिए। इस प्रकार प्रथम स्थान पर लिखी दशगुणित राशि में पूर्वोक्त संख्याओं का भाग देने पर जो शेष वचे उस संख्या के बराबर क्रमांक वाले वर्ष, ऋतु एवं मास होते हैं।

अष्टकेष्विति। मासार्धं पक्षः। अथाष्ट-गुणित-द्वितीय-राशौ द्वाभ्यां भागमपहृत्य यद्येकोवशिष्टस्तदा शुक्ल-पक्षः, न किञ्चदवशिष्टस्तदा कृष्णः, तत्रैव पञ्चदश-भक्ते यदवशिष्टस्तदङ्क-तुल्या तिथिर्ज्ञेया। योसौ सप्त-गुणितो राशिस्तत्र द्वाभ्यां भागमपहृत्य यद्येकोवशिष्यते तदा दिने जन्म। न किञ्चिदवशिष्यते तदा रात्रौ जन्म वक्तव्यम्। अथ तत्र सप्तविंशति भक्ते यदवशिष्टस्तत्समम अश्विन्यादि नक्षत्रं वाच्यम।

द्वितीय स्थान पर लिखी अष्टगुणित राशि में दो का भाग देने पर १ शेष वचे तो शुक्लपक्ष और शून्य शेष बचे तो कृष्णपक्ष में जन्म कहना चाहिए। उक्त राशि में १५ का भाग देने पर एक आदि शेष रहने पर प्रतिपदा आदि तिथि को जन्मतिथि मानना चाहिए।

तृतीय स्थान पर लिखी हुई सप्तगुणित राशि में २ का भाग देने पर १ वचे तो दिन में और शून्य शेष वचे तो रात्रि में जन्म कहना चाहिए। इसी राशि में २७ का भाग देने पर एक आदि शेष होने पर अश्विनी आदि को जन्मनक्षत्र मानना चाहिए।

वेलेति। यस्मिन् दिने पुरुपस्य जन्म ज्ञातं तद्दिनस्य प्रमाणं घटिकादिकं कार्यम्। रात्रौ चेद्रात्रि-प्रमाणं कर्त्तव्यम्। अथ पञ्च-गुण-राशौ

दिन-प्रमाणेन भक्ते यदवशिष्टं तत्समं दिने सूर्योदयादिष्टं ज्ञेयम्, रात्रि-मानेन भक्ते यदवशिष्टं तत्समं सूर्यास्ताद्रात्रौ घटिकादिकमिष्टं ज्ञातव्यम् ।

अथैवं काले ज्ञाते तात्कालिका लग्न-ग्रहाश्च कार्याः । तत्र होरा-द्रेष्काण-नवांशादयश्च कर्तव्याः । यथाभिहृत-विधिना दशाष्ट-वर्गादिक-फल निर्देशः कर्तव्यः । इति ।

चतुर्थ स्थान पर लिखी हुई पंचगुणित राशि में, दिन में जन्म होने पर दिनमान से भाग देने पर और रात्रि में जन्म होने पर रात्रिमान से भाग देने पर शेष दिनगत या रात्रिगत इष्टकाल होता है ।

और फिर इष्टकाल का ज्ञान हो जाने पर लग्न एवं ग्रहों के स्पष्टीकरण, होरा, द्रेष्काण एवं नवांश आदि षड्वर्ग तथा अष्टकवर्ग आदि को जातक पद्धति के अनुसार जानकर फलादेश करना चाहिए । दिनमान और रात्रिमान के ज्ञान के लिए स्थानीय सूर्योदय व सूर्यास्त काल का साधन कर लेना चाहिए । सूर्यास्त को ५ से गुणा करने पर दिनमान आ जाता है । दिनमान को ६०।०० घड़ी में से घटाने पर रात्रिमान होता है । सरल प्रकार यह है कि पृच्छक की आयु के गत वर्षों के अनुसार उसके जन्म संवत् की गणना करने के पंचांग से दिनमान जाना जा सकता है, लेकिन वह शुद्ध स्थानीय दिनमान न होकर स्थूल ही होगा ।

अथ प्रष्टुः प्रश्न-लग्नेन जाया-सहज-पुत्रादि-भावेभ्यस्तन्नष्ट-जातकम्

2-36 जाया-सहज-पुत्रेभ्यो मातृ-पित्रिष्ट-शत्रुतः ।
प्रष्टुः प्रश्नस्य लग्नेन ज्ञेयं तन्नष्ट-जातकम् ॥

अस्य व्याख्या । जायेति । यदा भार्या-नष्टजातकं पृच्छति तदा तात्कालिक-प्रश्न-लग्ने राशि-षट्कं देयं, भ्रातुः प्रश्ने राशि द्वयं, पुत्र-प्रश्ने राशि-चतुष्टयं, मातृ-प्रश्ने राशि-त्रयं, पितृ-प्रश्ने राशि नवकम्, इष्टस्य मित्रस्य प्रश्ने राशि-त्रयं, शत्रु-प्रश्ने च राशि-पञ्चकं देयम् ।

एवं कृते तदुदय-राशिं प्रकल्प्य तदुक्त-गुणकारेण संगुण्य तत्स्थ-ग्रह-गुणकारेणापि संगुण्य नवक-दान-विशोधनं कृत्वा सप्तविंशति-भक्ते यदवशिष्टं तत्तुल्यं भार्यादीनां जन्म-नक्षत्रं वक्तव्यम् । इति ।

स्त्री, भाई, पुत्र आदि के नष्ट-जातक का ज्ञान

पत्नी के नष्टजातक के पुनर्निर्धारण में प्रश्नकालीन लग्न में ६ जोड़ना चाहिए। इसी प्रकार, भाई के संदर्भ में लग्न में २, पुत्र के संदर्भ में ४, माता के संदर्भ में ३, पिता के संदर्भ में ९ और मित्र के संदर्भ में ३ और शत्रु के नष्ट-जातक के प्रसंग में लग्न में ५ जोड़ना चाहिए। इस प्रकार स्त्री आदि के नष्ट-जातक के ज्ञान के लिए प्रश्नलग्न में पूर्वोक्त रीति से ६ आदि जोड़कर उसकी कलाएं बना लेनी चाहिएं। फिर उन कलाओं में राशि के गुणांक से तथा लग्न में ग्रह होने पर उन ग्रहों के गुणांक से गुणा करना चाहिए। तत्पश्चात् लग्न के द्रेष्काण के अनुसार कथित रीति से ९ जोड़ना या घटाना चाहिए। इस प्रकार पिण्ड बनाकर उसमें २७ का भाग देने पर स्त्री आदि का जन्म-नक्षत्र होता है।

अस्योदाहरणम् । संवत् १९०८, शाके १७७३ आश्विन-शुक्ल-पूर्णिमायां भृगुवासरे प्रश्नेष्टं २।४९, रविः ५।२४।१२।३५, लग्नं ६।८।३३।३६ लग्न-राशि ६ त्रिशता (३०) संगुण्याधःस्थांशान् ८ संयोज्य १८८ पुनः षष्ट्या गुणयित्वा अधःस्थाः कलाः ३३ संयोज्य जातं लिप्तापिण्डी-कृतं लग्नं ११३१३ । तुला-लग्नस्य सप्त-गुणकाराः ७ । तैर्गुणितं ७९१९१ । अत्र लग्ने बृहस्पतिरस्ति तद्गुणकारा दश, तैः राशि-गुणकार-गुणित-गुणन-फलं ७९१९१, गुणितं जातं ७९१९१० ।

इदं चतुः-स्थाने स्थाप्यं, प्रथमं ७९१९१० दश-गुणं कार्यं ७९१९१००, द्वितीयं ७९१९१० अष्टगुणं ६३३५२८०, तृतीयं ७९१९१० सप्तगुणं ५५४३३७०, चतुर्थं ७९१९१० पञ्चगुणं ३९५९५५० ।

अथ लग्ने प्रथम-द्रेष्काणत्वान् नवक-दाने कृते आद्यं ७९१९१०९, द्वितीयं ६३३५२८९, तृतीयं ५५४३३७९, चतुर्थं ३९५९५५९ । इत्थं दशगणितेषु अब्दादयो ज्ञेयाः ।

अथ दश-गुणितः कर्म-योग्यः प्रथमो राशिः ७९१९१०९ परमायु (१२०)-भक्ते लब्धं ६५९९२ त्याज्यं, शेषाङ्क(६९)-तुल्यानि वर्षाणि गतानि, एभिः ६९ प्रश्न-कालिक-संवत् १९०८ रहितो जातो जन्म-संवत् १८३९ प्रष्टुर्ज्ञेयः।

अथ ऋतुज्ञानार्थं तत्रैव ७९१९१०९ षड्-भक्तो, लब्धं १३१९८५१ त्याज्यम्, शेषाङ्क (३)-तुल्यर्तुस्तृतीयो ग्रीष्मः।

अथ मासज्ञानार्थं तत्रैव ७९१९१०९ द्वाभ्यां भक्तो, लब्धं ३९५९५५४ त्याज्यम्, शेषाङ्क-(१)-तुल्यो ग्रीष्मर्तौ प्रथमो मासो ज्येष्ठः।

अथाष्ट-गुणित-राशिः ६३३५२८९ द्वाभ्यां भक्तो, लब्धं ३१६७६४४ त्याज्यं, शेषमेकं तत्तुल्ये ज्येष्ठ-मासे शुक्ल-पक्षः।

अथाष्ट-गुणितो यो राशिः ६३३५२८९ पञ्चदश भक्तो लब्धं ४२२३५२ त्याज्यं, शेषाङ्क(९)-समा ज्येष्ठ-शुक्ल-पक्षे नवमी-तिथिर्जाता।

अथ सप्त-गुणित-राशिः ५५४३३७९ सप्तविंशद्भक्तः, लब्धं २०५३१० त्याज्यं, शेषाङ्क (९)-सममश्विन्यादितो नवममाश्लेषा-नक्षत्रम्।

अथ पञ्च-गुणितराशिः ३९५९५५९ ज्येष्ठ-शुक्ल-नवम्यां दिन-मानं ३४। तेन भक्त-लब्धं ११६४५७ त्याज्यं शेषाङ्क-(२१) समं सूर्योदया-दिष्टकालं घट्यादिकं २१।०।

अनेनैव प्रकारेण भार्यादीनामपि नष्ट-जातकं ज्ञेयम्, तथा च संवत् १८३९, शाके १७०४, उत्तरायणे, ग्रीष्मर्तौ, ज्येष्ठ-मासे, शुक्ल-पक्षे, नवमी-तिथौ, सूर्योदयादिष्ट-घट्यादौ २१।० प्रश्नकर्तुर्जन्म वक्तव्य-मिति।

इति नष्ट-जातक-निर्णये द्वितीय-प्रकारः। अथेदानीं प्रकारान्तरेण नष्ट-जातकमुच्यते।

प्रश्नकर्त्ता द्वारा अपनी तथा स्त्री आदि की नष्ट-कुण्डली जानने का संयुक्त उदाहरण देते हैं। किसी व्यक्ति ने अपनी नष्ट जन्मपत्रिका के पुनर्निर्धारण के लिए वि. संवत् १९०८, शक संवत् १७७३, आश्विन

शुक्ला पूर्णिमा, शुक्रवार को प्रश्न किया। उस समय इष्टकाल २।४६, स्पष्ट सूर्य ५।२४।१२।३५ तथा स्पष्टलग्न ६।८।३३।३६ था। यहां स्पष्टलग्न की कलाएं

[६×३०=१८०+८=१८८×६०+३३]=११३१३ हुई। इन कलाओं को तुलाराशि के गुणांक ७ से गुणा किया तो ७६१६१ हुआ। यहां लग्न में वृहस्पति होने के कारण उक्त राशि को गुरु के गुणांक १० से गुणा करने पर ७६१६१० हुआ।

इस गुणनफल को चार स्थानों पर लिखकर प्रथम स्थान में १० से गुणा करने पर ७६१६१००, द्वितीय स्थान में ८ से गुणा करने पर ६३३५२८०, तृतीय स्थान में ७ से गुणा करने पर ५५४३३७० और चतुर्थ स्थान में ५ से गुणा करने पर ३६५६५५० हुआ। यहां लग्न में प्रथम द्रेष्काण है, अतः चारों स्थानों पर ६ जोड़ने पर यथाक्रम ७६१६१०६, ६३३५२८६, ५५४३३७६ तथा ३६५६५५६ कर्मविधान योग्य राशियां या स्पष्टपिण्ड हुए।

फिर प्रथम स्थान की कर्मविधान योग्य राशि ७६१६१०६ में १२० का भाग देने पर ६६ शेष वचा। अतः प्रश्नकर्ता की आयु ६६ वर्ष की हुई। प्रश्नकालीन संवत् १६०८ में से ६६ घटाने पर १८३६ प्रश्नकर्ता का जन्म संवत् हुआ। उक्त कर्मविधान योग्य राशि में ६ का भाग देने से ३ शेष बचा। इसलिए प्रश्नकर्ता का ग्रीष्म ऋतु में जन्म सिद्ध हुआ।

उक्त राशि ७६१६१०६ में दो का भाग देने पर १ शेष वचा। इसलिए ग्रीष्म ऋतु के प्रथम मास अर्थात् ज्येष्ठमास में जन्म माना गया।

द्वितीय स्थान पर लिखित कर्मविधान योग्य राशि ६३३५२८६ में २ का भाग देने पर १ शेष बचा। अतः शुक्ल पक्ष में जन्म हुआ। उसी राशि में १५ का भाग देने पर ६ शेष रहा। अतः अष्टमी गततिथि तथा नवमी जन्मतिथि हुई।

तृतीय स्थान पर लिखित कर्मविधान योग्य राशि ५५४३३७९ है। २७ का भाग देने पर ९ शेष बचा। अतः अश्विनी आदि से गणना करने पर आश्लेषा नक्षत्र जन्मनक्षत्र हुआ।

और फिर चतुर्थ स्थान पर लिखित कर्मविधान योग्य राशि अर्थात् ३९५९५५९ में ज्येष्ठ शुक्ला नवमी के दिनमान ३४ से भाग देने पर २१ शेष रहा। अतः प्रश्नकर्त्ता का जन्म सूर्योदय से २१ घटी तुल्य इष्टकाल पर सिद्ध हुआ। इस प्रकार इस उदाहरण में प्रश्नकर्त्ता का जन्म संवत् १८३९, शक १७०४, उत्तरायण, ग्रीष्म ऋतु, ज्येष्ठ मास, शुक्लपक्ष, नवमी तिथि को सूर्योदय से २१ घटी पर सिद्ध होता है।

इस प्रकार नष्ट-जातक का द्वितीय प्रकार समाप्त हुआ। अव इसका एक और प्रकार वताया जा रहा है।

तत्रादौ लग्नज्ञानमाह

2-37 प्रश्नाह-कालोदयतः स्फुटं यत् संवीक्ष्य सर्वे ख-चरा यदि स्युः।
तथा निवेश्यास्तत्रापि यत्स्याद्भावो बलाढ्यस्तु विलग्नमत्र ॥

अस्य व्याख्या। प्रश्नाहेति। यत्प्रश्नाह-कालोदयतः स्फुटं तत् संवीक्ष्यार्थात् प्रश्न-कालीनं स्पष्ट-लग्नं साधयेत्। ततो यदि सर्वे ख-चरा यथा स्युः तथा निवेश्याः, तत्रापि यद् भावस्तन्वादिर्बलाढ्यो वलवान्, अत्र तत्प्रष्टुर्जन्म विलग्नं वाच्यम्। इति।

जन्मलग्न का ज्ञान

प्रश्नकालीन स्पष्टलग्न का साधन कर तात्कालिक स्पष्टग्रहों को यथास्थान लिखना चाहिए और इस प्रकार वनायी गयी प्रश्नकुण्डली में जो भाव वलवान् हो उसको प्रश्नकर्त्ता का जन्मलग्न मानना चाहिए। अर्थात् प्रश्नकुण्डली में जो भाव ग्रहों की स्थिति, दृष्टि तथा भावेश के वल के आधार पर सवसे वलवान् हो, वही जन्मलग्न मानना चाहिए। यहां ग्रहों की अष्टवर्ग प्रणाली का भी आश्रय लिया जाना चाहिए।

अथ साम्प्रतं वर्ष-मास-पक्ष-तिथि-ज्ञानम्

2-38 तनोः सकाशाद्यतमे गृहे च वाचांपतिस्तस्य सकाशतो वा ।
गतानि वर्षाणि तथोष्ण-रश्मेः सकाशतो मास-दिनादि-पक्षाः ॥

अस्य व्याख्या । तनोरिति । तनोः प्रश्न-लग्नात् सकाशाद्यतमे गृहे स्थाने वाचांपतिर्गुरुर्वर्तते तत्तुल्यानि प्रष्टुर्गतानि व्यतीतानि वर्षाणि वाच्यानि । वा अथवा तस्य गुरोः सकाशतो गतानि वर्षाणि वाच्यानि । तथोष्ण-रश्मेः सूर्यात् सकाशतो मास-दिनादि-पक्षाः वाच्याः । इति ।

वर्ष आदि का ज्ञान

प्रश्नलग्न से जितने संख्यक भाव में बृहस्पति हो, उतने ही वर्ष की प्रश्नकर्त्ता की आयु बतानी चाहिए । अथवा, गुरु की राशि से गतवर्षों का निर्णय करना चाहिए । और सूर्य से मास, दिन एवं पक्ष की जानकारी की जानी चाहिए । आशय यह है कि प्रश्नकर्त्ता की आयु का अन्दाज लगाकर १२-१२ वर्ष के अनुपात से आयु वर्ष जानना चाहिए । अथवा गुरु की राशि से गतवर्षों का निर्णय करने के लिए स्पष्ट प्रश्नलग्न के अंशों को २ से गुणा करके ५ का भाग देने पर जो राशि आए, वही जन्मकालीन गुरु की राशि माननी चाहिए । फिर आयु के अनुमान से १२-१२ वर्ष जोड़कर जन्म वर्ष जाना जाता है । यह विषय पिछले प्रकरण में सोदाहरण स्पष्ट है । सूर्य से मासादि के ज्ञान की विधि आगे बता रहे हैं ।

अथाधुना मास-तिथ्यादि-ज्ञानम्

2-39 स-चन्द्र-सूर्यस्य लवा वि(द्वि)-निघ्नाः
वर्षैर्गतैर्द्वादश-भाजितः स्युः ।
मासास्त एव स्व(एवाशु)गताब्द-निघ्नाः
ख-रामभक्तास्तिथिरत्र शेषात् ॥

2-40 लब्धं द्विभक्तं खलु शेष-पक्षौ
ततश्च वारस्तत एव नाडी ।
सूर्येन्दु-लिप्ता-युति-वर्ष-निघ्ना
वेदाहृतास्ता घटिका भवन्ति ॥

अनयोर्व्याख्या। स-चन्द्रेति, लब्धमिति च। स-चन्द्र-सूर्यस्य स्पष्ट-चन्द्रेण युक्तः स्पष्ट-सूर्यः तस्य लवा अंशाः कार्याः। ततः पूर्वागतैर्वर्षै-र्विनिघ्ना गुणितास्, ततो द्वादश-भाजिताः यदवशिष्टं मासाः स्युः। ते एव अंशाः स्वगताब्द-गुणितास्ततः ख-राम-भक्तास्त्रिशद्विभाजिताः शेषात् तिथिः स्यात्। ततो लब्धं द्विभक्तं शेषं पक्षौ वाच्यौ। ततो वारस्ततो नाडी च कल्प्या।

अथ सूर्येन्दु-लिप्तायुतिः सूर्याचन्द्रमसोः कला-युतिः कार्या सा स्व-वर्षगुणिता वेदाहृतास्ता घटिका भवन्ति।

मास, तिथि, वार एवं घटी का ज्ञान

स्पष्टसूर्य में स्पष्टचन्द्रमा जोड़कर उसके अंश बनाना चाहिए। फिर इनको गत वर्षसंख्या से गुणा कर १२ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर चैत्रादि मास में जन्म मानना चाहिए। उक्त अंशों को पुनः गत वर्षसंख्या से गुणा कर ३० का भाग देने पर एक आदि शेष बचने पर प्रतिपदा आदि तिथि जानना चाहिए और यहां लब्धि में २ का भाग देकर एक शेष बचे तो शुक्लपक्ष तथा शून्य शेष बचे तो कृष्णपक्ष बताना चाहिए। पूर्वोक्त अंशों को गतवर्ष संख्या से गुणा कर ७ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर सूर्य आदि वार में जन्म बताना चाहिए।

गुणनफल में सूर्य एवं चन्द्रमा की कलाओं को जोड़कर उनको गत वर्षों की संख्या से गुणा कर ४ का भाग देने पर शेष घटिकाओं को इष्टकाल मानना चाहिए।

अथ सम्प्रति नक्षत्रादि-ज्ञानम्

2-41 ततोऽत्र घिष्ण्यं हिमरश्मि-भागा
गताब्द-निघ्ना भ-हृते (न गते) त्र भागा,।
शेषेण घिष्ण्यं विधु-भुक्ति-निघ्नं
वर्षं नखाप्ता घटिकाश्च योगाः॥

अस्य व्याख्या। तत इति। ततस्तदनन्तरमत्र घिष्ण्यं नक्षत्र-ज्ञानमाह। हिमरश्मि-भागास्तात्कालिक-स्पष्ट-चन्द्रस्यांशाः कार्याः।

ततस्ते गताब्द-गुणिताः कार्याः ततस्ते भागा भ-हृते सप्तविंशत्युद्धृते सति तदा शेषेण धिष्ण्यं नक्षत्रं वाच्यम् । ततो वर्षं गत-वर्षं चन्द्रगति-गुणितं ततो नखाप्ता विंशद्भक्ता घटिकाश्च वाच्याः ।

नक्षत्र एवं योग का ज्ञान

स्पष्टचन्द्र के अंशों को गत वर्ष-संख्या से गुणा कर २७ का भाग देने पर एक आदि शेष होने पर अश्विनी आदि नक्षत्र बताना चाहिए । और फिर चन्द्रमा की गति को गत वर्षसंख्या से गुणा कर २० का भाग देने से शेष संख्या विष्कुम्भादि योगों की होती है ।

अथाधुना वार-ज्ञानम्

2-42 **सूर्य-भागा गताब्देन निघ्नाश्चन्द्रांश-संयुताः ।**
सप्त-तष्टा भवेद् वारो नष्ट-जातक-निश्चयात् ॥

अस्य व्याख्या सूर्य-भागा इति । अथ तात्कालिक-स्पष्ट-सूर्यांशाः, गताब्देन गत-वर्षेण गुणिताः कार्याः । ततः स्पष्टचन्द्रांशैर्युक्ताः । सप्ततष्टास्तदा यदवशिष्टं तन्नष्ट-जातक-निश्चयाद् वारो भवेत् । इति नष्ट-जातकस्य तृतीय-भेदः ।

वार का ज्ञान

तात्कालिक स्पष्टसूर्य के अंशों को गतवर्ष संख्या से गुणा कर, गुणनफल में स्पष्टचन्द्रमा के अंश जोड़ने चाहिए और फिर सात का भाग देने से शेष तुल्य वार को नष्ट-जातक के पुनर्निर्धारण में जन्मवार मानना चाहिए । इस प्रकार नष्ट-जातक के पुनर्निर्धारण की तीसरी रीति समाप्त हुई ।

अथ नष्ट-जातकस्य चतुर्थ-भेद उच्यते । तत्रादौ प्रश्नतो बादरायण-मुनि-कथितमायुर्ज्ञानं प्रदर्श्यते ।

2-43 **प्रश्नतोप्यविदितोद्भव-पुंसां वाक्यमायुरुदितं हि मुनीन्द्रैः ।**
बादरायण-मुनिरितमायुः प्रश्नतस्तु कथयामि सुबोधम् ॥

अथ साम्प्रतं विशेषतः प्रथमं पुरुषाणामायुर्ज्ञानम्—

2-44 यस्मादती (ज्जिते) न्द्रियमिदं जीवित-मरणं प्रमुच्यते मुनिभिः ।
तस्मात्तदेव पुंसां वक्ष्यामि विशेषतः प्रथमम् ॥

अस्य व्याख्या । प्रश्नत इति । अ-विदितोद्भवपुंसा विज्ञात-जन्म-पुरुषाणाम् आयुः । प्रश्नतोपि प्रश्न-समयतोपि वाच्यम्, इति मुनीन्द्रैरुदितम् । अतः सुबोधम् अतिसरलं बादरायण-मुनीरितं वादरायण-मुनि-कथितमायु प्रश्नतः पृच्छाकालतः कथयामि ।

अस्य व्याख्या । यस्मादिति । यस्मात्कारणात् मुनिभिरिदम-(मजिते) तीन्द्रियं जीवित-मरणं प्रमुच्यते तस्माद् विशेषतः प्रथमं पुंसां पुरुषाणां तदेव वक्ष्यामि कथयामि ।

अव उसकी चौथी रीति प्रस्तुत की जा रही है । जिनके जन्मकाल की जानकारी न हो, उनकी आयु का निश्चय प्रश्नलग्न से करना चाहिए ऐसा ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तक महर्षियों ने कहा है । अतः महर्षि वादरायण के द्वारा प्रतिपादित आयु-निर्णय की अति सुवोध रीति प्रस्तुत है ।

जिस आयु से जीवन एवं मृत्यु के ज्ञान जैसे इन्द्रीयातीत ज्ञान को मुनियों ने बताया है, उस रीति से अव सर्वप्रथम मनुष्य के जीवन एवं मृत्यु को वताता हूं ।

अथ सम्प्रति मानवादिकानां परमायुर्ज्ञानम्

2-45 परमायुर्नृ-गजानां विंशत्यधिकं शतं स-पञ्च-दिनम् ।
चतुरधिकापि विंशतिरायुर्गो-महिषयोः स-दिना ॥

2-46 अविकाजानां षोडश, पञ्च-युता विंशति खरोष्ट्राणाम् ।
द्वादश-वर्षाणि शुनां कथितं द्वात्रिंशदश्वानाम् ॥

परमायुरिति, अविकेति च । स-पञ्च-दिनं पञ्च-दिन-सहित विंशत्यधिकं शतं विंशत्युत्तर-शतं वर्षाणां नृ-गजानां मानव-हस्तिनां परमायुः कथितम् । स-दिना एक-दिन-सहिता चतुरधिका विंशतिः चतुर्विंशति-वर्षाणां गो-महिषयोरायुः परमायुःकथितम् । षोडश वर्षाण्यविकाजानाम् अविच्छागानां परमायुः कथितम् । पञ्च-युता विंशतिः पञ्चविंशतिः वर्षाणां गर्दभोष्ट्राणां परमायुः कथितम् । शुनां

कुक्कुराणां द्वादश वर्षाणि। एवमश्वानां घोटकानां वर्षाणां द्वात्रिंशत परमायुः कथितम्।

मनुष्य आदि जीवों की अधिकतम आयु

श्रेष्ठ मनुष्यों की परम आयु १२० वर्ष ५ दिन, गाय-बैलों और भैंसों की परम आयु २४ वर्ष १ दिन, भेड़ों और बकरियों की परम आयु १६ वर्ष, गदहों एवं ऊंटों की परम आयु २५ वर्ष, कुत्तों की परम आयु १२ वर्ष तथा घोड़ों की परम आयु ३२ वर्ष की होती है।

अथेदानीं काल-ज्ञानार्थं रव्यादीनां ग्रहाणां क्रमेण गुणकाराः

2-47 पञ्चैकविंशतिमनुरङ्क-वसु-क्षितीश-सम-संख्याः।
क्रमशः कालार्थमिमे गुण-कारा दिनकरादीनाम्॥

अस्य व्याख्या। पञ्चेति। रवेः ५, विधोः २१, कुजस्य १४, बुधस्य ६, गुरोः ८, भृगोः ३, शनेः ११, इमे क्रमशः कालार्थं कालज्ञानाय दिन-करादीनां सूर्यादीनां गुण-कारा गुणाङ्का भवन्ति।

ग्रहों के गुणांक

सर्य आदि ग्रहों के गुणांक : सूर्य के ५, चन्द्र के २१, मंगल के १४, बुध के ६, गुरु के ८, शुक्र के ३ एवं शनि के ११। इन गुणांकों से काल का ज्ञान किया जाता है।

अथाधुनायुषो वर्षादि-कालानयनम्

2-48 उद्गत-कला-समूहं परमायुस्ताडितं समुद्धृत्य।
मण्डल-कलाभिराप्तो वर्षादिरथायुषः कालः॥

अस्य व्याख्या। उद्गतेति। यस्मिन् काले प्रष्टायुषः पृच्छां करोति तस्मिन् काले स्फुटेन यन्त्रेण घटिकादि-कालमुपलभ्य ततो लग्नं कार्यम्।

ततश्च तस्य राशि त्रिशता संगुण्य भागान् संयोज्य पुनः षष्ट्या संगुण्य लिप्ताः संयोज्य उद्गत-कला-समूहं यस्य नरादि-प्रश्न-काल-

लग्नस्य तस्य परमायुषा ताडितं गुणितं मण्डल-कलाभिश्चक्र-कलाभिः २१६०० समुद्धृत्य भक्ताप्तं वर्षादि वर्ष-मास-दिन-घटिका-पलात्मकम् आयुषः कालः स्यात् । अर्थादितद् वर्षादि मध्यमायुर्ज्ञेयमिति ।

अथोदाहरणम् । संवत् १९०८, शाके १७७३, माघ-शुक्लाष्टमी-मकरार्कात् १८, गुरु-दिने इष्टं ०।३०, तत्र लग्नं ९।२२।१८।६, अस्य कलाः १७५३८।६ । आसां विकलाः १०५२२८९ परमायुर्वर्षाद्यैः १२०।०।५ दिनीकृतैः ४३२०५ गुणिताः (४५४६४१४६२४५)चक्र (१२)कलाः २१६०० । आसां विकलाभिः १२९६००० भक्ता लब्धं दिनानि ३५०८०, शेषं ४६६२४५, षष्टि-गुणं २७९७४७००, चक्र-विकलाभिः १२९६००० भक्तं लब्धं घटिकाः २१ शेषं ७५८७०० षष्टि-गुणं ४५५२२००० चक्र-विकलाभिः १२९६००० भक्तं लब्धं पलानि ३५ शेषं त्याज्यं प्रयोजनाभावात् । इत्थमागतमायुर्दिनादि ३५०८०।२१।४५। अथ दिनाद्ये त्रिंशद्भक्ते लब्धं मासाः ११६९ एते द्वादश-भक्ता लब्धं ९७ अब्दाः, एवं वर्षादि-मध्यमायुर्जातं ९७।५।१०।२१।३५ इति ।

आयु का ज्ञान

जिस समय व्यक्ति आयु के बारे में प्रश्न करे, उस समय घटिकायन्त्र द्वारा इष्टकाल जानकर स्पष्टलग्न का साधन करना चाहिए । और फिर लग्न की राशि को ३० से गुणाकर अंशों को उसमें जोड़कर और फिर उस योग को ६० से गुणा कर उसमें कलाओं को जोड़कर स्पष्टलग्न की कलाएं बनाकर ज्ञात करना चाहिए । इन कलाओं को मनुष्य की परमायु से गुणाकर २१६०० का भाग देने से हुई लब्धि के बराबर, वर्ष, मास, दिन, घटी एवं पल प्रश्नकर्त्ता की आयु होती है ।

इसका उदाहरण लीजिए । संवत् १९०८, शक १७७३, माघ शुक्ला अष्टमी, मकरादि गते १८ गुरुवार को किसी व्यक्ति ने अपनी आयु जानने के लिए प्रश्न किया । उस समय इष्टकाल १।३० तथा स्पष्टलग्न ९।२२।१८।६ थी । स्पष्टलग्न की कलाएं बनाई तो १७५३८।६ तथा विकलाएं १०५२२८९ हुईं । मनुष्य की परम आयु १२०।०।५ के दिन ४३२०५ हुए । लग्न की विकलाओं को परम आयु के दिनों से गुणा किया (१०५२२८९×४३२०५=) ४५४६४१४६२४५ । इस गुणनफल में चक्र-कला २१६०० की विकलाओं १२९६००० से भाग

दिया तो लब्धि ३५०८० दिन आयी। शेष ४६६२४५ को ६० से गुणाकर चक्र-विकलाओं १२९६००० का भाग देने से लब्धि २१ घटी मिली। और शेष ७५८७०० को ६० से गुणाकर चक्र-विकलाओं १२९६००० का भाग देने से लब्धि ३५ पल मिले। अतः प्रश्नकर्त्ता की आयु ३५०८० दिन २१ घटी एवं ३५ पल हुई। दिनों के मास एवं वर्ष बनाने पर प्रश्नकर्त्ता की मध्यम आयु ९७ वर्ष ५ मास १० दिन २१ घटी एवं ३५ पल की सिद्ध हुई।

अथेदानीं मध्यमासन्नायुरानयनम्

2-49 **उदय-समीप-ग्रह-गुणनाभ्यस्त तदायुर्हृत-शेषः।**
शुद्धोधस्त्वेकतरो यो यस्य भवेत्तथासन्नः॥

अस्य व्याख्या। उदयेति। उदयो लग्नं तस्य समीपं निकटं द्वादश-स्थानं यतोतीतं द्वादशतो, वर्तमानं लग्नाद्, आगामी द्वितीयतो, ज्ञायते, इति दैवविदां संप्रदायः।

तत्रोदय-समीप-स्थे द्वादश-स्थाने यो राशिः मेषादिके वर्तते तस्य यो ग्रहः स्वामी रव्यादिकः तस्य गुणनया गुण-कारेण अभ्यस्तं गुणितं सविकलं कृत्वा ततोधः-प्रभृति स्वच्छेदैर्विभज्य यल्लब्धं तदुपरि योजयेत्, शेषं यथास्थितमेव। तत्रोपर्युपरि स्थाने तदायुषो यस्य जन्तोरायुरन्विष्यते तत्परमायुषा भागो हार्यः, लब्धं त्याज्यं तेन सह प्रयोजनाभावात्। यच्छेषं तद् ग्राह्यम्। ततस्तदायुर्हृत-शेषं शुद्धोधोधो यच्छेत् परमायुस्तस्मात् तदेव शेषं वर्षादि शोधयेत् पातयेत्। तयोर्द्वयोर्मध्यादेकतर एकस्तथा तेन प्रकारेण तस्य नरादेरासन्नो निकट उपरिष्टाद् अधस्ताद्वा यदनुमीयते संभवेत्, तयोर्द्वयोरनुमानेन वक्ष्यमाणविधानेनेति।

अथायुषः स्पष्टीकरणोदाहरणम्। अत्र मकर-लग्नं तस्माद् द्वादशे धनुस्तस्य स्वामी गुरुस्तेन गुरु-गुणकेन ८ वर्षादि मध्यमायुः ९७।५।-१०।२१।३५ गुणितं ७७९।६।२२।५२।३०।

इदं दिनीकृतं २८०६४२।५२।४० मनुष्य-परमायुषा १२०।०।५।०।० दिनीकृतेन ४३२०५ तष्टं शेषं २१४१२।५२।४० दिनादि। इदं वर्षीकृतं जातं ५९।५।२२।५२।४० इदं परमायुषः १२०।०।५।०।० सकाशाच्छोधितं ६०।६।१२।७।२० अनयोर्मध्ये प्रष्टुर्वयोनुमानेन यदेकतर-

मासन्नं तद्ग्राह्यम् । तज्जन्म-कालात् प्रश्नकालं यावत् प्राग्गतायुः स्यात् । अथ चेदानीतायुर्द्वयं न संवदति तदा वक्ष्यमाण-विधिना संस्कारः कार्यः ।

आसन्न आयु का ज्ञान

लग्न के समीप अर्थात् द्वादश स्थान में जो मेषादि राशि हो उस राशि के स्वामी ग्रह के गुणांक से पूर्वसाधित आयु को गुणाकर अपने विकल्प अर्थात् परम आयुमान से भाग देना चाहिए। यहां जो शेष बचता हो वह अथवा उसको परमायु के मान में से घटाने पर जो शेष बचे वह प्रश्नकर्त्ता की आसन्न आयु होती है।

अव उदाहरण द्वारा इसको स्पष्ट किया जा रहा है। पूर्वोक्त उदाहरण में स्पष्टलग्न ९।२२।१८।९ तथा आयु ९७।५।१०।२१।३५ थी। यहां मकर लग्न है और उससे १२वें स्थान में धनु राशि है, जिसका स्वामी गुरु होता है। अतः गुरु के गुणांक ८ से पूर्वसाधित आयु को गुणा (९७।५।१०।२१।३५)×८ करने पर ७७९।६।२२।५२।४० हुआ।

वह मान वर्षादि है, अतः इसके दिन वनाने पर २८०६४२ दिन ५२ घटी एवं ४० पल हुए। इनमें मनुष्य की परमायु १२० वर्ष ५ दिन के दिनों ४३२०५ से भाग दिया तो शेष २१४१२ दिन ५२ घटी एवं ४० पल रहा। इसके वर्ष आदि वनाने पर ५९ वर्ष ५ मास २२ दिन ५२ घटी एवं ४० पल हुए। इसको परमायुमान १२०।०।५ में से घटाने पर ६० वर्ष ६ मास १२ दिन ७ घटी एवं २० पल हुए। अतः इस उदाहरण में ५९ वर्ष ५ मास २२ दिन ५२ घटी एवं ४० पल अथवा ६० वर्ष ६ मास १२ दिन ७ घटी एवं २० पल हुआ। इन दोनों में से जो आयु प्रश्नकर्त्ता की आनुमानिक आयु से आसन्नवर्ती दिखाई दे, वही प्रश्नकर्त्ता की आसन्न आयु माननी चाहिए। और यदि उक्त दोनों प्रकार से साधित आयु के मानों में एकरूपता न हो तो वक्ष्यमाण विधि से संस्कार करना चाहिए।

अथाधुना त्रि-नवक-षट्केत्याद्यङ्कैरासन्नायुषि संस्कारः कार्य-स्तदातीतायुः स्यादित्याह

**2-50 त्रि-नवक-षट्क-समुत्थं क्रमशो बालादि-मध्य-वृद्धानाम् ।
पुंसां स जन्म-कालः समतीतः समभिधातव्यः ।।**

अस्य व्याख्या । त्रि-नवकेति । त्रि-नवक-षट्काः प्रसिद्धाः ३।९।६ । एभ्यः समुत्तिष्ठतीति त्रि-नवक-षट्क-समुत्थं क्रमशः क्रमेण परिपाट्या वालादि-मध्य-वृद्धानां पुंसां नराणां स जन्म-कालो जन्म-समयः समतीतो निष्क्रान्तो वर्षादिकः समभिधातव्यो वक्तव्यः एतदुक्तं भवति । अथ यदि वालादेर्जन्तोः प्रसूतेः प्रसूतिवर्षं चत्वारिंशद् यावत् पूर्वायुः प्रमाणेन संवदति तदा तत्र त्रिकं देयं शोध्यं वा वर्षतस्, ततः संवदते, एवं मध्यमस्य नवक-दानेन विशोधनेन वा वक्तव्यम् । चत्वारिंशत्-परतो वर्षाशीतिं यावन् मध्यमस्, ततः परं वृद्धः, इत्यागमः । तदा वृद्धस्य षट्क-दानेन विशोधनेन वा वक्तव्यम्, एतच्च सत्त्वरूपं भवतीति ।

अथास्योदाहरणम् । अत्र प्रष्टा चत्वारिंशत्-परतो वर्षाशीतिं यावन् मध्यवयास्तन्मध्येऽस्तीत्यासन्नायुषि ५९।५।२२।५२।४० नव देयाः ६८।५।२२।५२।४०, शोध्या नव वा ५०।५।२२।५२।४० । अथ द्वितीयायुषि ६०।६।१२।७।२० नव देयाः ६९।६।१२।७।२०, अथवा द्वितीयायुषि ६०।६।१२।७।२० नव हेया ५१।६।१२।७।२० । एषु यत्प्रमाणं संवदति तद् ग्राह्यम् । तदागतमायुःप्रमाणं गतं स्फुटं स्यात् । न संवदति इतरदपि नवादि दानादिकं कार्यं यावत्संवदनमिति ।

अथ प्रश्न-काल-संवत् १९०८।९।१८।०।३० आगत-गतायुः ५१।६।१२।७।२० शोधित जातं संवत् १८५७ मासादयः ३।५।५३।१०। अथ संवत् १८५७ कर्कार्कात् ५ दिने सूर्योदयादिष्टं ५३।१० तत्र मिथुने-लग्नोदये प्रश्नकर्तुर्जन्म ज्ञातमिति ।

आसन्न आयु में संस्कार

जन्म से ४० वर्ष तक बाल्यावस्था, ४० वर्ष से ८० वर्ष तक मध्यावस्था तथा उसके वाद वृद्धावस्था मानी जाती है ।

मनुष्य की वाल्यावस्था और पूर्वोक्त रीति से ज्ञात आसन्न आयु उसके अनुरूप दिखाई न देती हो, तो आसन्न आयु में ३ वर्ष जोड़ना या घटाना चाहिए और एकरूपता स्थापित कर लेनी चाहिए। यदि प्रश्न-कर्त्ता मध्यावस्था का हो तो आसन्न आयु में ९ वर्ष जोड़ना या घटाना चाहिए। और यदि वह वृद्धावस्था का हो तो ६ वर्ष जोड़ना चाहिए। इस प्रकार प्रश्नकर्त्ता की दिखाई पड़ने वाली आयु से एकरूपता स्थापित करके जन्मकाल बताना चाहिए।

उदाहरण। मान लीजिए कि प्रश्नकर्त्ता ४० वर्ष से वड़ा एवं ८० वर्ष से छोटा है, अर्थात मध्यावस्था का है। अतः पूर्वोक्त आसन्न आयु ५९।५।२२।५२।४० तथा ६०।६।१२।८।२० में ९ जोड़कर या ९ घटा-कर आयु का ज्ञान किया : ५९।५।२२।५२।४० + ९ = ६८।५।२२।-५२।४०, ५९।५।२२।५२।४० — ९ = ५०।५।२२।५२।४०, ६०।६।-१२।७।२० + ९ = ६९।६।१२।७।२०, ६०।६।१२।७।२० — ९ = ५१।-६।१२।७।२०। इस प्रकार संस्कार करने पर उक्त आयु के मानों में से प्रश्नकर्त्ता की आयु के साथ जिस मान की एकरूपता दिखाई दे, वही उसकी आयु माननी चाहिए। यदि उक्त संस्कार करने पर भी एक-रूपता दिखाई न पड़े तो वार-वार ९ वर्ष जोड़कर या ९ वर्ष घटाकर एकरूपता स्थापित करनी चाहिए। इस उदाहरण से ५१ वर्ष ६ मास १२ दिन ७ घटी एवं २० पल इस आयु के मान के अनुरूप प्रश्नकर्त्ता की उम्र दिखाई देती है।

अतः प्रश्नकालीन-संवत् १९०८, माघ शुक्ला अष्टमी, सूर्य गतांश १८, इष्ट ००।३० अर्थात् १९०८।९।१८।०।३० में से ५१।६।१२।-७।२० घटाने पर संवत् १८५७ (कर्क सूर्य के गतांश ५) इष्ट ५१।१० पर मिथुन लग्न में प्रश्नकर्त्ता का जन्म वताना चाहिए।

अथ साम्प्रतं लग्नात् पुरागतो यो वर्षादि-कालस्तस्मादेष्या-युरानयनम्

2-51 पुनरपि स एव कालो वर्षादिर्यः पुरागतो लग्नात्।
विश्लिष्टः स्वाद्यायादेष्य-ग्रह-गुण-हतः कार्यः।

अस्य व्याख्या। पुनरिति। उद्गत-कला-समूहमित्यनेन प्रकारेण

यः पुरा वर्षादिरायुषः कालो लग्नाक्षगतः स्व-स्वायुषो विश्लिष्टो हीनः कार्यः। ततो यः शेषः स एष्यग्रह-गुण-हतः एष्य आगामि-लग्नाद् द्वितीयं स्थानं, तस्य यो ग्रहः स्वामी तस्य प्रागुक्तो गुणकारः तेन हतः कार्यः, स विकलो गुणनीय इत्यर्थः।

ततः स्वच्छेदैरुपर्युपरि लब्धं योज्यं वर्षस्थाने, तत्परमायुषा भागो हर्तव्यः। लब्धेन प्रयोजनाभावात्, यः शेषः कालः सदेहिनां प्राणिनां एष्यस्तावत्कालं तस्य जन्तोरायुः शेषोस्तीति विज्ञेयम्। उभयोरतीतैष्ययोर्योगात् पुरुषाणां सर्वायुःकालः। नर-ग्रहणम् उपलक्षणार्थम्। अन्येषां प्राणिनामपीत्थमायुरानयनं विधेयमिति।

अस्योदाहरणम्। अथैष्यायुः प्रमाणानयनम्। यः पूर्वागतं लग्नान्मध्यमायुः कालः ९७।५।१०।२१।३५ मानव-परमायुषः सकाशात् १२०।०।५।०।० शोधितः २२।६।२४।३८।२५ द्वितीयभावेशः शनिस्तद्गुणकेन गुणितं २४८।३।१।२।३५ परमायुर्भक्तं शेषं वर्षादिकमेष्यायुः ८।२।२१।२।३५ प्रश्नकाले १९०८।६।१८।०।३० युक्ते १९१७।०।०।९।३।५ तेन मेषार्कात् ६ दिने सूर्योदयादिष्टम् ३।५ तत्र प्रश्नकर्तुर्मृत्युरिति।

अवशिष्ट आयु का ज्ञान

उद्गतकलासमूहः० इत्यादि रीति से स्पष्टलग्न द्वारा साधित पूर्वोक्त आयु को परमायु मान में से घटाकर शेष को द्वितीयेश ग्रह के गुणांक से गुणाकर परमायुमान से भाग देना चाहिए। यहां शेषतुल्य वर्षादि मनुष्यभोग्य आयु होती है।

मनुष्य की आयु के गत वर्षादि में भोग्य व आदि जोड़ने पर उसकी संपूर्ण आयु का समय जाना जाता है। आशय यह है जिस प्रकार पहले हमने प्रश्नलग्न से बारहवें भाव के स्वामी के गुणांक से गुणाकर भुक्त आयु स्पष्ट जाना था, अब इसी तरह प्रश्नलग्न के द्वितीयेश के गुणांक से गणित क्रिया द्वारा प्रश्नकर्त्ता की भोग्य (बाकी) आयु को भी जाना जा सकता है। एतदर्थ पूर्वोक्त प्रकार से प्राप्त मध्यमायु को मनुष्य के परमायु मान १२० वर्ष, ५ दिन में से घटाने पर जो वर्षादि प्राप्त होंगे, वह भोग्य मध्यमायु होगी। इस आयु को द्वितीयेश के गुणांक से गुणा करके परमायु के दिनों ४३२०५ से भाग देकर जो दिनादि शेष

वचें, वही प्रश्नकर्त्ता की भोग्य आयु होगी।

उदाहरण। संवत् १९०८, शक १७७३, माघ शुक्ला अष्टमी, गुरुवार को ०।३० इष्टकाल पर किसी व्यक्ति ने प्रश्न किया। उस समय स्पष्टलग्न ९।२२।१८।६ थी। इस स्पष्टलग्न द्वारा उद्गतकलासमूहः० इत्यादि श्लोकोक्त रीति से आयु ९७।५।१०।२१।३५ आयी। इस आयु को परमायु के मान १२०।०।५ में से घटाने पर २२।६।२४।३८।२५ शेष रहा। मकर लग्न से द्वितीयेश शनि होता है, जिसका गुणांक ११ होता है। अतः अवशिष्ट आयु २२।६।२४।३८।२५ को ११ से गुणा किया तो २४८।३।१।२।३५ आया और फिर इसमें परमायुमान से भाग देने पर शेष ८।२।२१।२।३५ रहा। इसलिए प्रश्नकाल १९०८।-९।१८।१०।३० में ८।२।२१।२।३५ जोड़ने पर संवत् १९१७ की मेषार्कगत ६, सूर्योदय से ३ घटी ५ पल इष्टकाल तक प्रश्नकर्त्ता की आयु कहनी चाहिए।

अथ सम्प्रति सर्व-प्राणिनामायुरानयनम्

2-52 लग्नादादित्याद्वाप्यतिशय-वीर्ययुताद् ग्रहाद् वापि।
पूर्ववदायुः प्रवदेन् मतिमानिति सर्व-सत्त्वानाम्॥

अस्य व्याख्या। लग्नादिति। लग्नात् प्रश्न-कालीन-लग्नाद्, अथवा आदित्यात् तात्कालिक-सूर्याद्, अथवा अतिशय-वीर्ययुताद् ग्रहाद् वलिष्ठाद् ग्रहाद् इत्येवं सर्व-सत्त्वानां सर्व-प्राणिनां मतिमान् सुधीः पूर्ववदायुः प्रवदेत् कथयेत्। अर्थादुद्गत-कला-समूहमित्यत आरभ्य आदित्यं यः पुरागतो लग्नादादित्ये तदन्तं यत्कर्माभिहतं तल्लग्नात् कार्यं लग्नरूपं प्रकल्प्य वा तत्कर्तव्यमिति। इति नष्ट-जातकस्य चतुर्थ-प्रकारः।

इति श्रीमत्पण्डित-मुकुन्द-दैवज्ञ-संगृहीते नष्ट-जातके अमीरचन्द्र-संग्रहस्थ-युक्ति-प्रकरणं द्वितीयं समाप्तिमगमत्।

सभी प्राणियों की आयु का ज्ञान

प्रश्नकालीन लग्न से, तात्कालिक सूर्य से अथवा सर्वाधिक बली ग्रह से पूर्वोक्त रीति द्वारा आयु का साधन कर सभी प्राणियों की आयु

बतानी चाहिए। तात्पर्य यह है कि बुद्धिमान् दैवज्ञ को लग्न, स्पष्ट-सूर्य या सर्वाधिक वली ग्रह से पूर्वोक्त रीति से आयु का साधन करना चाहिए। इस प्रकार साधित आयु के मानों में से जो मान प्राणी की दिखाई पड़ने वाली आयु के अनुरूप हो, वही उसकी आयु का मान वताना चाहिए। यह नष्ट जातक का चौथा प्रकार हुआ।

इस प्रकार श्रीमान् पण्डित मुकुन्द दैवज्ञ द्वारा संग्रहीत ग्रन्थ नष्ट-जातक के अमीरचन्द्र-संग्रहस्थ युक्ति नामक द्वितीय प्रकरण की श्री शुकदेव चतुर्वेदी की भावार्थ-वोधिनी नामक हिन्दी टीका समाप्त हुई।

(३)

केरलशास्त्रीय-युक्ति-प्रकरणं

पिण्डानयनार्थम् अवर्गाद्येष्वङ्क-विन्यास-विधिः

3-1 रा-गा-वे-शा-त-स-ह्-धा अ-वर्गाद्याः क्रमादमी ।

अस्यार्थ । रेति । रकारेण द्वौ, गकारेण त्रयः, वकारेण चत्वारः, शकारेण पञ्च, तकारेण षट्, सकारेण सप्त, हकारेणाष्टौ, धकारेण नवेति ग्राह्याः । इहावर्गाद्याः क्रमादमी एतेङ्काः स्युः ।

अथेदानीं वर्ग-ज्ञानम्

अ-क-च-ट-त-प-य-श-वर्गा इति अस्यार्थः। अ इति। अ-कारेण अ-कारादीनां षोडश-स्वराणाम्-वर्गः प्रथमः। क-कारेण क-कारादीनां पञ्चानां क-वर्गो द्वितीयः। च-कारेण च-कारादीनां पञ्चानां च-वर्गस्तृतीयः। ट-कारेण ट-कारादीनां पञ्चानां ट-वर्गश्चतुर्थः। त-कारेण त-कारादीनां पञ्चानां त-वर्गः पञ्चमः। प-कारेण प-कारादीनां पञ्चानां प-वर्गः षष्ठः। य-कारेण य-कारादीनां चतुर्ण्णां य-वर्गः सप्तमः। श-कारेण श-कारादीनां चतुर्ण्णां श-वर्गोष्टम इति।

अस्य व्याख्या। फलमिति। अस्य व्याख्या सुगमा। अत्र विशेषमाह। यस्मिन् काले प्रष्टा दैवज्ञ-सन्निधावायातस्ततो दैवज्ञं पृच्छति तत्समये द्वादशाङ्गुल-शङ्कोर्यावत्यङ्गुलादिका छाया तद्वशेनेष्ट-कालानयनम्। ततो दिनमानं च साधयेदिति।

वर्णों के अंक

अवर्ग आदि के यथाक्रम २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ एवं ९ अंक होते हैं।

तात्पर्य यह है कि निम्नलिखित चक्र में ऊपर की पंक्तियों में अवर्ग के १६ स्वर और उनके नीचे की पंक्तियों में कवर्गादि के ५-५ तथा यवर्ग एवं शवर्ग के ४-४ वर्ण लिखना चाहिए। फिर इस चक्र के अवर्ग वर्णों के साथ यथाक्रम २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ एवं ९ संख्या लिखकर अग्रिम पंक्तियों में उसी क्रम से अग्रिम संख्याएं लिखनी चाहिए। इस प्रकार का वर्णों के अंक का वोधक चक्र यहां प्रस्तुत है :

वर्ग						
अवर्ग	अ२	आ३	इ४	ई५	उ६	ऊ७
		ऋ८	ॠ९	लृ१०	ॡ११	ए१२
	ऐ१३	ओ१४	औ१५	अं१६	अः१७	
कवर्ग	क३	ख४	ग५	घ६	ङ७	
चवर्ग	च४	छ५	ज६	झ७	ञ८	
टवर्ग	ट५	ठ६	ड७	ढ८	ण९	
तवर्ग	त६	थ७	द८	ध९	न१०	
पवर्ग	प७	फ८	ब९	भ१०	म११	
यवर्ग	य८	र९	ल१०	व११		
शवर्ग	श९	ष१०	स११	ह१२		

वर्गों का परिचय

अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग एवं शवर्ग ये ८ वर्ग होते हैं। अवर्ग में अकारादि १६ स्वर होते हैं; कवर्ग में क, ख, ग, घ, ङ; चवर्ग में च, छ, ज, झ, ञ; टवर्ग में ट, ठ, ड, ढ, ण; तवर्ग में त, थ, द, ध, न; पवर्ग में प, फ, व, भ, म; यवर्ग में य, र, ल, व; और शवर्ग में श, ष, स, ह। वर्गों में अवर्ग का १ अंक, कवर्ग का २, चवर्ग का ३, टवर्ग का ४, तवर्ग का ५, पवर्ग का ६, यवर्ग का ७ तथा शवर्ग का ८ अंक होता है। दक्षिणात्य दैवज्ञों में यह विशिष्ट अंक पद्धत्ति काफी लोकप्रिय है। प्रत्येक वर्ण का अपना अंक **'वर्णांक'** कहलाता है तथा प्रत्येक वर्ग के सभी अक्षरों के लिए यह एक-एक अंक दिया गया है, उसे 'वर्गांक' कहते हैं। यह वर्गांक चक्र इस प्रकार है—

अवर्ग—१ (सारे १६ अक्षरों के लिए)

कवर्ग—२
चवर्ग—३
टवर्ग—४
तवर्ग—५
पवर्ग—६
यवर्ग—७
शवर्ग—८

अथाधुना प्रष्टुः कर्तव्यता

3-2 **फलं पुष्पादि-संयुक्तं मुद्रां वै पञ्चविंशतिम् ।**
जैतेन्द्रियः स्वेष्टमर्प्यं दैवज्ञं पृच्छयेत्पुनः ।।

प्रश्नकर्ता का कर्तव्य

प्रश्नकर्ता दैवज्ञ को फल एवं पुष्प के साथ २५ मुद्राएं भेंट करके उनसे अपना अभीष्ट कहे और फिर अपने भावों पर नियन्त्रण रखता हुआ उसका उत्तर पूछे। दैवज्ञ भी जिस समय प्रश्नकर्ता उसके पास पहुंचे और प्रश्न करे, उस समय वह द्वादशांगुल शंकु की छाया से इष्टकाल का ज्ञान करे और फिर लग्न एवं दिनमान का साधन करे।

अथेदानीं प्रष्टा योग्य-कालं ज्ञात्वा ततः पुष्पादि-नामोच्चारणं कारये-दित्याह।

3-3 **प्रातःकाले वदेत्पुष्पं मध्याह्ने च फलं वदेत् ।**
सायंकाले नदीं ब्रूयाद् रात्रौ च देवतां वदेत् ।।

प्रातरिति। प्रातः प्रभात-काले पुष्पं-नाम वदेत्। मध्याह्ने मध्यं-दिने फलं फल-नाम वदेत्। सायं-काले सन्ध्या-काले नदीं सुरनिम्नगा-मुखां ब्रूयाद् वदेत्। रात्रौ देवता-नाम वदेत् कथयेदिति।

प्रश्नकर्ता किस पुष्प आदि का नाम किस समय ले? प्रश्नकर्ता को प्रातःकाल किसी फूल का, मध्याह्न के समय किसी फल का, सायंकाल किसी नदी का तथा रात्रि में किसी देवता का नाम लेना चाहिए।

अथ साम्प्रतं प्रष्टुर्विशेष-कर्तव्यम्।

3-4 **वृक्षं पुष्पं फलं वृक्षं बाल-यूनोः शिशोर्मुखात् ।**
श्रुत्वा चतुर्षु यामेषु चक्रं चोदाहृतिं द्विज ।।

वृक्षमिति। दिनस्य चतुर्षु यामेषु प्रहरेषु प्रष्टा बाल-यूनोः शिशोर्मुखात् क्रमेण वृक्षं, पुष्पं, फलं, वृक्षम् इत्येतेषां नामोच्चारणं श्रुत्वा तदा नष्ट-जन्मानयनं पृच्छेत्।

अथास्य स्पष्टीकरणं द्रष्टव्यम्। दिनस्य प्रथम-प्रहरे बाल-पुरुषाद् वृक्ष-नाम ग्राह्यम्। द्वितीय-प्रहरे तरुण-पुरुष-द्वारा पुष्प-नाम ग्राह्यम्।

तृतीय-प्रहरे पुरुष-द्वारा फल-नाम ग्राह्यम् । चतुर्थ-प्रहरे तु बाल-पुरुष-द्वारा वृक्ष-नाम ग्राह्यम् । हे द्विज ! हे मुने ! ततश्चक्रं वर्ण-वर्ग-बोधक-चक्रमुदाहृतिम् उदाहरणं च कुर्यादिति । ततश्च पृच्छा-काले पृच्छकेन यस्य पुष्प-फलादिकस्य नामोच्चारणं कृतं श्रुतं वा तद्वर्ण-वर्ग-प्रमाण-वशेन पिण्डानयनं कुर्यात् ।

इसके अतिरिक्त, प्रश्नकर्ता का एक कर्तव्य और भी है। दिन के चारों प्रहरों में बालक, किशोर, युवा एवं बालक के मुख से क्रमशः वृक्ष, पुष्प फल एवं वृक्ष का नाम सुनकर प्रश्नकर्ता को नष्ट-जातक का प्रश्न करना चाहिए ।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि प्रथम प्रहर में बालक के मुंह से किसी वृक्ष का नाम सुनकर, द्वितीय प्रहर में किशोर के मुंह से पुष्प का नाम सुनकर, तृतीय प्रहर में युवक के मुंह से फल का नाम सुनकर तथा चतुर्थ प्रहर में बालक के मुंह से वृक्ष का नाम सुनकर नष्ट-जातक का प्रश्न करना चाहिए । हे मुनि, उसके बाद वर्ण एवं वर्ग के बोधक चक्रों को देखकर पिण्ड बना लेना चाहिए ।

तस्य चायं विधिःगर्ग मनोरमायाम्—

3-5 वर्ग-वर्ण-प्रमाणं च स-स्वरं ताडितं मिथः ।
पिण्ड-संज्ञा भवेत्तस्य यथाभागैस्तु कल्पना ॥

अस्यार्थः । वर्गेति । स-स्वरं स्वर-सहितं वर्ग-प्रमाणं च मिथः परस्परं ताडितं गुणितं ततस्तदैक्यं कार्यम् । तस्य पिण्ड-संज्ञा पिण्ड-नाम भवेत् । ततो यथाभागैः कल्पना कर्तव्याः । अत्र तु विशेषमाह । यत्र वर्गार्थे व्यञ्जनस्य प्राप्तिर्न स्यात् तत्स्थाने स्वरस्याप्यङ्कार्थे वर्गो ग्राह्यः । इति केरल-मते प्रसिद्धम् । अत्र मध्यवर्तिनां स्वराणां वर्गाङ्को न ग्राह्यः । स्वरस्य पृथक् तु ग्राह्यः । वर्णा (र्गा) दिष्वङ्कान् कादीन् जानीयात् । स्वराद्ये तु अर्ध-मात्रिकोपि ज्ञेयः । अत्र स्वर-रहितः ककारादि-वर्णे हल् इत्यभिधीयते । स तु अर्ध-मात्रिको ज्ञेयः । इत्येतत्सर्वमुदाहरणे द्रष्टव्यम् ।

अत्र पिण्डानयनार्थमुदाहरणम् ।
यत्र पृच्छकेन फल-नामसु श्रीफलम् इत्युक्तं तत्रस्थेषु शस्य ९, रस्य ९, ईकारस्य ५, फस्य ८, अस्य २, लस्य १०, अस्य २, इत्येषां योगः ४५, इदं वर्ण-प्रमाणं ज्ञेयम् । अथ च शस्य ८, रस्य ७, फस्य ६, लस्य ७, इत्येषां योगः २८, इदं वर्ग-प्रमाणं ज्ञेयम् । इदं पूर्वागतेन वर्ण-प्रमाणेन (४५) गुणितं जातं १२६० अस्य पिण्ड-संज्ञा ज्ञेया ।

अन्यदुदाहरणम् । यत्र प्रष्टा फल-नामसु आम्रम् इत्युक्तं यत्र आकारस्य ३, अत्र मकारो हल् तेनार्ध-मात्रायाः १, मस्य ११, रस्य ९, अस्य २, इत्येषां योगः २६, इदं वर्ण-प्रमाणं ज्ञेयम् । अथ आकारस्य १, मस्य ६, रस्य ७, इत्येषां योगः १४, इदं वर्ग-प्रमाणं ज्ञेयम् । इदं पूर्वागतेन वर्ण-प्रमाणेन (२६) गुणितं जातं ३६४ अस्य पिण्ड-संज्ञा ज्ञेया । एवमन्यत्र पिण्डानयनं कार्यम् ।

पिण्डानयन की विधि

स्वर सहित वर्गांक एवं वर्णांकों को जोड़कर उनको आपस में गुणा करने से प्राप्त गुणनफल पिण्ड कहलाता है । फिर उसमें यथोक्त स्वरों से भाग देकर फल की कल्पना करनी चाहिए । केरल शास्त्र का यह सिद्धांत है कि जहां वर्गांक का ज्ञान करते समय नाम के प्रारम्भ में व्यञ्जन न मिलता हो वहां स्वर से ही वर्गांक लेना चाहिए । किन्तु मध्यवर्ती स्वरों का वर्गांक नहीं लिया जाता, प्रत्युत केवल व्यञ्जनों के वर्णांक लिये जाते हैं । वर्णांक का ज्ञान करते समय तो समस्त स्वर-व्यञ्जनों को लेना चाहिए । इस प्रकार एक ही नाम से वर्गांक एवं वर्णांक दोनों निकालकर पहले वर्गांकों तथा वर्णांकों का पृथक्-पृथक् योग करना चाहिए और फिर उनका आपस में गुणा करके पिण्ड वनाना चाहिए ।

पिण्डानयन का उदाहरण । किसी प्रश्नकर्ता ने अपने अज्ञात जन्मकाल की जानकारी हेतु प्रश्न करते समय श्रीफल नामक फल का नाम लिया । यहां श्रीफल शब्द के आदि में स्वर नहीं है । अतः वर्गांक जानने के लिए इस शब्द के व्यञ्जनों (श्, र्, फ् एवं ल्) के वर्गांक, क्रमशः ८, ७, ६ एवं ७ लिये जाएं जिनका योग २८ होगा । वर्णांक

जानने के लिए श्रीफल शब्द के समस्त स्वर-व्यञ्जनों के अंकों का योग किया, श् ९, र् ९, ई ५, फ् ८, अ २, ल् १० एवं अ २। फिर वर्गांक २८ एवं वर्णांक ४५ का आपस में गुणा करने से गुणनफल १२६० होगा और यही संख्या पिण्ड कही जाती है।

पिण्डानयन का एक अन्य उदाहरण। किसी अन्य व्यक्ति ने अपने अज्ञात जन्मसमय के निर्धारण के लिए निवेदन करते समय आम्र का नाम लिया। यहां आम्र शब्द में पहला अक्षर आ स्वर है। अतः वर्गांक निकालने के लिए ग्राह्य है। पूर्वोक्त रीति से शब्द के प्रथमाक्षर स्वर तथा व्यञ्जनों से वर्गांक लिए गये, आ १, म् ६ एवं र् ७, और इनका योग हुआ १४। वर्णांक निकालने के लिए इस शब्द के अंकों, आ ३, म् (हल् है अतः उसकी अर्धमात्रा) १, म् ११, र् ९ एवं अ २ का योग २६ हुआ। फिर वर्गांकों एवं वर्णांकों का जो गुणनफल, १४×२६=३६४ होगा, वही पिंड माना जाएगा।

अथेहागत-पिण्डस्य स्पष्टीकरणं प्रदर्श्यते। ततो निज-दिन-मानं त्रिधा विभाज्यम्। आद्ये भागे प्रश्नश्चेत् तदा यथास्थितमेव पिण्डम्। द्वितीय-भागे सैकम्, तृतीय-भागे स-द्वयम्। पुनरेकैकस्य त्रि-विभागः कर्तव्यः। तत्र त्वाद्ये तथैव यथास्थितमेव पिण्डम्। आद्य-द्वितीये सैकम्। आद्य-तृतीये स-द्वयम्। पुनर्द्वितीयाद्ये सैकम्। द्वितीय-द्वितीये सैकम्। द्वितीय-तृतीये स-द्वयम्। पुनस्तृतीयाद्ये स-द्वयम्। तृतीय-द्वितीये सैकम्। तृतीयः तृतीये स-द्वयम्। सूर्योदयास्तयोः स-त्रिकम्। रात्रौ हीनं दिने युक्तं कार्यम्। इत्यनया रीत्या पिण्डस्य स्पष्टीकरणं कुर्यात्।

इस प्रकार प्राप्त हुए पिण्ड का स्पष्टीकरण प्रस्तुत है। जिस दिन प्रश्न किया जाए, उस दिन के दिनमान में ३ का भाग देना चाहिए। यदि प्रश्न पहले भाग में किया जाए तो पिण्ड ज्यों का त्यों रहता है। यदि दूसरे भाग में प्रश्न किया जाए तो पिण्ड में एक जोड़ देना चाहिए। और यदि तीसरे भाग में प्रश्न किया जाय तो पिण्ड में दो जोड़ना चाहिए। और फिर उक्त भागों को भी ३-३ भागों में बांट लेना चाहिए। यदि पहले भाग के प्रथम तृतीयांश में प्रश्न किया जाय तो पिण्ड ज्यों का त्यों रहता है। यदि पहले भाग के द्वितीय तृतीयांश में प्रश्न किया जाय तो पिण्ड में एक, और यदि पहले भाग के तृतीय

तृतीयांश में प्रश्न किया जाय तो पिण्ड में २ जोड़ना चाहिए। दूसरे भाग के प्रथम तृतीयांश में प्रश्न करने पर पिण्ड में १, द्वितीय तृतीयांश में प्रश्न करने पर १ तथा तृतीय तृतीयांश में प्रश्न करने पर पिण्ड में २ जोड़ना चाहिए। इसी प्रकार दिनमान के तीसरे भाग के प्रथम तृतीयांश में प्रश्न किया जाय तो पिण्ड में २, द्वितीय तृतीयांश में प्रश्न किया जाय तो १ और तृतीय तृतीयांश में प्रश्न किया जाय तो पिण्ड में २ जोड़ना चाहिए। सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय प्रश्न किया जाय तो पिण्ड में ३ जोड़ना चाहिए।

जिस प्रकार दिन के तीन भागों में तथा उनके तृतीयांशों में पिण्ड में पूर्वोक्त संख्याएं जोड़ी जातीं हैं उसी प्रकार रात्रि में प्रश्न किये जाने पर भी रात्रि के उसी प्रकार भाग कर पिण्ड में पूर्वोक्त संख्याएं घटानी चाहिए। इस प्रकार पिण्ड को स्पष्ट करना चाहिए।

अथेदानीं स्पष्ट-पिण्डतो गत-वर्षानयनम्

3-6 धातु-मूलादिक-ज्ञाने जीव-प्रश्नो यदागतः।
तदा शेषं च मिश्रं च पिण्डे संयोज्य यत्नतः॥

3-7 शतेन विभजेत् पिण्डं शेषांकैर्गत-वर्षकम्।

अस्यार्थः। धात्विति, शतेनेति च। धातु-मूल-जीव प्रभृतिषु ज्ञातेषु यदा जीव-प्रश्न आगतस्तदा वक्ष्यमाण-विधिना गत-वर्षमानयेत्। शेषं सुगमम्।

पिण्ड से गत वर्ष का ज्ञान

धातु, मूल एवं जीव के प्रश्न में जब कभी जीवप्रश्न आता हो, तब लब्धि को पिण्ड में जोड़कर १०० का भाग देना चाहिए। यहां जो शेष बचता है वह प्रश्नकर्ता के गत वर्षों की संख्या होती है।

अथ साम्प्रतं तस्मात् पिण्डतो गत-मासाद्यानयनम्

3-8 पुनः पिण्डेपि संयोज्य लब्धाङ्कं मिश्रितं तथा।
हरेद् द्वादशभिः शेषाद् गत-मासो भवेद् ध्रुवम्॥

3-9 एवं पिण्डेपि संयोज्य लब्धाङ्कं मिश्रितं तथा ।
द्वाभ्यां विभज्य, शेषेण शुक्ल-कृष्णौ प्रकीर्तितौ ॥

3-10 पूर्ववत् स-कलां कृत्वा क्रियां पिण्डे विचक्षणः ।
तिथ्यानयन-काले वै हरेत् पञ्चदशेन वै ॥

3-11 वारार्थे सप्तभिर्भाज्यं, सप्तविंशतिभिर्भजेत् ।
नक्षत्रानयनार्थं वै घट्यर्थे षष्टिभिर्भजेत् ॥

3-12 पलादिके तथैवेह, राश्यर्थे रविभिः, पुनः ।
लग्ने ज्ञानेर्थे, योगार्थे सप्तविंशतिभिस्तथा ॥

3-13 विभज्य, तत्र शेषांकैर् नष्ट-जन्म-विनिर्णयः ।
ततः पिण्डेषु संयोज्यं लब्धं मिश्रं विचक्षणः ॥

3-14 ग्रह-राशि-परिज्ञाने विभज्य रविणा सदा ।
सूर्यादि-युक्त-राशीनां शेषांकेन फलं वदेत् ॥

एषां व्याख्या । पुनरिति, एवमिति, पूर्ववदिति, वारार्थ इति, पलादिक इति, विभज्येति, ग्रह राशीति च । एषां व्याख्या तु सुगमा । इति । अत्र विशेषः । मास-पक्ष-तिथि-वार-नक्षत्रेष्ट-घटी-पल-राशि-लग्न-योगा इत्येतेषां क्रमेण १२।२।१५।७।२७।६०।६०।१२।१२।२७(२८) इमे भाजकाङ्काः स्युः । इहागतं पिण्डं स्व-स्व-भाजकांकैः पृथग् विभज्य तदावशिष्ट-समा मासादयो ज्ञेयाः ।

पिण्ड से गत मास आदि का ज्ञान

फिर पिण्ड में लब्धि जोड़कर १२ का भाग देना चाहिए । यहां शेष से गत मास का ज्ञान करना चाहिए । इसी प्रकार पिण्ड में पुनः पूर्वप्राप्त लब्धि को जोड़कर २ का भाग देने से १ शेष बचे तो शुक्लपक्ष और कुछ शेष न बचे तो कृष्णपक्ष कहना चाहिए ।

तत्पश्चात् पिण्ड में पूर्वोक्त रीति से लब्धि जोड़कर १५ का भाग देने से शेषतुल्य तिथि, ७ का भाग देने से शेषतुल्य वार तथा २७ का भाग देने से शेषतुल्य नक्षत्र होता है । इष्ट घटी-पलों का ज्ञान करने के लिए भी पहले की तरह पिण्ड में लब्धि जोड़कर ६० का भाग देकर शेषतुल्य घटी-पलों का ज्ञान करना चाहिए ।

फिर राशि एवं लग्न का ज्ञान करने के लिए लब्धियुक्त पिण्ड में १२ का भाग देना चाहिए। तथा, योग का ज्ञान करने के लिए २७(२८) का भाग देना चाहिए। यहां सर्वत्र पिण्ड में लब्धियों को जोड़ना चाहिए तथा सर्वत्र शेष से ही वर्ष आदि का निश्चय कर नष्ट-जातक का निर्णय करना चाहिए।

अत्रोदाहरणम्। इह खलु दिन-मानं ३६, स्वेष्टम् २५। ततो दिनमानं ३६ त्रिभिर्भक्त-लब्धिः १२। स्वेष्टस्य भागं लोकयेत्। भानु (१२)-घटी-पर्यन्तं प्रथमो भागः। वेदाक्षि (२४)-पर्यन्तं द्वितयो भागः। अत्र स्वेष्टं २५, लब्धिः ८ तृतीयभागे वर्तते। अत्र क्षेपकः, तृतीये स-द्वयम् इह पिण्डे ३६४ क्षेपक (२)-युक्तं जातं ३६६ स्पष्ट-पिण्डम्। अथवा द्वितीये-पिंडे १२६० न क्षेपक-युक्तं, यथागतमेव जातं स्पष्ट-पिंडं १२६०। उदाहरणं यथा चैकं तथा शतं जानीयात्।

अथातो रसरसाग्न्यु (३६६) दाहरणं प्रदर्श्यंते। संस्कृत-पिण्डं ३६६, प्रथमतो धातु-मूल-जीवानामर्थे त्रिभिर्विभाज्यं लब्धं १२२, शेषं०, तेन जीवस्याप्तिः। लब्धं १२२ पिण्डे ३६६ युक्तं ४८८ शत-हृतं लब्धं ४, शेषं ८८ गताब्दाः। पुनः लब्ध-युक्त-पिण्डे ४८८ लब्धं ४ युक्तं ४९२ द्वादश (१२) भक्तं, ४१ लब्धं शेषं शून्यम् अर्थात् १२ मासाः। पुनर्लब्धयुक्त-पिण्डे ४९२ लब्धं ४१ युक्तं ५३३ द्वि-भक्तं २६६ लब्धं शेषं १ पक्षः। ततो लब्ध-युक्त-पिण्डे ५३३ लब्धं २६६ युक्तं ७९९ पञ्चेन्दु-भक्तं ५३ लब्धं शेषं ४ तिथिः। लब्ध-युक्त-पिण्डे ७९९ लब्धं ५३ युक्तं ५२ सप्त-भक्तं लब्धं १२१ शेषं ५ वाराः। ततो लब्ध-युक्त-पिण्डं ८५२ लब्धेन १४१ युक्तं ९९३ सप्त-विंशत्या भक्तं ३६ लब्धं शेषं २१ नक्षत्राणि। ततो लब्ध-युक्तं पिण्डं ९९३ लब्धेन ३६ युक्तं १०२९ षष्टि-हृतं १७ लब्धं शेषं ९ घट्यः। ततो लब्ध-युक्त-पिंडं १०२९ लब्धेन १७ युक्तं १०४६ पुनः षष्टि-भक्तं १७ लब्धं शेषं २६ पलानि। ततो लब्ध-युक्त-पिण्डं १०४६ लब्धेन १७ युक्तं १०६३ द्वादश-भक्तं ८८ लब्धं शेषं ७ राशयः। ततो लब्ध-युक्तं पिण्डं १०६३ लब्धेन ८८ युक्तं ११४१ पुनर्द्वादश-भक्तं ९५ लब्धं शेषं ११ लग्नम्। ततो लब्ध-युक्त-पिण्डं ११४१ लब्धेन ६५ युक्तं १२०६ सप्तविंशति-भक्तं लब्धं ४४ शेषं १८ योगा विष्कम्भादयो ज्ञेयाः। एवं प्रथम-पिण्डं १२६०

धातु-मूल-जीवानामर्थेपिण्डं त्रिभिर्भक्तं लब्धं ४२० शेपं० जीवस्याप्ति। पिण्डं १२६० लब्धेन ४२० युक्तं १६८० अन्यत् सर्वं पूर्ववद् बोध्यमिति।

अव सारे विषय को उदाहरणों से समझते हैं। प्रश्नकालीन दिनमान ३६ तथा इष्टकाल २५ घटी मान लिया जाए, तो पूर्वोक्त पिण्ड ३६४ का स्पष्टीकरण अग्रलिखित होगा। यहां दिनमान का तृतीय भाग १२ घटी है। अतः सूर्योदय से १२ घटी तक पहला भाग, तथा २४ घटी तक दूसरा भाग रहा है। किन्तु प्रश्नकालीन इष्टकाल २५ घटी है, इसलिए यहां प्रश्न दिन के तीसरे भाग में किया गया। और तीसरे भाग का क्षेपक २ होता है। अतः पूर्वागत पिण्ड अर्थात् ३६४ में २ जोड़ने पर स्पष्टपिण्ड ३६६ हुआ। पिंड से गत मास आदि के ज्ञान का यह एक उदाहरण हुआ। इसी प्रकार के अन्य सैकड़ों उदाहरण और भी दिये जा सकते हैं।

धातु, मूल या जीव का निश्चय करने के लिए सर्वप्रथम स्पष्टपिंड ३६६ में ३ का भाग दिया तो लब्धि १२२ तथा शेष शून्य रहा है। अतः यह जीवप्रश्न है।

अव गतवर्षों को जानने के लिए पिंड ३६६ में उक्त लब्धि को जोड़ा, ३६६+१२२=४८८, फिर उसमें १०० का भाग देने से लब्धि ४ तथा शेष ८८ रहा। अतः यहां शेषतुल्य अर्थात् ८८ गतवर्ष संख्या हुई। मास का ज्ञान करने के लिए पिंड ४८८ में लब्धि ४ को जोड़ा तो ४९२ हुआ। फिर इसमें १२ का भाग देने से लब्धि ४१ तथा शेष शून्य हुआ। इसलिए यहां शेष (१२) तुल्य मास अर्थात् फाल्गुन मास में जन्म बताना चाहिए।

पक्ष जानने के लिये पिण्ड ४९२ में लब्धि ४१ जोड़कर योगफल ५३३ में २ का भाग दिया, तो लब्धि २६६ तथा शेष १ रहा। अतः शुक्लपक्ष में जन्म हुआ माना जाएगा।

तिथि का ज्ञान करने के लिए पिण्ड ५३३ में लब्धि २६६ जोड़कर, योगफल ७९९ में १५ का भाग देने पर लब्धि ५३ तथा शेष ४ रहा। अतः चतुर्थी तिथि में जन्म हुआ कहना होगा।

वार जानने के लिए इस पिण्ड ७९९ में लब्धि ५३ जोड़कर, योगफल ८५२ में ७ का भाग दिया, तो लब्धि १२१ तथा शेष ५ रहा। अतः गुरुवार को जन्म हुआ कहा जाएगा।

नक्षत्र का ज्ञान करने के लिए उक्त पिंड ८५२ में लब्धि १४१ जोड़कर, योगफल ९९३ में २७ का भाग दिया, तो लब्धि ३६ तथा शेष २१ रहा। अतः उत्तराषाढ नक्षत्र जन्मनक्षत्र हुआ कहा जाएगा। इष्टकाल के पल जानने के लिए उक्त पिण्ड ९९३ में उक्त लब्धि ३६ को जोड़कर योगफल १०२९ में ६० का भाग दिया, तो लब्धि १७ तथा शेष २६ रहा। इस प्रकार जन्मकालीन इष्टकाल ९ घटी तथा २६ पल सिद्ध हुआ।

जन्मराशि का ज्ञान करने के लिए इस पिण्ड १०४६ में लब्धि १७ को जोड़कर योगफल १०६३ में १२ का भाग दिया। यहां लब्धि ८८ तथा शेष ७ रहा। इसलिए जन्मराशि तुला हुई।

फिर जन्मलग्न जानने के लिए उक्त पिण्ड १०६३ में लब्धि ८८ जोड़कर योगफल ११५१ में १२ का भाग दिया, तो लब्धि ९५ तथा शेष ११ रहा। अतः कुम्भ लग्न में जन्म हुआ।

और फिर योग का ज्ञान करने के लिए पिण्ड ११४१ में लब्धि ६५ जोड़कर योगफल १२०६ में २७ का भाग दिया, तो लब्धि ४४ तथा शेष १८ रहा। इसलिए जन्मकालीन योग वरीयान् हुआ। इस प्रकार सर्वत्र पिण्ड में लब्धि जोड़कर अपने-अपने विकल्प से भाग देकर शेष-तुल्य वर्ष आदि का ज्ञान करना चाहिए।

अथेदानीं प्रकारान्तरेण नष्ट-जातकानयनम्

ततः पूर्वं पृच्छा-काले पृच्छक-मुख-निःसृता ये वर्णास्तेषामङ्क-ज्ञानमाह।

3-15 अ१६-कौ५ च५-टौ५ त५-पौ५ यः ४ शः ४ प्रश्न-काले तु चिन्तयेत्।
यस्य वर्णस्य योङ्कः स्याद् एकीकृत्य च तान् पुनः॥

इमे उक्ता वर्णांकाः प्रश्न-काले चिन्तनीयाः, ते सर्वे चक्रतो ज्ञातव्याः।

3-16 **श्रेणी प्रश्नाक्षराणां जलनिधि-गुणिता नाम-वर्णेन युक्ता**
दन्ताष्टौ लोकपाला रवि-धृति-मुनिभिर्विंशतिर्मूर्छनाभिः ।
संवन्मासाश्च पक्षौ तिथि-भ-विलग्नं वार-राशी क्रमेण
संगुण्यं पूर्व-पूर्वं क्रम-पद-गुणितं जातकं नष्ट-संज्ञम् ॥

अस्यार्थः । श्रेणीति । पृच्छाकाले पृच्छक-मुख-निःसृता ये वर्णास्तेषा-मक्षराणां या श्रेणी पंक्तिः सा जलनिधि-गुणिता चतुर्भिर्गुणिता कार्या । ततो नाम-वर्णेन प्रष्टुर्यानि नामाक्षराणि तैर्युक्ता कार्या । एषा अष्टासु स्थानेषु स्थाप्या । ततः संवत्, मासाः, पक्षौ, तिथयो, भानि, विलग्नानि, वारा, राशय, इत्येतेषां क्रमेण दन्ता(३२), अष्टौ(८), लोकपाला (१६), रवयो(१२)। धृतिर्(१८), मुनयो(७), विंशतिर्(२०), मूर्छना(२१) इत्यादयो वत्सरादीनां भाजकाङ्का ज्ञेयाः । अथ १२०।१२।२।१५।२७।१२।७।१२ इति क्रमेण संवत्सरादीनां भाजकाङ्का ज्ञेयाः । इहाष्टासु स्थानेषु स्थापिताः पंक्तयः पूर्व-पूर्वं निज-निज-गुणकैः संगुण्यं संगुणिताः, अर्थात् क्रम-पद-गुणितं पद-क्रमेण गुणिताः, ततः फलाक्षरैर्युक्ताः स्व-स्वभाजकांकैर्भाजिताः कार्याः । तदा लब्धं त्याज्यं प्रयोजनाभावात् । शेषं प्रष्टुर्वर्षादिकं ज्ञेयमित्येवं नष्ट-संज्ञं जातकं भवेत् ।

नष्ट-जातक के ज्ञान की द्वितीय रीति

इस रीति के ज्ञान से पूर्व उससे संवद्ध वर्णांक-वोधक चक्र द्रष्टव्य है :

स्वर
अ१ आ२ इ३ ई४
उ५ ऊ६ ऋ७ ॠ८
लृ९ ॡ१० ए११ ऐ१२
ओ१३ औ१४ अं१५ अः१६
व्यञ्जन
क१ ख२ ग३ घ४ ङ५
च१ छ२ ज३ झ४ ञ५
ट१ ठ२ ड३ ढ४ ण५
त१ थ२ द३ ध४ न५
प१ फ२ व३ भ४ म५

प्रश्न करते समय प्रश्नकर्ता द्वारा उच्चारित शब्दों के अंक जोड़कर योगफल को ४ से गुणा कर उसमें प्रश्नकर्ता के नाम के अक्षरों की संख्या जोड़नी चाहिए। फिर इस संख्या को पृथक्-पृथक् ८ स्थानों पर लिखकर यथाक्रम ३२, ८, १६ १२, १८, ७, २० एवं २१ से गुणा करके सर्वत्र फल के अक्षरों की संख्या जोड़कर उनमें क्रमशः १२०,

य१ र२ ल३ व४	१२, २, १५, २७, १२, ७ एवं १२ का
श१ ष२ स३ ह४	भाग देना चाहिए।

यहां सब स्थानों पर बचने वाला शेष यथाक्रम प्रश्नकर्ता का जन्म-संवत्, मास, पक्ष, तिथि, नक्षत्र, लग्न, वार एवं राशि होता है।

अथास्योदाहरणात् पूर्वं प्रश्नकाले प्रष्टुः कर्तव्यतामाह ।

3-17 वृक्षं पुष्पं फलं वृक्षं बाल-यूनोः शिशोर्मुखात् ।
श्रुत्वा चतुर्षु यामेषु चक्रं चोदाहृतिं द्विज ॥

अस्यार्थः । प्रथम-प्रहरे बाल-पुरुष-मुखाद् वृक्ष-नाम ग्राह्यम् । द्वितीय-प्रहरे तरुण-पुरुष-मुखात् पुष्प-नाम ग्राह्यम् । तृतीय-प्रहरेपि तरुण-पुरुष-मुखात् फल-नाम ग्राह्यम् । चतुर्थ-प्रहरे बाल-पुरुष-मुखाद् वृक्ष-नाम ग्राह्यम् । इत्येवं श्रुत्वा दैवज्ञः तेषां प्रश्नाक्षराणां या श्रेणी तया श्रेणी-प्रश्नाक्षराणामित्युक्त-विधिना प्रष्टुर्वर्षादिकमानयेत् । इति । भो द्विज विद्वन् ! अत्र चक्रं वर्णांक-बोधक-चक्रं ततं उदाहृतिमुदा-हरणं च कुरु इति शेषः ।

अस्योदाहरणम् । शके १६६४ श्री-कमलनयन-मिश्रेण प्रश्नः कृतः । तेन फलस्य नाम गृहीतं नारिकेरम् । तत्र नकारस्य ५, तस्याकारस्य २, रेफस्य २, इकारस्य ३, ककारस्य १, एकारस्य ११द्वितीय-रेफस्य २, अकारस्य १, एषां योगे कृते जाता प्रश्नाक्षराणां श्रेणी २७ । इयं २७ चतुर्भिर्गुणिता जाता १०८ प्रष्टुर्नामाक्षरैः कमलनयन इत्येत-त्तुल्याक्षरैः षड्भिर्युक्ता जाता पंक्तिः ११४ । एषा अष्टसु स्थानेषु स्थाप्या ।

तत एकत्र द्वात्रिंशता गुणिता ३६४८, फलाक्षरैः नारिकेर इति चतु-र्भिरक्षरैर्युक्ता ३६५२ विंशत्यधिक-शतेन भक्ता लब्धं ३० त्याज्यं प्रयोजनाभावात् । शेषं ५२ प्रश्नकर्तुर्वयोनुमानेपि ५२ । अनेन वर्त-मान-शकः १६६४ हीनः कृतः १६१२ अस्मिन् शके प्रष्टुर्जन्म । पुनः सा द्वि-ष्ठा ११४, अष्टभिर्गुणिता जाता ९१२, फलाक्षरै (४) र्युक्ता ९१६, द्वादशभिर्भक्ता लब्धं ७६, शेषं ४, वैशाखतश्चतुर्थः श्रावणः । पुनः सा त्रि-ष्ठा ११४, लोकपालै (१६) र्गुणिता १८२४, फलाक्षरै (४) र्युक्ता १८२८, पक्ष (२)-भक्ता लब्धं ९१४, शेषं ० शुक्ल-पक्षतो द्वितीयः

कृष्णपक्षः। पुनः सा चतुः-स्था ११४, रविभि (१२)र्गुणिता १३६८। फलाक्षरं नात्र योजयेत्। तिथि-भक्ता लब्धं ९१, शेषं ३ भाजके १५ शेषेण ३ गत-तिथिस्तृतीया। वर्तमान-तिथिः श्रावण-कृष्ण-चतुर्थी। पुनः सा ११४ धृत्या (१८) गुणिता २०५२, फलाक्षर (४)-युक्ता २०५६, भ (२७)-भक्ता लब्धं ७६, शेषं ४, गत नक्षत्रं रोहिणी, वर्तमानं मृगशिरो नक्षत्रम्। पुनः सा ११४ मुनिभि (७) र्गुणिता ७९८। फलाक्षरमत्रापि न योजयेत्। द्वादशभिर्भक्ता लब्धं ६६, शेषं ६, मेषतः कन्या-लग्नं गतं, वर्तमानं तुला-लग्नम्। पुनः सा ११४ विंशति-गुणिता २२८०। अत्रापि फलाक्षरं न योजयेत्। ततः सैका २२८१, सप्त-भक्ता लब्धं ३२५, शेषं ६, रवि-क्रमेण शुक्रो गत-वारो, वर्तमानः शनिवारः। पुनः साष्टम-स्थान-स्थिता ११४, एकविंशत्या गुणिता २३९४, फलाक्षर(४)-युक्ता २३९८, राशिभि (१२) र्भक्ता लब्धं १९९, शेषं १०, तेन गत-राशिर्मकरो, जन्म-राशिश्च कुम्भ इति।

इस रीति का उदाहरण देने से पूर्व प्रश्नकर्ता का कर्तव्य वताना आवश्यक है जिसका संकेत, उसकी विभिन्न आस्थाओं के अनुसार अग्रलिखित है।

दिन के प्रथम प्रहर में प्रश्न किया जा रहा हो तो बालक प्रश्नकर्ता को चाहिए कि वह किसी वृक्ष का नाम ले। द्वितीय प्रहर में तरुण प्रश्न-कर्ता किसी पुष्प का नाम ले। तृतीय प्रहर में भी तरुण पुरुष किसी फल का नाम ले। तृतीय प्रहर में वालक प्रश्नकर्ता किसी वृक्ष का नाम ले।

अव इस रीति का उदाहरण देखिए। श्री कमलनयन ने नष्ट-जातक के पुनर्निर्धारण हेतु प्रश्न करते समय नारिकेर फल का नाम लिया। नारिकेर शब्द के अक्षरों की संख्या इस प्रकार है : न् ५, आ २, र् २ इ ३, क् १, ए ११, र् २, एवं अ १। इन प्रश्नाक्षरों की संख्या का योग २७ हुआ। फिर इस योग को ४ से गुणा किया, १०८ हुआ। इसमें कमल-नयन नाम के अक्षरों की संख्या ६ जोड़ने से ११४ हुआ। इस संख्या को ८ स्थानों पर लिख दिया जाय।

प्रथम स्थान पर इस संख्या को ३२ से को गुणा किया तो ३६४८ हुआ। इसमें फल के अक्षरों की संख्या जोड़ दी (३६४८+४=३६५२)। फिर इसमें १२० से भाग देने पर लब्धि ३० हुई तथा शेष ५२ वचा। अत: प्रश्नकर्ता की आयु ५२ वर्ष की हुई।

दूसरे स्थान पर पूर्वोक्त संख्या ११४ को ८ से गुणा कर उसमें फलाक्षरों की संख्या अर्थात् ४ जोड़ दी, तो (११४×८+४=)९१६ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से ४ शेष बचा। इसलिए वैशाख से चौथे मास श्रावण मास में प्रश्नकर्ता का जन्म कहना चाहिए।

तीसरे स्थान पर लिखी उक्त संख्या ११४ को १६ से गुणा कर उसमें फलाक्षर संख्या जोड़ने पर(११४×१६+४=)१८२८ हुआ। इसमें २ का भाग देने से शेष शून्य रहा। अत: शुक्लपक्ष से दूसरे पक्ष अर्थात् कृष्ण पक्ष में जन्म वताना चाहिए।

चौथे स्थान पर लिखी उक्त संख्या ११४ को १२ से गुणा कर उसमें फलाक्षर संख्या ४ नहीं जोड़ी, तो १३६८ हुआ। इसमें १५ का भाग देने से शेष ३ वचा। अत: तृतीया तिथि गत-तिथि तथा चतुर्थी जन्म-तिथि हुई।

पांचवे स्थान पर उक्त संख्या ११४ को १८ से गुणा कर उसमें फलाक्षर संख्या ४ जोड़ने से (११४×१८+४=) २०५६ हुआ। इसमें २७ का भाग देने पर शेष ४ वचा। इसलिए रोहिणी नक्षत्र गतनक्षत्र तथा मृगशीर्ष जन्मनक्षत्र हुआ।

छठे स्थान पर उक्त संख्या ११४ को ७ से गुणा किया तो (११४×७=) ७९८ हुआ। यहाँ 'फलाक्षरमत्रापि न योजयेत्' इस नियम के अनुसार फलाक्षरों की संख्या नहीं जोड़ी जाएगी। तथा, उक्त गुणनफल में १२ का भाग दिया तो शेष ६ वचा। अत: कन्या गतलग्न तथा तुला जन्मलग्न हुई।

सातवें स्थान पर ११४ को २० से गुणा किया तो (११४×२०=) २२८० हुआ। यहां भी 'अत्रापि फलाक्षरं न योजयेत्' के अनुसार

फलाक्षरों को नहीं जोड़ा। और उक्त गुणनफल में ७ का भाग दिया तो शेष ६ बचा। इसलिए शुक्र गतवार तथा शनि जन्मलग्न का वार हुआ।

इसी प्रकार आठवें स्थान पर लिखी उक्त संख्या ११४ को २१ से गुणा कर उसमें पुनरपि फलाक्षरों को जोड़ दिया तो (११४×२१+४)=२३९८ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष १० बचा। अतः मकर गतराशि तथा कुम्भ जन्मराशि हुई।

अथ वा पाठान्तरम्

3-18 **श्रेणी प्रश्नाक्षराणां जल-निधि-गुणिता नाम-वर्णेन युक्ता**
दन्ताष्टौ लोकपाला रवि-धृति-मुनिभिर्विंशता मूर्छनाभिः।
संवन्मासाश्च पक्षौ तिथिरथ भ-लग्नं राशि-वाराः क्रमेण
लभ्यन्ते पूर्व-पूर्वं क्रम-पद-गुणितं जातके नष्ट-संज्ञे॥

अस्यार्थः। प्रश्न-फलाक्षराणां चक्र-स्थानामंकानां पंक्तिमेकीकृत्य प्रष्टुर्नामाक्षराणां वर्ण-वर्गप्रमाणांकैः सहितां कृत्वा पिण्डं भवेत्। तदेकत्र लिखेत्।

ततोपि पिण्डं चतुर्गुणं कृत्वा पुनर्द्वात्रिंशता संगुण्यं विंशत्युत्तरशतेन (१२०) भागेब्दाः, अर्थाल्लब्धमेकान्ते स्थाप्यम् प्रयोजना मग्ने। शेषं वर्षाणि। ततो मासानयने एकान्त-स्थ-लब्धं पिण्डे संयोज्यं ततोष्ट-गुणं कृत्वा द्वादश-भागे शेषेण मासाः। लब्धं स्थाप्यं, ततः पिण्डे तल्लब्धं संयोज्यं दशभिर्गुणितं द्वाभ्यां भक्तं, शेषं पक्षौ। लब्धं स्थाप्यम्। एवं तिथ्यादीनानयेत्। इह पूर्व-प्रकारेणानीते पिण्डे त्रिभिर्भक्ते एक-शेषेण धातुः, द्वाभ्यां मूलम्, त्रिभिर्जीवो ज्ञेयः।

नष्ट-जातक के ज्ञान की तृतीय रीति

प्रश्न के समय प्रश्नकर्ता द्वारा उच्चारित फल के नाम स्वर व्यञ्जनों की पूर्वोक्त चक्र से संख्या निकाल कर जोड़ लेनी चाहिए। और फिर उसमें प्रश्नकर्ता के नाम के वर्णों के अंकों को भी जोड़ देना चाहिए। यह योगफल प्रश्नाक्षर श्रेणी या पिण्ड कहलाता है।

फिर पिण्ड को ४ से गुणा कर १२० से गुणा करना चाहिए और १२० का भाग देना चाहिए। यहां प्राप्त लब्धि को अलग लिख लेना चाहिए तथा शेष को गतवर्षों की संख्या माननी चाहिए।

मासानयन करते समय उक्त चतुर्गुणित पिण्ड में पूर्वोक्त लब्धि जोड़कर ८ से गुणा कर १२ का भाग देना चाहिए। यहां शेषतुल्य वैशाख आदि मास होता है।

तत्पश्चात् पूर्वोक्त पिण्ड में मासानयन की लब्धि जोड़कर १० से गुणा कर २ का भाग देना चाहिए। यहां १ शेष होने पर शुक्लपक्ष तथा शून्य शेष होने पर कृष्णपक्ष होता है।

इसी प्रकार पिण्ड में सर्वत्र पूर्वानीत लब्धि जोड़कर यथाक्रम १२, १८, ७, २० एवं २१ से पृथक्-पृथक् गुणाकर गुणनफल में क्रमशः १५, २७, १२, १२ एवं ७ का भाग देने से शेषतुल्य तिथि, नक्षत्र, लग्न, राशि एवं वार को जानकर नष्ट-जातक का ज्ञान किया जाता है।

अथवा पाठान्तरम्

3-19 श्रेणी प्रश्नाक्षराणां तदुदधि-गुणिता नाम-वर्णेति-युक्ता
दन्ताष्टौ लोकपाला रवि-धृति-मुनिर्भिर्विंशता मूर्छनाभिः।
संवन्मासाश्च पक्षौ तिथि-भ-विलग्नं योग-वाराः क्रमेण
लभ्यन्ते पूर्व-पूर्वं क्रम-पद-गुणितं जातकं नष्ट-संज्ञम् ॥

3-20 ···वार-तिथि-भ-विलग्नं योग-राशी क्रमेण
लभ्यन्ते पूर्व-पूर्वं ग्रह-गण-सहितं प्राणिनां नष्ट-जन्म ॥

अस्यार्थः। प्रश्नाक्षराणि मात्रा-सहितानि चतुर्गुणानि कृत्वान्त-वर्ण-वर्गाणि निक्षिप्य एकीकृत्य अष्टोत्तर-शतेन भागो हार्यः। शेषं षष्ट-षष्ट्यधिकं यदा स्यात्तदा षष्ट्या भागमाहरेत्। शेषं संवत्सरोर्थात् प्रभवादिर्ज्ञेयः।

तदनन्तरं प्रश्नाक्षर-मात्राक्षरानेकीकृत्य, ध्रुवांकस्य मध्ये त्र्यधिक-शतं निक्षिप्य, ततः पञ्च हीनं कृत्वा तदा तस्य द्वादशभिर्भागो हार्यः,

शेषांकेन कार्तिकादि-मासो लभ्यते। पक्ष-क्षेपे प्रश्नाक्षरांकस्य मध्ये त्रिसप्ततिः क्षेप्या, द्वाभ्यां भागो हार्यः, शेषांकेन पक्षो लभ्यते। एकेन शुक्लः, शून्येन कृष्णो ज्ञेयः।

प्रश्नाक्षराणां वा पृच्छकस्य नाम-मेलनात् श्रेणी प्रश्नाक्षराणां मात्रा सप्तगुणीकृत्य पृच्छकस्याक्षर-मात्रांकैर्मिश्रिताः प्रकर्तव्या होरा-नामाक्षराः ? यथासंख्य-मिश्रिता अ-क-च-ट-त-प-य-श-वर्गाक्षराणीति यथासंख्य-पूर्वाक्षरेण संग्राह्यं संमिश्रा। एवं ध्रुवांक अष्टौ संयोज्य अष्टोत्तर-शतेन भागो हार्यः, शेषांकेन चैत्रादि संवत्सरो लभ्यते।

श्रेणी प्रश्नाक्षर-मात्रा ध्रुवांक-पञ्च-गुणा द्वादशभिर्भागो हार्यः शेषांकेन आषाढादि-मासो लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्रा-ध्रुवांकाः पुनः संमिश्रा, द्वाभ्यां भागो हार्यः, शेषांकेन पक्षो लभ्यते। एकेन शुक्लः, शून्येन कृष्णः। एकेन दिवा जन्म, शून्येन रात्रौ जन्म। श्रेणी प्रश्नाक्षर-समात्रिका अष्टादश-गुणं कृत्वा पञ्चदश-भागो हार्यः। शेषांकेन गत-तिथिर्लभ्यते। प्रश्नाक्षराणां ध्रुवांकं पञ्चगुणं कृत्वा प्रश्नाक्षर-मात्रा-संमिश्राः, सप्तविंशति-भागो हार्यः। शेषेण अश्विन्यादि-नक्षत्रं लभ्यते। प्रश्नाक्षराणां ध्रुवांकं पञ्च-गुणं कृत्वा प्रश्नाक्षर-मात्रा-संमिश्रा, सप्त-विंशति भागो हार्यः। शेषांकेन विष्कम्भादि-योगो ज्ञेयः।

नष्ट-जातक के ज्ञान की चतुर्थ और पंचम रीतियां

प्रश्न के समय उच्चारित मात्रा सहित अक्षरों को ४ से गुणा कर, गुणनफल में अन्तर्वर्णों के वर्गांक जोड़कर १०८ का भाग देना चाहिए। यदि शेष ६० से अधिक आयें, तो उसमें ६० का भाग देना चाहिए। इस प्रकार एक आदि शेष होने पर प्रभव आदि संवत्सर को जन्म-संवत्सर मानना चाहिए।

इसके पश्चात् प्रश्नकाल में उच्चारित शब्दों के अक्षर एवं मात्राओं को जोड़कर उसमें १०३ जोड़ना तथा ५ घटाना चाहिए। फिर उस में १२ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर कार्तिक आदि मास को जन्म मास मानना चाहिए। पक्ष का साधन करते समय अक्षरांकों में ७३ जोड़कर २ का भाग देने से १ शेष हो तो शुक्लपक्ष तथा शून्य शेष हो तो कृष्णपक्ष होता है।

अथवा, प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को ७ से गुणाकर उसमें प्रश्नकर्ता के नाम के अक्षरों की मात्राओं को जोड़ना चाहिए। इस प्रकार आनीत ध्रुवांक में ८ जोड़कर १०८ का भाग देना चाहिए। यहां एक आदि शेष होने पर चैत्रादि संवत्सर मानना चाहिए। फिर ध्रुवांक को ५ से गुणाकर १२ का भाग देना चाहिए। यहां एक आदि शेष होने पर आषाढ आदि को जन्ममास कहना चाहिए। प्रश्नाक्षर की मात्राओं के ध्रुवांक में २ का भाग देना चाहिए। यदि १ शेष रहे तो शुक्लपक्ष तथा शून्य शेष रहे तो कृष्णपक्ष होता है। इसी प्रकार २ का भाग देने से एक शेष बचे तो दिन में और शून्य शेष बचे तो रात्रि में जन्म कहना चाहिए।

तत्पश्चात् प्रश्नाक्षर की मात्राओं के ध्रुवांक को १८ से गुणाकर १५ का भाग देना चाहिए। यहां १ आदि शेष होने पर प्रतिपदा आदि तिथि जाननी चाहिए।

फिर प्रश्नाक्षरों के ध्रुवांक को ५ से गुणाकर उसमें प्रश्नाक्षरों की मात्राएं जोड़कर २७ का भाग देना चाहिए। यहाँ एक आदि शेष होने पर अश्विनी आदि नक्षत्र होता है।

इसी प्रकार प्रश्नाक्षरों के ध्रुवांक को ५ से गुणाकर उसमें प्रश्नाक्षर की मात्राएं जोड़कर २७ का भाग देने से १ आदि शेष होने पर विष्कुम्भ आदि योग होता है।

प्रकारान्तरेण वर्षाद्यानयनमाह

तत्र प्रथमं वर्षानयनमाह। प्रश्नाक्षर-मात्रा अष्ट-गुणा, शतेन भक्ता, लब्धं गतवर्षम्। मासानयनं चाह। लब्ध वर्षं विद्यमान-मात्राणां षष्ठांशेन गुणयेत्। ततस्तद् द्वादशभक्ते शेषं चैत्रादितो मासा ज्ञेयाः। लग्नानयनं चाह। गुरु-राशितश्चतुर्थांके लग्नं जायते। अथ वा प्रश्नाक्षर-मात्राः पञ्चगुणीकृत्य द्वादश-भागो हार्यः मेषादि-लग्नं लभ्यते। अथ वा प्रश्नाक्षर-मात्रा द्वि-गुणा, लग्नं भवेत्।

गतवर्ष जानने की अन्य रीति

प्रश्न के समय उच्चारित अक्षरों की मात्राओं को ८ से गुणाकर १०० का भाग देना चाहिए। यहां लब्धि को गतवर्षों की संख्या माननी चाहिए। मास जानने के लिए उक्त लब्धि या गतवर्षों की संख्या को मात्राओं के षष्ठांश से गुणा करना चाहिए। फिर उनमें १२ का भाग देने से १ आदि शेष होने पर चैत्रादि मास जानना चाहिए। जन्मलग्न का ज्ञान करने के लिए प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को ५ से गुणाकर १२ का भाग देना चाहिए। यहां १ आदि शेष होने पर मेष आदि राशि को जन्मलग्न कहना चाहिए। अथवा प्रश्नाक्षर की मात्रा को दुगुना करने से जो संख्या आए, उसके अनुसार मेष आदि राशि को जन्म लग्न मानना चाहिए।

रव्यानयनं चाह

प्रश्नाक्षर-मात्राश्चतुर्गुणीकृत्य वसु-हीना रस-मिश्रा द्वादश-भागो हार्यः, शेषेण रविर्लभ्यते। प्रश्नाक्षरं दश-गुणं कृत्वा त्रि-हीनं सप्त-मिश्रं कृत्वा द्वादश-भागो हार्यः, शेषेण भौमो लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्रास्त्रि-गुणीकृत्य, ततः प्रश्नाक्षर-मात्रा द्विगुणीकृत्य पञ्चदश-योज्यमेकी-कृत्यैक-हीनं द्वादश-भागो हार्यः शेषांकेन बुधो लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्राश्चतुर्गुणीकृत्य षड्-हीना वेद-मिश्रा द्वादश-भागो हार्यः, शेषांकेन गुरुर्लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्रा अष्ट-गुणीकृत्य त्रि-हीना वेद-युक्ता द्वादशभागो हार्यः, शेषांकेन भृगुर्लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्राः सप्त-गुणी-कृत्य त्रि-हीनाः षड्-मिश्राः द्वादश-भागो हार्यः, शेषांकेन शनिर्लभ्यते।

ग्रहों का लग्नसाधन

प्रश्नाक्षरों की मात्रा को ४ से गुणाकर ८ घटाना तथा ६ जोड़ना चाहिए। फिर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में सूर्य मानना चाहिए। प्रश्नाक्षर संख्या को १० से गुणाकर ३ घटाना और ७ जोड़ना चाहिए। फिर इसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में मंगल होता है। प्रश्नाक्षर की मात्राओं को ३ से गुणाकर और फिर प्रश्ना-क्षर की मात्राओं को दुगुना कर १५ जोड़कर १ घटाना चाहिए। इसमें

१२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में बुध होता है। प्रश्नाक्षर की मात्राओं को ४ से गुणाकर ६ घटाना एवं ४ जोड़ना चाहिए। फिर १२ से भाग देने पर शेषतुल्य राशि में गुरु होता है। प्रश्नाक्षर की मात्राओं को आठ से गुणाकर ३ घटाना एवं ४ जोड़ना चाहिए। इसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में शुक्र होता है। प्रश्नाक्षर की मात्राओं को सात गुना कर ३ घटाकर ६ जोड़ना चाहिए। और फिर इसमें १२ का भाग देने से शेष तुल्य राशि में शनि होता है। इस क्रिया में सहायक अक्षरांश-वोधक चक्र दिया जा रहा है।

अवर्ग	अ२	आ३	इ५	ई८	उ५	ऊ८
	ऋ२	ॠ०	लृ०	लृ०	ए२	ऐ२
	ओ४	औ१	अं७	अ:६		
कवर्ग	क७	ख६	ग४	घ१	ङ२	
चवर्ग	च२	छ५	ज८	झ५	ञ८	
टवर्ग	ट२	ठ३	ड४	ढ१	ण७	
तवर्ग	त६	थ७	द६	ध४	न१	
पवर्ग	प२	फ२	व५	भ८	म५	
यवर्ग	य८	र२	ल३	व४		
शवर्ग	श१	ष७	स६	ह१		

अथवा पाठान्तरम्

3-21 **श्रेणी प्रश्नाक्षराणां तदुदधि-गुणितं चान्त्य-वर्गैश्च युक्तं**
दन्ताष्टौ लोकपाला रवि-धृति-मुनिर्भिर्विशतिर्मूर्छनाभिः।
संवन्-मासाश्च पक्षौ तिथि-भ-विलग्नं योग-वाराः क्रमेण
लभ्यन्ते पूर्व-पूर्वं ख-चर-सुसहिता जायते नष्ट-जन्म॥

अस्यार्थः। पृच्छक-मुख-निःसृत-फल-नामाक्षराणि यावन्ति तावन्ति संख्यकाङ्कानि चतुर्गुणीकृतानि मध्य-वर्णाक्षर-सहितानि द्वात्रिंशता युतानि ततस्त्र्यधिक-शतेन क्षेपकांकेन युक्तानि ततोष्टोत्तर-शतेन भागो हार्यः, संवत्सरो लभ्यते। अथ प्रकारान्तरेण संवत्सरानयनं प्रदर्श्यते। उच्चारिताङ्के द्वादश-नष्ट उर्वरिते चतुः-संख्या भाव-शोधके यदा भवेत्, तदा षष्टि-हीना कार्या। यदा हीना कार्या तदा षड्भिर्भागो हार्यः। इति संवत्सरानयनम्। मास-मध्ये ८८ क्षेप्यं द्वादश-भागो हार्यः शेषेण कार्तिकादि-मासो लभ्यते। पक्षमध्ये ७३ क्षेप्यं द्वाभ्यां भागो हार्यः, शेषेणैकेन शुक्लः, शून्येन कृष्णः। प्रश्नाक्षरमध्ये ३३ क्षेप्यं सप्तभिर्भागो हार्यः, उर्वरितांकेन सूर्यादि-वारो लभ्यते। अथ

तिथ्यानयनम् । प्रश्नाक्षर-मध्ये षट् क्षेप्यं पञ्चदशभिर्भागो हार्यः, शेषं प्रतिपदादि-तिथिर्लभ्यते । अथ नक्षत्रानयनम् । प्रश्नाक्षर-मध्ये १४५ क्षेप्यं सप्तविंशत्या भागो हार्यः, शेषं कृत्तिकादि-नक्षत्रं लभ्यते । अथ योगानयनम् । प्रश्नाक्षर-मध्ये ६४ योज्यं सप्त (अष्टा) विंशत्या भागो हार्यः, शेषं विष्कुम्भादियोगो लभ्यते । प्रश्नाक्षर-मध्ये २८ क्षेप्यं द्वादश-भिर्भागो हार्यः शेषं मेषादि-लग्नम् । प्रश्नाक्षर-मध्ये ८०३ क्षेप्यं षष्टि-भागो हार्यः, शेषं घटी लभ्यते ।

नष्ट-जातक के ज्ञान की षष्ठ रीति

प्रश्नकर्ता के द्वारा कहे गये फल के नाम में जितने अक्षर हों, उस संख्या को चार गुणाकर मध्यवर्ती अक्षरों की संख्या तथा ३२ जोड़ने चाहिए। फिर उसमें १०३ जोड़कर १०८ का भाग देने से संवत्सर का ज्ञान होता है।

मासानयन के लिए ८८ जोड़कर १२ का भाग देना चाहिए। यहां शेषतुल्य कार्तिक आदि मास होता है।

पक्ष जानने के लिए ७३ जोड़कर २ का भाग देना चाहिए। यहां एक शेष होने पर शुक्लपक्ष, तथा शून्य शेष से कृष्णपक्ष होता है।

वार का ज्ञान करने के लिए प्रश्नाक्षर संख्या में ३३ जोड़कर ७ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर सूर्य आदि वार जानना चाहिए। तिथिसाधन के लिए प्रश्नाक्षर संख्या में ६ जोड़कर १५ का भाग देने से शेषतुल्य प्रतिपदा आदि तिथि होती है।

नक्षत्रानयन के लिए प्रश्नाक्षर संख्या में १४५ जोड़कर २७ का भाग देना चाहिए। यहां शेषतुल्य कृत्तिकादि नक्षत्र होता है।

योग का ज्ञान करने के लिए उक्त संख्या में ६४ जोड़कर २७ का भाग देने से शेषतुल्य विष्कुम्भ आदि योग मानना चाहिए।

जन्मलग्न जानने के लिए प्रश्नाक्षर संख्या में २८ जोड़कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य मेषादि राशि को जन्मलग्न मानना चाहिए।

प्रश्नाक्षर संख्या में ८०३ जोड़कर ६० का भाग देने पर जो शेष बचे वह घटी की संख्या होती है।

अथवा पाठान्तरम्

3-22 श्रेणी प्रश्नाक्षराणां तदुदधि-गुणिता चान्त्य-वर्णेन युक्ता
दन्ताष्टौ लोकपाला रवि-धृति-मुनिभिर्विंशतिर्मूर्छनाभिः।
संवत् (शाकं)-मासाश्च पक्षौ तिथि-भ-विलग्नं वारराशी क्रमेण
संगुण्यं(ते) पूर्व-लब्धं क्रम-पद-गुणितं जातकं नष्ट-संज्ञम्॥

अस्यार्थः। इहार्थान्तरं प्रदर्श्यते। प्रश्नाक्षराण्येकोनविंशति-गुणितानि युग-मिश्रितान्यष्टोत्तर-शतेन भागो हार्यः, शषांकमुत्पन्नो वत्सरो लभ्यते।

अथ प्रभवादि-संवत्सरानयनम्। प्रश्न-सूक्ष्माक्षरं गृहीत्वा वर्गांकाक्षर-मात्राक्षरानेकीकृत्य संवत्सरे क्षेपाद् द्वात्रिंशन्मध्ये क्षेपणीयानि। स च राशिः षष्ट्या विभाज्यः, शेषाङ्कमुर्वरितम्। स च प्रभवादि-नामा संवत्सरो लभ्यते। प्रश्नाक्षराणां वर्णाक्षराङ्क-मात्राङ्कानेकीकृत्य स च राशिः पृथक् स्थाप्यः। तन्मध्ये षड् योज्यः। ततो ध्रुवाङ्को योज्यो द्वादशभिर्भागो हार्यः, मासो लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्राङ्कानेकीकृत्य द्वादश योज्यः, ध्रुवाङ्को योज्यः। द्वाभ्यां भागो हार्यः। शेषे विषमे शुक्ल-पक्षः, समे कृष्ण-पक्षः। प्रश्नाक्षरमात्राङ्कानेकीकृत्य द्वादश योज्यं, ध्रुवांको योज्यः। ततश्च पञ्चदशभिर्भागो हार्यः। शेषांकेन प्रतिपदादि-तिथिर्लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्रांकानेकीकृत्य द्वादश योज्यं। ध्रुवांको (४६) योज्यः, सप्तभिर्भागो हार्यः, वारो लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्राक्षरमेकीकृत्य तन्मध्ये सप्त निक्षिप्य ध्रुवांको (४८) योज्यः। द्वादशभिर्भागो हार्यः। शेषांकं मेषादिर्द्वादश-भावलग्नम्। प्रश्नाक्षरः स्थाप्यस्तन्मध्ये ६६ योज्यं, ध्रुवांको द्वादश योज्यः। सप्त-विंशत्या भागो हार्यः। इति कृत्तिकादि नक्षत्रं लभ्यते।

प्रश्नाक्षर-मात्रांकानेकीकृत्य सप्तविंशत्या भागो हार्यः। शेषांकेन विष्कुम्भादि-योगो भवेत्।

प्रश्नांक-ध्रुवांकौ स्थाप्यौ। तन्मध्ये विंशति योज्यं। ध्रुवांको १०२ योज्यः। द्वादशभिर्भागैर्हृते शेषे सूर्य-राशिर्लभ्यते। प्रश्नांक-ध्रुवांकौ स्थाप्यौ, तन्मध्ये एकविंशति योज्यं, ध्रुवांकाश्च योज्या द्वादशभिर्भागे शेषेण भौम-राशिर्लभ्यते। प्रश्नाक्षरमात्राः संस्थाप्य द्वाविंशति योज्यं ध्रुवांक(४०)-योज्यं द्वादशभागे शेषेण बुध-राशिः। प्रश्नाक्षर-मात्रांकानेकीकृत्य ··योज्यं ध्रवांक-योज्यं द्वादश-भागे शेषेण गुरु-राशिः। प्रश्नाक्षर-मात्रांकानेकीकृत्य···एवं षड्विंशति-युक्ते ध्रुवांकं योज्यं··· द्वादशभागे शेषेण राहुराशिर्लभ्यते। इति।

नष्ट-जातक के ज्ञान की सप्तम रीति

प्रश्नाक्षरों को १९ से गुणाकर ४ जोड़कर १०८ का भाग देने से शेष-तुल्य वर्ष होता है। प्रभवादि संवत्सर का ज्ञान करने के लिए प्रश्ना-क्षरों के वर्गाक्षराङ्क एवं मात्राङ्क को जोड़कर उसमें ३२ जोड़कर ६० का भाग देने से शेषतुल्य प्रभवादि संवत्सर होता है।

प्रश्नाक्षरों के वर्गाक्षरांक एवं मात्राङ्कों को जोड़कर योग को एक स्थान पर लिख लेना चाहिए। उस योग में ६ जोड़कर ध्रुवांक जोड़ना चाहिए। फिर १२ का भाग देने से शेषतुल्य मास को जन्ममास मानना चाहिए।

प्रश्नाक्षरों के मात्रांकों में १२ जोड़कर ध्रुवांक भी जोड़ना चाहिए। फिर २ का भाग देने पर १ शेष रहे तो शुक्लपक्ष और शून्य रहे तो कृष्णपक्ष होगा।

प्रश्नाक्षरों के मात्रांकों को जोड़कर योग में १२ तथा ध्रुवांकों को जोड़ना चाहिए। फिर १५ का भाग देने से शेषतुल्य प्रतिपदा आदि तिथि जन्मतिथि होती है।

प्रश्नाक्षरों के मात्रांकों को जोड़कर उसमें १२ तथा ध्रुवांक ४६ जोड़ना चाहिए। फिर उसमें ७ का भाग देने से शेषतुल्य रविवार आदि को जन्मवार बताना चाहिए।

प्रश्नाक्षरों के मात्रांकों के योग में ७ तथा ध्रुवांक ४८ जोड़कर १२ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर मेषादि राशि को जन्मलग्न मानना चाहिए।

प्रश्नाक्षरों के अंकों में ६६ तथा ध्रुवांक १२ जोड़कर २७ का भाग देने से शेषतुल्य कृत्तिका आदि नक्षत्र जन्मनक्षत्र होता है।

प्रश्नाक्षरों के मात्रांकों को जोड़कर २७ का भाग देने से शेषतुल्य विष्कुम्भ आदि योग को जन्म-कालीन योग मानना चाहिए।

प्रश्नांक के ध्रुवांक को लिखकर उसमें २० तथा १०२ जोड़कर योग में १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में सूर्य होता है। प्रश्नांकों के ध्रुवांक में २१ जोड़कर १२ का भाग देने पर शेषतुल्य राशि में मंगल होता है। प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को जोड़कर उसमें २२ तथा ध्रुवांक में ४० जोड़ना चाहिए। फिर उसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में बुध होता है। प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को जोड़कर उसमें··· तथा ध्रुवांक जोड़ना चाहिए। फिर योगफल में १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में गुरु होता है। प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को जोड़कर उसमें २८ तथा ध्रुवांक ५२ जोड़ना चाहिए। फिर उसमें १२ का भाग देने पर शेषतुल्य राशि में शुक्र होता है। प्रश्नाक्षरों और मात्रांकों को जोड़कर उसमें २५ ध्रुवांक तथा १०२ जोड़ना चाहिए। तदनन्तर १२ का भाग देने पर शेषतुल्य राशि में शनि होता है। और इसी प्रकार प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को जोड़कर उसमें २६ तथा ध्रुवांक जोड़कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में राहु होता है।

अथवा पाठान्तरम्

3-23 श्रेणी प्रश्नाक्षराणां तदुदधि-गुणिता चान्त्य-वर्गेण युक्ता
दन्ताष्टौ लोकपाला रवि-धृति-मुनिभिर्विंशतिर्मूर्छनाभिः।

शाको मासाश्च पक्षौ तिथि-भ-विलग्नं वार-राशी क्रमेण
लभ्यन्ते पूर्व-पूर्वं क्रम-पद-गुणिते जातकं नष्ट-संज्ञम्॥

अथवा पाठान्तरम् ।

3-24 **श्रेणी प्रश्नाक्षराणां तदुदधि-गुणिता चान्त वर्णेन युक्ता**
दन्ताष्टौ लोकपाला धृति-रवि-मुनिर्भिविंशतिर्मूर्छनाभिः ।
संवन्-मासास्तु पक्षौ तिथि-भ-विलग्ना वार-राशी क्रमेण
लभ्यं यत्पूर्व-युक्तं ग्रह-गण-सहितं ज्ञायते नष्ट-जन्म ॥

अस्यार्थः । प्रश्नाक्षर-मात्राक्षराणि मात्रा-सहितानि तानि गणयित्वा चतुर्गुणीकृत्यान्त्य-वर्ण-वर्गं निक्षिप्यैकीकृत्य पुनस्तन्मध्ये द्वात्रिंशत् क्षेप्यः । पुनरेकीकृत्य त्र्यधिकशतं तन्मध्ये क्षेप्यम्, एकीकृत्य अष्टोत्तर-शतेन भागमाहार्यं षष्टिर्यदा भवति तदा षष्टिभिर्भागमाहरेत् । उर्व-रिताक्षरस्य मध्येष्टौ प्रक्षेप्योपरि यदा षष्ट्यधिकस्तदा षष्टि-भाग-माहरेत् । तदा पातसंवत्सरो लभ्यते । अतः संवत् १७१९ यातः, आगमः १७८० अयमेव वर्तमान-वत्सरः । प्रश्न-मात्राक्षरं सकृद् ध्रुवाङ्कस्य मध्ये त्र्यधिकशतं पञ्चदश-हीनं कृत्वा तदा ८८ सहितस्य द्वादशभि-र्भागो हार्य, उर्वरिताः कार्तिकादि-मासा लभ्यन्ते । पक्षपक्षेपि प्रश्न-मात्राङ्काक्षराङ्कयोः मध्ये वह्नि-मुनिर्भिनिक्षिप्य द्वाभ्यामपि भागः । उर्वरितांकेन पक्षानयनम् । एकेन कृष्ण-पक्षः, द्वाभ्यां शुक्ल-पक्षः । तिथि-प्रश्नाक्षरांक-मध्ये अष्ट-पञ्चाशन्निक्षिप्य ततः पञ्चदशभिर्भाग उर्वरितांकेन प्रतिपदाद्यास्तिथयो लभ्यन्ते । अर्थात्तिथिरागच्छति ।

अथ वारानयनम् । प्रश्नाक्षरांकं द्वात्रिंशद्युतं तन्मध्ये त्रिचत्वारिंशत् संक्षेप्य सप्तभिर्योगः । शेषः उर्वरितांकेन सूर्यादि-वारो लभ्यते । ततः प्रश्नाक्षरस्य मध्ये अष्टाविंशतिः क्षेप्यः । एकीकृत्य द्वादशभिर्भागः उर्वरितांकेन मेषादिलग्नम् ।

अथ नक्षत्रानयनम् । प्रश्नाक्षरांकस्य मध्ये त्र्यधिक-शतं क्षेप्यम् । द्वादश पुनरपि क्षेप्यः । एकीकृत्य सप्त (अष्ट) विंशति-भागः । शेष उर्वरितां-केन कृत्तिकादि-नक्षत्रम् । प्रश्नाक्षरांक-मध्ये रामनन्दा (९३) निक्षिप्यै-कीकृत्य पश्चात् सप्त मध्ये क्षेप्यः सप्त (अष्टा) विंशतिभागः शेषांकेन विष्कम्भादियोगः । प्रश्नाक्षरांक-मध्ये वसु-मुनिर्भिनिक्षिप्यैकीकृत्य तस्य मध्ये विंशतिः पुनः क्षेप्यः । एकादशभिर्भागः शेषांकेन शकुनि-प्रमुखानि करणानि । प्रश्नाक्षरांके त्रिषष्ट्या युतं षष्ट्या भक्तं । शेषं

जन्मसमये गतेष्ट-घट्यादि। प्रश्नाक्षरमात्रा रुद्रैर्गुणिता एकविंशत्या युता नवभिर्भक्ते शेषं चन्द्रः नवांशकं ज्ञातव्यम्। प्रश्नाक्षर-मात्रा-त्रि-गुणं वसु (८)-हीनं षड्-युतं द्वादश-भक्तं शेषं रवि-राशिर्ज्ञातव्यः। पिण्डं दश-गुणं, त्रि-हीनं, सप्त-युतं, द्वादश-भक्तं शेषं भौम-राशिः। पिण्डं चतुर्गुणं, नव-हीनं तिथि-युतं द्वादश-भक्तं बुध-राशिः। अथ प्रश्नाक्षरं रुद्र(११)-गुणितं पुनः ध्रुवांक-मध्ये एकविंशतिभिर्युक्ते नव-भिर्भागो हार्यः, शेषांक-ग्रहाणां स्थापनं क्रियते।

नष्ट-जातक के ज्ञान की अष्टम और नवम रीतियां

प्रश्नकालीन अक्षरों को मात्रओं के साथ गिनकर ४ से गुणा करके अन्तिम वर्ण का वर्णांक जोड़कर उसमें ३२ तथा १०३ जोड़ना चाहिए। फिर उसमें १०८ का भाग देने पर यदि शेष ६० से अधिक हो तो ६० घटाना चाहिए। इस प्रकार प्राप्त शेष में ८ जोड़ने से गत वर्ष या गत संवत् आ जाता है।

प्रश्नकालीन मात्राक्षरों के ध्रुवांकों में १०३ जोड़कर १५ घटाना चाहिए। फिर उसमें ८८ जोड़कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य कार्तिक आदि मास को जन्म का मास मानना चाहिए।

पक्ष का ज्ञान करने के लिए प्रश्न करते समय उच्चारित मात्रा एवं अक्षरों के अंकों में ७३ जोड़कर २ का भाग देना चाहिए। यदि एक शेष हो तो कृष्णपक्ष तथा शून्य शेष हो तो शुक्लपक्ष जानना चाहिए। तिथि साधन के लिए प्रश्नाक्षराङ्कों में ५८ जोड़कर १५ का भाग देना चाहिए। यहां एक आदि शेष होने पर प्रतिपदा आदि तिथियां होती हैं, ऐसा नियम है।

वार जानने के लिए प्रश्नाक्षराङ्कों में ३२ जोड़कर फिर उसमें ४३ जोड़ना चाहिए। फिर उसमें ७ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर रविवार आदि जन्म का वार होता है।

प्रश्नाक्षराङ्कों में २८ जोड़कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य मेषादि राशि को जन्मलग्न मानना चाहिए।

प्रश्नाक्षराङ्कों में १०३ जोड़कर फिर १८, १२ तथा १५ जोड़ना चाहिए और फिर योग में २७ का भाग देने से शेषतुल्य कृत्तिकादि नक्षत्र को जन्मनक्षत्र मानना चाहिए।

प्रश्नाक्षराङ्कों में ९३ जोड़कर फिर ७ और जोड़ना चाहिए। इस योगफल में २७ का भाग देने से एक आदि शेष होने पर विष्कुम्भ आदि योग होता है।

प्रश्नाक्षराङ्कों में ७८ जोड़कर फिर २० और जोड़ना चाहिए। इस योगफल में ११ का भाग देने पर शेषतुल्य शकुनि आदि करण जन्मकालीन करण होता है।
प्रश्नाक्षराङ्कों में ६३ जोड़कर ६० का भाग देने से शेषतुल्य घटियों को जन्मकालीन इष्टकाल मानना चाहिए।

प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को ११ से गुणा कर उसमें २१ जोड़कर ९ का भाग देने से चन्द्रमा का नवांश माना जाता है। प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को ३ से गुणा कर गुणनफल में ८ घटाना तथा ६ जोड़ना चाहिए। फिर इसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में सूर्य होता है। प्रश्नाक्षरों के पिण्ड को १० से गुणा कर ३ घटाना तथा ७ जोड़ना चाहिए। फिर उसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में मंगल होता है। उक्त पिण्ड को ४ से गुणा कर ९ घटाना तथा १५ जोड़ना चाहिए। उसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में बुध होता है।

पुनः प्रकारान्तरेण ग्रहानयनम्। प्रश्नाक्षर-मात्रास्त्रिगुणीकृत्य वसु-(८)-षड्-मिश्रिता द्वादश-भागो हार्यः। शेषांकेन मेषादीनां मध्ये सूर्यो लभ्यते प्रश्नाक्षर-मात्रा दशगुणिता, त्रिभिर्हीना, सप्त-मिश्रिता, द्वादश-भागो हार्यः। शेषेण चन्द्रो लभ्यते। प्रश्नाक्षर-मात्रा सप्त-गुणिता, द्वादश-भागो हार्यः। शेषांके भौमः प्रश्नाक्षर-मात्रा चतुर्गुणिता, नवभिर्हीना पञ्चदश-मिश्रिता, द्वादश-भागो हार्यः। शेषे बुधः। प्रश्नाक्षर-मात्रा नवभिर्गुणिता, षड्-हीना, वेद-मिश्रिता, द्वादश-भागो हार्यः। शेषांके गुरुः। प्रश्नाक्षर-मात्रा षड्गुणिता, पञ्चदश क्षेपयित्वा एक-हीना द्वादश-भागो हार्यः। शेषांके शुक्रः। प्रश्नाक्षर-

मात्रा सप्त-गुणिता, त्रि-हीना, षड्-मिश्रिता, द्वादशभागो हार्यः। शेषांके शनिः। प्रश्नाक्षर-मात्रा अष्ट-गुणिता, त्रि-हीना वेद(४)-युता, द्वादश-भागो हार्यः। शेषांके राहुः। राहु-मध्ये षड्-राशि-योज्यः। केतुर्लभ्यते।

ग्रहानयन की एक रीति और भी प्रचलित है। प्रश्नाक्षर मात्राओं को ३ से गुणा कर उसमें ८ तथा ६ जोड़कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में सूर्य होता है। प्रश्नाक्षर मात्राओं को १० से गुणा कर ३ घटाना तथा ७ जोड़ना चाहिए। फिर उसमें १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में चन्द्रमा होता है। प्रश्नाक्षर मात्राओं को ७ से गुणा कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में मंगल होता है। प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को ६ से गुणा कर फिर उसमें १५ जोड़कर तथा १ घटाकर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में शुक्र होता है। प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को ७ से गुणा कर गुणनफल में से ३ घटाकर तथा ६ जोड़कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में शनि होता है। और इसी प्रकार प्रश्नाक्षरों की मात्राओं को ८ से गुणा कर गुणनफल में ३ घटाकर तथा ४ जोड़कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि में ६ जोड़ने से केतु की राशि ज्ञात हो जाती है।

अथवा पाठान्तरम्

**3-25 श्रेणी प्रश्नाक्षराणां तदुदधि-गुणितं चान्त-वर्गेण युक्तं
दन्ताष्टौ लोकपाला रवि-धृति-मुनिभिर्विंशतिर्मूर्छनाभिः।
संवन्-मासाश्च पक्षौ तिथि-भ-विलग्नं योग-वाराः क्रमेण
लभ्यन्ते पूर्व-पूर्वं क्रम-पद-गुणितं जातकं नष्ट-जन्म॥**

अस्यार्थः। श्रेणीति। प्रश्नाक्षराणि संगृहीत्य वर्गानुक्रमं संक्षेप्य एकत्री(णि)कृते, राशि-स्वर(१६)-मात्रा(१२)-समन्वितः। प्रश्नाक्षर-मात्रा द्वात्रिंशद्-गुणिता अष्टोत्तर-शत-भागो हार्यः। शेषं संवत्सरो लभ्यते। अथ मूल-राश्यानयनम्। अधराक्षरे वह्नि(३)-भागः। शेषे मूलराशिः। इति मूलराशिः। प्रश्नाक्षर-मात्राः पुनः स्थाप्याः। अष्टभिर्गुणयेत्, द्वादशभागौ हार्यः। शेषं मासः। मूल-राशिः पुनः स्थाप्यः। पञ्चभिर्गुणयेत्, द्वाभ्यां भागो हार्यः। शेषं पक्षः। पुनर्मूलराशिरर्क-

गुणितो दिन(१५)-भागे शेषं तिथिर्लभ्यते। पुनर्मूलराशिः स्थाप्यो धृति(१८)-गुणिता-भ-भक्ते शेषं नक्षत्रम्। पुनर्मूलराशिः सप्त-गुणितो द्वादश-भागे शेषं लग्नम्। पुनर्मूल-राशिर्विंशत्या गुणितो भ(२७)-भक्ते शेषं विष्कुम्भादियोगः। पुनर्मूलराशिरेकविंशत्या गुणितः सप्त-भक्ते शेषं वारो लभ्यते।

श्रेणी-प्रश्नाक्षराणामिति। अत्रोदाहरणम्। पृच्छा-काले अनार इति फलस्य नाम। इह मात्राः ३, अक्षर-द्वयम्। मात्रोदधि(४)-गुणिता १२, वर्णाभ्यां(२) युक्ता जातं पिण्डं १४। ततो दन्तादि-गुणितं संवत्सरादि-प्रमाणैर्भाजितं क्रमेण संवत्सरादयो लभ्यन्त इति।

नष्ट-जातक के ज्ञान की दशम रीति

प्रश्नाक्षर मात्राओं को ३२ से गुणाकर १०८ का भाग देने से शेष संख्यातुल्य वर्ष को गत संवत्सर कहना चाहिए। अधराक्षर को ३ से गुणाकर ५ का भाग देने से मेष से शेषतुल्य मूलराशि होती है। या फिर, उत्तराक्षर को ५ से गुणाकर ३ का भाग देने से शेषतुल्य मूलराशि होती है।

मूलराशि अर्थात् प्रश्नाक्षर मात्रा को ८ से गुणाकर १२ का भाग देने से शेष मास होता है। मूलराशि को ५ से गुणाकर २ का भाग देने पर शेष पक्ष होता है। फिर मूलराशि को १२ से गुणाकर १५ का भाग देने से शेष तिथि होती है। मूलराशि को १८ से गुणाकर २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र होता है। मूल राशि को २० से गुणाकर २७ का भाग देने से शेष विष्कुम्भ आदि योग होता है। तथा मूल राशि को २१ से गुणाकर ७ का भाग देने से शेष वार होता है।

उदाहरण प्रस्तुत है। नष्ट-जातक के पुनर्निर्धारण के लिए किसी प्रश्न-कर्ता ने अनार का नाम लिया। इस शब्द में मात्राएं ३ हैं तथा अक्षर या वर्ण २ हैं। मात्राओं को ४ से गुणा किया तो (३×४=) १२ हुए। इसमें वर्णसंख्या जोड़ने पर (१२+२=) १४ हुए। यह पिण्ड हुआ। फिर इस पिण्ड को ३२ आदि से गुणाकर १०८ आदि का भाग देने से शेष गतवर्ष आदि होते हैं।

अथवा पाठान्तरं प्रकारान्तरं च प्रदर्श्येते

3-26 श्रेणी प्रश्नाक्षराणां निज-निज-विहित-क्षेप-युक्ता प्रमाणे
भक्ता भुक्तं भवेत् तन्निज-जनुषि हि शरत्पूर्वमेष्यं तु सैकम्।
अब्देग्नीषून् क्षिपेत् त्रीन् शशि-धन-विषयानिन्द्र-वह्न्याश्रयाशान्
द्वीषून् त्रीषून् नगेषुन् त्रि-नव-नव-शिखीन्द्वक्षि-चन्द्राष्ट अंकान् ॥

3-27 मासे पक्षे तिथौ च क्रमत इह सुधीर्वासरे भे च योगे
तिथ्यर्धे नाडिकायां क्षिपति किल पले नग्नकेंशे ग्रहेषु ।
मात्रासंख्या विषण्डाः सर्ग (सृग) इह अ (क)-मुखा द्वि-त्रिपूर्वांक-
युक्ता, वर्गाणां मेल-कारै रविरिरितिः हलचां वै पृथग् योग एषाम् ॥

3-28 वर्गाद्यैर्धीकृतं तत्स्वरयुजि कु-युतिं यादि-शाद्योः कु हानिं,
द्विः कृत्वा श्री-गुरूणां चरण-चण-धिया जातकं नष्ट जन्म ।

नष्ट-जातक के ज्ञान की ग्यारहवीं रीति

प्रश्नाक्षरों की श्रेणी या पिण्ड में अपने-अपने क्षेपक जोड़कर अपने-अपने विकल्पों से भाग देने पर शेषतुल्य जन्मकाल के गतवर्ष आदि होते हैं। उनमें १ जोड़ने पर वर्तमान वर्ष आदि हो जाते हैं। वर्ष, मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, घटी, पल, लग्न एवं नवांश के क्षेपक यथाक्रम ५३, ३, १, १७, ५, १४, ३, ३, ५२, ५३, ७ एवं ५ होते हैं। तथा सूर्य से राहु पर्यन्त ग्रहों के क्षेपक क्रमशः ३, ९, ९, ३, १, २, १ एवं ८ होते हैं। इस विषय का स्पष्टीकरण करने के लिए प्राकृतभाषा का उद्धरण दिया जा रहा है।

अथेहोक्त-पद्यार्थः प्राकृत-भाषायाम्

3-29 अर-कर-मत्तं-पमाणं र-द-वेद (४३२)-समाह्वयं स-सोल धुय ।
सिंहि-विसयु (५३)-युत्तं च सएण(१००) हरय संवत्सरो होई ॥

3-30 मास (इ)-गुण (३)-चन्द (१)-सत्तर-
स-सप्तदश-इसु (५)-भुवण (१५)-गुण (३)-सिंहि (३)-जुक्तं।
तेरस-चउ-गुण (१३×४=५२)-संगं
अग (७)-इसु-जुत्तेसु पलमुद्दं ।

3-31 ल-ग इह गुणे (३) नव-नव

त्रि-ससि (१)-वसु (८) आनि एति नियमाणा।

विहत्ता हवन्ति सव्वे

वि-जंम-गहा वारेन्दु-पृच्छक-दिक्॥

पृच्छा प्रश्नाक्षरेण राम-युक्तं वसु-हत-शेषं वारादौ तात्कालिक-ग्रहोदयोयम् प्रथमं सूक्ष्माक्षरैर्ग्रहणम्।

इस सम्बन्ध में प्राकृत भाषा से उद्धरण

नपुंसक स्वरों अर्थात् ऋ, ॠ, ऌ, एवं ॡ को छोड़कर अकारादि की मात्राओं की संख्या २, ३, ४ आदि होती है। ककार आदि वर्णों की ३, ४, ५ आदि होती है। वर्गों में प्रथमादि अक्षरों के अंक पहिले से एकाधिक होते हैं। प्रश्न के समय उच्चारित शब्दों के स्वर वर्णों का पृथक्-पृथक् योग करना चाहिए। वर्गांकों के योग को आधा करके उसमें स्वरांकों को जोड़ना चाहिए। और फिर यवर्ग एवं शवर्ग के वर्णों के अंक में से क्रमशः १ तथा २ घटाना चाहिए। इस प्रकार, अपने गुरु के चरणारविन्दों में ध्यान लगाकर नष्ट-जातक का विचार करना चाहिए।

अत्र वैशिष्ट्यमाह

3-32 प्रश्नाः सूक्ष्माक्षरैर्ग्राह्या वर्गानुक्रम-संख्यया।
एकत्रानुकृतो राशिः सर्व-मात्रानुमीलितः॥

3-33 दातव्यं प्रश्न-वर्णेषु रूपं रूपं स्वरं प्रति।
दलितं कारयेद् वर्ग एक-हीनं य-शादिके॥

अस्य विवरणम्। अ १, आ २, इ ३, ई ४, उ ५, ऊ ६, ए ७, ऐ ८, ओ ९, औ १०, अं ११, अः १२; क ३, ख ४, ग ५, घ ६, ङ ७; च ४, छ ५, ज ६, झ ७, ञ ८; ट ५, ठ ६, ड ७, ढ ८, ण ९; त ६, थ ७, द ८, ध ९, न १०; प ७, फ ८, व ९, भ १०, म ११; य ८, र ९, ल १०, व ११; श ९, ष १०, स ११, ह १२, क्ष १३। अर-कर-मत्त-पमाणम् इति सूक्ष्म-राशि-करणम।

अत्रोदाहरणम् । यथा 'बीजू(जो)रूम्' । बकारे ९, जकारे ७, मेलने १६, एवं वर्गांका: । रकारे १० यथांका एते १० दश । ईकारे ४, ऊकारे ६, द्वितीयोकारे ६, अंकारे ११, एते सर्वे स्वरांका: २७ जाता: । इति न्यायात् । स्वराश्चत्वारस्तेषु स्वरं स्वरं प्रति रूपं रूपं देयमिति । दत्त-चतुष्टयं जातं ३१ । एक-हीनं य-शादिके इति न्यायाज् जातं ९ । दलितं कारयेद् वर्गे इति ज्ञानेनार्धीकृते जातम् ८ । एकत्र मेलनाज्जातम् ४८ । अ-वि(व)-धूमिते द्वयं पात्यम् इति ज्ञानेन जातं ४६, अरकर-मत्त-पमाण-मित्यर्थः ।

स्वरांकों की केरलीय पद्धति की विशेषता

इस प्रसंग में एक टिप्पणी है । यद्यपि स्वरों के अंक वताते हुए उक्त पद्य में अकारादि स्वरों के यथाक्रम २ से १३ तक अंक वताये गये हैं तथापि केरलीय पद्धति से नष्ट-जातक का विचार करते समय अकारादि स्वरों के यथाक्रम १ से १२ अंक लेकर पिण्ड या मूलराशि वनाने की परम्परा है । अगले उदाहरणों में भी आचार्य ने इस परम्परा के अनुसार स्वरों के अंक लिए हैं ।

अव इसका उदाहरण लीजिए जिसके अन्तर्गत सर्वप्रथम सूक्ष्माक्षरों या वीजाक्षरों का संकेत प्रस्तुत है । किसी व्यक्ति ने नष्ट-जातक की जानकारी हेतु प्रश्न करते समय 'वीजूरूम्' कहा । यहां व के ९ और ज के ७ जोड़ने पर वर्णाङ्क १६ हुए । तथा र के १० अंक ज्यों-के-त्यों १० रहे । उक्त शब्द में आये स्वरों के अंक ई ४, ऊ ६, द्वितीय ऊ ६ तथा अं ११ को जोड़ने पर स्वरांकों का योग २७ हुआ । फिर उक्त चारों स्वरों के अंकों में १-१ जोड़ने से स्वरांकों का योग ३१ हुआ । तत्पश्चात् य वर्ग के वर्ण र के अंक १० में से १ घटाने पर ९ हुआ, तथा वर्गाङ्कों १६ का आधा करने पर ८ हुआ । इन सवका योग करने पर (३१+९+८=) ४८ हुआ । इस प्रश्न में 'वीजूरूम्' शब्द अविधूमित है । अतः उक्त योग में से २ घटाने पर शेष रहे ४६ और यही संख्या मूलराशि हुई । अविधूमित(य व र ल)में २ घटाया जाता है । श वर्ग (श ष स ह) धूमित है, अतः उनसे १ घटाया जाता है । ऋ, ॠ, लृ, ॡ ये अक्षर नपुंसक होते हैं तथा अं, अः का पारिभाषिक नाम 'सर्ग' है ।

अथ ध्रुव-राशेर्विधानम्

रद-वेद-समाह्वय इति व्याख्या। रदा द्वात्रिंशत् (३२), वेदाः ४; अंकानां वामतो गतिरिति एकत्र स्थाने ४३२। अस्मिन् पिण्डे पूर्व-मूल-राशिना अनेन ४६ गुणिते (गुण्यः ४३२, गुणकः ४६) जातं १९८७२। स-सोल इति मध्ये षोडश क्षेप्याः, जातं १९८८८। ध्रुयम् इति असौ ध्रुवक-राशिः पृथक् स्थाने स्थाप्यः।

आदौ तावद् वत्सरः। सिंहि-विसयु-युत्तं स ध्रुवक-राशिस्त्रिपञ्चाशद्युक्तो जातः १९९४१। हृतशतेन लब्धं १९९। शेषं ४१। भाग-(१००)-लब्धेन कार्यम्। शेषाङ्काद् भुक्त-भोग्य-ज्ञानेन एकं क्षिप्यते, ४२ इति संवत्सरः। संवत् १६४२ एतस्मात् पञ्चत्रिंशदधिक-शतं पात्यते। शेषं शक-वत्सरः। शाके १५०७ इति प्रथम-गाथार्थः।
मास-गुण-चन्द्रमिति व्याख्या।

मूलराशिः १९८८८। मासक्षेपणास्त्रयः तन्मिश्रं जातं १९८९१। द्वादशभिर्भागो देयः। भागे सति लब्धं १६५७। शेषं ७ अस्माद् भुक्त-भोग्य-ज्ञानेनैकं क्षिप्यते। ८ लब्धं। चैत्रादष्टमो मासः, कार्तिको मास इति।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ चन्द्रं (१)-इत्येक-युक्ते जातः १९८८९। भागो द्वाभ्याम्। भागे सति लब्धं ९९४४। शेषम् १। भुक्त-भोग्य-न्यायेन लब्धं २, द्वितीयो वदि-पक्षः।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ तिथिक्षेपे 'सत्तरस' इति सप्तदश तद्युक्ते जातः १९९०५। भागः १५। भक्ते लब्धं १३२७। शेषं शून्यं, भुक्त-भोग्य-न्यायेन प्रतिपत्तिथिः।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ वार-क्षेपे, इसु (५)। तद्युक्ते जातं १९८९३। सप्तभिर्भागो देयः। भक्ते लब्धं २८४१। शेषं ६ भुक्त-भोग्य-न्यायेन सैके ७, शनैश्चर-वारः।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ नक्षत्र-क्षेपे भुवण (१४) युते जातः १९९०२। सप्तविंशत्या भागे जातं ७३७। शेषम् ३। अत्रापि भुक्त-भोग्य-न्यायेन सैके लब्धं ४। अश्विन्यादितो रोहिणी-नक्षत्रम्।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ गुण इति त्रयं तद्युक्ते जातं १९८९१ । सप्तविंशत्या भागे दत्ते सति लब्धं ७३६ । शेषं सैकं २०, लब्धं शिव-योगः ।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ कारण-क्षेपे सिहि-जुत्तमिति त्रयः । तद्युक्ते जातं १९८९१ । ७ भक्ते लब्धं २८४१ । शेषं ४ वेद (४)-हीनं क्रियते, जातं शून्यं सैकं लब्धं बव-करणम् ।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ घटी-क्षेपे, तेरस-चउ गुण इति चतुर्गुणा द्विपञ्चाशत् । तद्युते जातं १९९४० । षष्ट्या(६०) भागे दत्ते लब्धं ३३२ । शेषं २० सैकं जातं २१ जन्मसमये इष्ट-घटिकाः ।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ पल-क्षेपे, संगमिति त्रिपञ्चाशत् । ५३ तद्युते जातं १९९४१ । षष्ट्या(६०) भागे दत्ते सति लब्धं ३३२ । शेषं २१ सैकं जातं २२ लब्धानि पलानि ।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ लग्न-क्षेपे अगेत्युक्ते सप्तयुक्ते जातं १९८९५ । द्वादशभिर्भागे दत्ते सति लब्धं १६५७ । शेषं ११ सैकं १२ लब्धं मीन-लग्नम् ।

पुनर्मूल-राशिः १९८८८ अंश-क्षेपे इसु इति पञ्चयुते जातं १९८९३ । नवभिर्भागो देयः । लब्धं २२१० । शेषं ३ सैकं २ अंशाः । इति तृतीय-गाथार्थः ।

ध्रुवराशि १९८८८ का विधान

तदनन्तर रद-वेद अर्थात् ४३२ से उक्त मूलराशि का गुणा करने पर (४३२ × ४६ =) १९८७२ हुआ । इसमें भी १६ जोड़ने पर १९८८८ ध्रुवराशि हुई । इस राशि को एक स्थान पर लिख लिया ।

वर्ष जानने के लिए उक्त ध्रुव राशि में संवत् का क्षेपक ५३ जोड़ा तो १९९४१ हुआ । इसमें १०० का भाग देने से लब्धि १९९ तथा शेष ४१ रहा । अतः गत वर्षसंख्या ४१ तथा वर्तमान वर्षसंख्या ४२ हुई ।

मास का ज्ञान करने के लिए पूर्वोक्त मूलराशि में मास का क्षेपक ३ जोड़ने पर १९८९१ हुआ । इसमें १२ का भाग देने से लब्धि १६५७ तथा शेष ७ रहा । अतः चैत्र से ७वां मास, आश्विन गतमास तथा कार्तिक जन्ममास हुआ ।

पक्ष जानने के लिए उक्त ध्रुवराशि में १ जोड़ा तो (१६८८८ + १ =) १६८८६ तथा शेष १ रहा। अत: शुक्लपक्ष गतपक्ष एवं कृष्णपक्ष जन्म का पक्ष हुआ।

तिथि का आनयन करने के लिए उक्त ध्रुवराशि में तिथि का क्षेपक १७ जोड़ा, तो (१६८८८+१७=)१६९०५ हुआ। इसमें १५ का भाग देने से लब्धि १३२७ तथा शेष शून्य रहा। अत: १ जोड़ने पर प्रतिपदा जन्मतिथि हुई।

वार का साधन करने के लिए उक्त ध्रुव राशि में वार का क्षेपक ५ जोड़ा तो (१६८८८+५=) १६८९३ हुआ। इसमें ७ का भाग देने से लब्धि २८४१ तथा शेष ६ रहा। अत: रवि से गणना करने पर शुक्रवार को गतवार तथा उसमें एक जोड़ने पर शनिवार को जन्म हुआ मानना चाहिए।

नक्षत्रानयन के लिए उक्त ध्रुव राशि में नक्षत्र का क्षेपक १४ जोड़ने पर (१६८८८ + १४ =)१६९०२ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से लब्धि ७३७ तथा शेष ३ रहा। अत: कृत्तिका गतनक्षत्र तथा रोहिणी जन्मनक्षत्र हुआ।

योग जानने के लिए उक्त ध्रुव राशि में योग का क्षेपक ३ जोड़ने से (१६८८८+३=) १६८९१ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से लब्धि ७३६ तथा शेष १६ रहा। अत: विष्कुम्भ से गणना करने पर परिघ गतयोग तथा शिव जन्मयोग हुआ।

करण का ज्ञान करने के लिए उक्त ध्रुव राशि में करण का क्षेपक ३ जोड़ा तो (१६८८८+३=)१६८९१ हुआ। इसमें ७ का भाग देने से लब्धि २८४१ तथा शेष ४ रहा। यहां शेष में से ४ घटाने पर शून्य बचा। अत: गतकरण विष्टि तथा वर्तमान करण बव हुआ।

इष्टघटी जानने के लिए उक्त ध्रुव राशि में घटी का क्षेपक ५२ जोड़ा तो (१६८८८+५२=) १६९४० हुआ। इसमें ६० का भाग देने पर लब्धि ३३२ तथा शेष २० मिला। अत: जन्म के समय २१ घटी हुई। इसी प्रकार ध्रुव राशि में पल का क्षेपक ५३ जोड़ने पर (१६८८८+५३=) १६९४१ हुआ। इसमें ६० का भाग देने से लब्धि ३३२ तथा

शेष २१ रहा। इसमें एक जोड़ने से २२ पल पर जन्म हुआ। इस तरह जन्मकालीन इष्टकाल २१ घटी एवं २२ पल हुआ।

लग्नानयन के लिए उसकी ध्रुव राशि में लग्न का क्षेपक ७ जोड़ने से (१९८८८+७=) १९८९५ हुआ। इसमें १२ का भाग देने पर लब्धि १६५७ तथा शेष ११ रहा। शेष में १ जोड़ने से जन्मलग्न मीन हुई। नवांश जानने के लिए ध्रुव राशि में नवांश का क्षेपक ५ जोड़ा तो (१९८८८+५=) १९८९३ हुआ। इसमें ९ का भाग देने से लब्धि २२१० तथा शेष ३ रहा। अतः तीसरा नवांश गत तथा चौथे नवांश में जन्म हुआ।

अथ सूर्यादि-ग्रह-साधनम्

ल-ग इह गुणे इति व्याख्या।

१९८८८ रवि-क्षेपेणानेन ३ युते जातं १९८९१। १२ भागे लब्धं १६५७, शेषं ७। भुक्त-भोग्यार्थमिति नियमादेकं क्षिप्त्वा जातो वृश्चिकस्तत्र रविः। पुनर्मूल-राशिः १९८८८ चन्द्रक्षेपे(९)१९८९७, १२ भक्ते लब्धं १६५८। शेषं १। सैकं २ जातो वृषे चन्द्रः। पुनर्मूल-राशिः १९८८८ भौमक्षेपे ९ तद्युते जातं १९८९७। १२ भागे शेषं १ सैकं २। एतत्सैके कृते जातो वृषे भौमः। पुनर्मूल-राशिः १९८८८ बुध-क्षेपे ३ युते जातं १९८९१। १२ भागे शेषं ७। सैके ८ जातो वृश्चिके बुधः। पुनर्मूल-राशिः १९८८८ गुरु-क्षेपे १ युते जातः १९८८९। १२भागे शेषं ५। सैकं ६ लब्धं कन्या-राशि-स्थो गुरुः। पुनर्मूल-राशिः १९८८८ शुक्र-क्षेपे युते जातं १९८९० भाग(१२)-शेषं ६। सैकं ७ लब्धं तुलायां शुक्रः। पुन-र्मूल-राशिः १९८८८ शनिक्षेपे १ युक्ते जातं १९८८९ भाग(१२)-शेषं ५। भुक्त-भोग्य-न्यायेन सैकं ६ कृतं जातः कन्यायां शनिः। पुनर्मूल-राशिः १९८८८ राहुक्षेपे ८युते जातं १९८९६। भाग(१२)-शेषं ०। भुक्त-भोग्य-न्यायेन जातं सैकं १ मेषे राहुः।

सूर्य आदि ग्रहों का साधन

जन्मकालीन सूर्यादि ग्रहों का अध्ययन करने के लिए ध्रुव राशि में सर्वप्रथम सूर्य का क्षेपक ३ जोड़ा तो (१९८८८+३=) १९८९१ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से लब्धि १६५७ तथा शेष ७ रहा।

अतः भुक्तभोग्य के नियमानुसार शेष में एक जोड़ने से वृश्चिक राशि में सूर्य हुआ।

चन्द्रमा का साधन करने के लिए ध्रुव राशि में चन्द्रमा का क्षेपक ९ जोड़ा तो (१९८८८ + ९ =) १९८९७ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष १ रहा। अतः शेष में १ जोड़ने से वृष राशि में चन्द्रमा हुआ।

जन्मकालीन मंगल का साधन करने के लिए ध्रुव राशि में मंगल का ध्रुवांक ९ जोड़ा और १२ का भाग दिया तो चन्द्रमा की तरह मंगल भी वृष राशि में हुआ।

बुध का आनयन करने के लिए ध्रुव राशि में बुध का क्षेपक ३ जोड़ा तो (१९८८८ + ३ =) १९८९१ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से ७ शेष रहा। अतः १ जोड़ने पर वृश्चिक राशि में बुध हुआ।

गुरु की जानकारी हेतु ध्रुव राशि में गुरु का क्षेपक १ जोड़ा गया तो (१९८८८ + १ =) १९८८९ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष ५ रहा। इसमें १ जोड़ने से कन्या राशि में गुरु हुआ।

शुक्र का साधन करने के लिए ध्रुव राशि में शुक्र का क्षेपक २ जोड़ा तो (१९८८८ + २ =) १९८९० हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष ६ रहा। शेष में १ जोड़ने पर तुला राशि में शुक्र हुआ।

शनि का आनयन करने के लिए ध्रुव राशि में शनि का क्षेपक १ जोड़ा तो (१९८८८ + १ =) १९८८९ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष ५ रहा। इसमें १ जोड़ने से कन्या राशि में शनि रहा।

राहु का साधन करने लिए ध्रुव राशि में राहु का क्षेपक ८ जोड़ा तो (१९८८८ + ८ =) १९८९६ हुआ। इसमें १२ का भाग देने से शेष शून्य रहा। उसमें १ जोड़ने में मेष राशि में राहु हुआ। और राहु में ६ राशि जोड़ने पर तुला में केतु हुआ।

अस्यैव स्पष्टीकरणं व्याख्यया प्रदर्श्यते।

३-३४ दातव्यं प्रश्न-वर्णेषु रूपं रूपं स्वरं प्रति।
दलितं कारयेद्वर्गे एकहीनं य-शादिके॥

स्थिर-गुण्यः इति रद-वेद-समाह्वयः (४२२)। अत्र गुणके संस्कार-

विशेषः। अविधूमिते द्वयं पात्यम्। यवर्गे द्वयं पात्यमिति व्याख्या। यवर्गोविधूमित-संज्ञकः। धूमिताख्यः श-वर्गः। ऋ-ॠ-लृ-ॡ षण्ड-संज्ञकाः। अं अः सर्ग-संज्ञकौ। गुणितांके संस्कारः इति षोडश-क्षेपणीयाः, तदासौ ध्रुवक-राशिः स्यादिति। क्वचित्तु च-य-वर्गे सैकं कर्तव्यम्। पुनर्य-शादिके एक-हीनम्। य-शादि-वर्ग-रहित-वर्गांकानेकी-कृत्य पुनरर्धं कृत्वा तत एक-हीन-यशादि-वर्गांकैर्युक्तं कार्यम्। ततः स्वरांकानेकीकृत्य स्वर-प्रमितं रूपं रूपं युक्तं कार्यम्। पश्चात् सकलान् स्वरांकार्धितांकान् वर्गांकांश्चैकीकृत्य ततोविधूमितादि-संस्कारो विधेयो, गुणकः स्यात्। रद-वेद(४३२)-मितो गुण्यस्तेन गुणकेन गुणिते षोडशभिर्युते च जातो मूल-ध्रुवक-राशिः। पुनस्तन्मध्ये स्व-स्व-क्षेपका निक्षेप्यास्ततः स्व-स्व-संख्या विहृत्य लब्धं त्याज्यं प्रयोजना-भावात्। तदा यदवशिष्टं तत्सैकं कार्यं, क्रमेण च संवत्सरादिकं ज्ञेय-मिति।

इस प्रकार प्रश्नकालीन शब्दों के वर्णांक एवं स्वरांकों से मूलराशि बनाकर अपने-अपने क्षेपक जोड़कर अपने-अपने विकल्पों का भाग देकर शेषतुल्य गतवर्ष आदि होते हैं तथा उनमें १-१ जोड़कर वर्त-मान वर्ष आदि का ज्ञान किया जाता है।

उक्त प्रक्रिया का स्पष्टीकरण। नष्ट-जातकानयन की उक्त रीति में गुण्य ४३२ ही रहता है; किन्तु गुणक में संस्कार किया जाता है। उदाहरण। प्रश्नकर्ता द्वारा उच्चारित शब्द अविधूमित हो तो २ घटाना चाहिए; यवर्ग के अक्षर अविधूमित होते हैं। अतः प्रश्नकर्ता के द्वारा उच्चारित यवर्ग के अक्षरों के अंकों में से २ घटाया जाता है। शवर्ग धूमित होता है। अतः उसके अक्षरों के अंकों में से १-१ घटाया जाता है। ऋ, ॠ, लृ एवं ॡ, ये चार स्वर नपुंसक होते हैं। तथा अं एवं अः इन दोनों को 'सर्ग' कहते हैं। गुण्य एवं गुणक के घात में १६ जोड़ने पर ध्रुव राशि होती है। कभी-कभी यवर्ग में १ जोड़ा जाता है और फिर यवर्ग तथा शवर्ग में १ घटाया जाता है। तात्पर्य यह है कि प्रश्नकर्ता के द्वारा कहे गये शब्द के स्वरांकों में १-१ जोड़कर उनका योग कर लेना चाहिए। फिर वर्गों को आधा कर लेना चाहिए। और फिर वर्णों के अंकों में अविधूमित आदि संस्कार करके उन सब अंकों का योग कर लेना चाहिए। इस योग

को गुणक कहते हैं। इस संस्कृत गुणक से गुण्य ४३२ को गुणाकर गुणनफल में १६ जोड़ने पर मूल या ध्रुव राशि हो जाती है।

इस प्रकार साधित मूलराशि या ध्रुवराशि में अपने-अपने क्षेपक जोड़कर अपनी-अपनी संख्याओं से भाग देना चाहिए। सभी जगह लब्धि को छोड़ देना चाहिए तथा शेष में सर्वत्र १ जोड़कर क्रमशः वर्ष आदि का ज्ञान करना चाहिए।

अथेदानीं मतान्तरतो नष्ट-जातकमुच्यते

तत्रादौ पिण्डानयनार्थं स्वरांका (षोडश), वर्णांकाश्च जैमिनीय-सूत्रस्य टीका-स्थ-पद्यतः प्रदर्श्यन्ते।

३-३५ क-ट-प-य-वर्ग-भवैरिह, पिण्डान्त्यैरक्षरैरंकाः।
नि-त्र्यचि शून्यं ज्ञेयं, तथा स्वरे केवले कथितम्॥

अस्यार्थः। केति। काद्याः ९, टाद्याः ९, पाद्याः ५, याद्याः ८, इत्येते वर्गभवैर्वर्गोत्पन्नैः पिण्डान्त्यैः, अक्षरैः, अंका ज्ञेयाः। ततः नि-त्रि-अचि च शून्यं ज्ञेयम्। तथा केवले स्वरेपि शून्यं कथितमिति।

अथाधुना संवत्सरादीनां ध्रुवांकाः प्रदर्श्यन्ते।

३-३६ दन्ताष्टौ दिग्-दिनकरा धृतिरश्वा मही-यमाः।
नखा इमे ध्रुवांकाः स्युः क्रमेण वत्सरानजात्॥

दन्तेति। दन्ता द्वात्रिंशदित्यादयः क्रमेण संवत्सर-मास-पक्ष-तिथि-नक्षत्र-लग्न-योग-वारादीनां ध्रुवांका ज्ञेयाः। अथ तेषां क्षेपकाः।

३-३७ भुजङ्गम-नभश्चन्द्रा द्विस्तर्क(६)स्मरसायकाः(५)।
षष्टिस्त्र्यश्वाश्च षण्णागा नगाक्षा द्वि-भुजङ्गमाः॥

३-३८ संवत्सरादिषु क्षेपाः कथिता मुनि-पुङ्गवैः।

अस्यार्थः। भुजङ्गमेति। भुजङ्गमाः अष्टौ, नभः शून्यं, चन्द्रः एकः। अंकानां वामतो गतिरित्यनेन विधिना जातं अष्टोत्तरशतम्। शेषं स्पष्टम्। अथाधुना रव्यादीनां ग्रहाणां ध्रुवांकाः प्रदर्श्यन्ते।

३-३९ त्रिंशन्नृपाः स्वर्ग-रदा गुण-रुद्राश्च द्विजिनाः।
रागिण्यो ध्रुवका भानोः क्रमेण गदिता बुधैः॥

अस्यार्थः। त्रिंशदिति। त्रिंशद् इत्यादयो भानोः सूर्यात् क्रमेण बुधैर्ध्रु-

वका गदिता उक्ताः। शेषं स्पष्टम्। अथ तेषां क्षेपकाः।

३-४० क्वभ्रैकेब्धि-शरा देवाः खाब्धयश्चक्रवर्तिनः।
अक्षा वेद-दिशो गागाः क्षेपकाः क्रमतो रवेः॥

अस्यार्थः। क्विति। कुरेकः, अभ्रं शून्यं, एकः प्रसिद्धः अङ्कानामित्या-यादिना जातमेकोत्तर-शतम्। शेषं स्पष्टम्।

नष्ट-जातक के ज्ञान की बारहवीं रीति

इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम पिण्डानयन के लिए स्वरांक एवं वर्णांक जानने की रीति प्रस्तुत है।

ककार से लेकर झकार तक के वर्णों की १ से ६ तक संख्या तथा टकार से लेकर धकार तक के वर्णों की भी १ से ६ तक संख्या होती है। पकार से मकार तक के वर्णों की १ से ५ तक संख्या होती है और यकार से हकार तक के वर्णों की १ से ८ तक की संख्या होती है। नकार, अकार एवं व्यञ्जन रहित अकार आदि स्वरों को शून्य कहा गया है। जहां संयुक्त अक्षर हो वहां अन्तिम अक्षर का अंक लेना चाहिए। व्यञ्जन सहित अकार आदि मात्राओं के १ से लेकर १६ तक अंक होते हैं।

संवत्सर आदि के ध्रुवांक हैं: संवत्सर ३२, मास ८, पक्ष ११, तिथि १२, नक्षत्र १८, लग्न ७, योग २१ एवं वार २०।

संवत्सर आदि के क्षेपक हैं: संवत्सर १०८, मास ५६, पक्ष ५६, तिथि ६०, नक्षत्र ७३, लग्न ८६, योग ८२ एवं वार ५७।

सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवांक हैं: सूर्य ३०, चन्द्र १६, मंगल २१, बुध ३२, गुरु ११३, शुक्र २४, शनि २४ एवं राहु ३६।

ग्रहों के क्षेपक हैं: सूर्य १०१, चन्द्र ५४, मंगल ३३, बुध ४०, गुरु ६, शुक्र ५३, शनि १०४ एवं राहु ७७।

अथ साम्प्रतं मया पिण्डाद्यानयनं प्रदर्श्यते

3-41 प्रश्न-वर्णाङ्क-योग-घ्नी मात्राङ्कानां च या युतिः।
मात्रा-वर्णाङ्क-संयुक्ता द्व्याढ्या प्रश्नाक्षरैर्युता॥

3-42 पिण्डं तत् स्व ध्रुव-क्षेप युक्तं स्व-भानु-भाजितम्।
शेषं वर्षादीनाद्याश्च ग्रहाः स्युर्नष्ट-जातके॥

अनयोरर्थः। प्रश्नेति, पिण्डमिति च। पृच्छा-काले सूक्ष्माक्षरैः प्रश्ना ग्राह्याः। प्रष्टुर्मुख-निःसृतानां फलादीनामक्षराणां या पंक्तिस्तत्र-स्थ-वर्णाङ्कानां योगः कार्यः। ततो मात्रांकानां च युतिः कार्या, सा वर्णांक-योगेन गुणिता कार्या, ततो मात्रा-वर्णांकैः संयुक्ता, ततो द्वाभ्यां युक्ता पुनः प्रश्नाक्षरैर्युक्ता पिण्डं भवेत्। तत् स्व-ध्रुव-क्षेप-युक्तं निज-ध्रुवक-क्षेपकैर्युक्तं तत. स्व-मान-भाजितं संवत्सरादीनां क्षेपेण षष्टि-द्वादश-पक्षादि-मानेन भाजितं कार्यं, ततश्च शेषं वर्षादि ज्ञेयम्। एवं नष्ट-जातके पिण्डतो ग्रहानयनमपि ज्ञातव्यम्।

बारहवीं रीति में पिण्डसाधन की विधि

अव पिण्ड आदि के ज्ञान की विधि द्रष्टव्य है। नष्ट-जातक में प्रश्नकर्ता द्वारा उच्चारित फल आदि शब्दों के वर्णांकों का योग करना चाहिए। फिर मात्राओं के अंकों का योग करना चाहिए। तत्पश्चात् वर्णांक-योग को मात्रांक योग से गुणाकर उसमें २ जोड़ना चाहिए। फिर उसमें वर्णांकों तथा मात्रांकों का योग जोड़ने से फिर प्रश्न की अक्षर संख्या जोड़ने से पिण्ड होता है। उक्त पिण्ड में अपने-अपने ध्रुवांक एवं क्षेपक जोड़कर अपने-अपने मान से भाग देने पर शेष जन्मकालीन वर्ष आदि होते हैं।

अत्रोदाहरणं प्रदर्श्यते। पृच्छाकाले प्रष्टुर्मुख-निःसृता वर्णा, जन्म-पत्रं क्रियते इति। वर्णांकाः ज ८, न् ०, म ५, प १, त्रं ६।२, क्रि १।२, य १, ते ६। अत्र वर्णानां योगः ३२। ततो मात्रांकाः १, १, १, १, ३, १, ११। एषां योग १९। अयं वर्णांक-योगेन (३२) गुणितो जातः ६०८। ततो द्वाभ्यां युक्तः, ६१०। ततो वर्ण-मात्रांक-योग (५१)-युक्तो जातः ६६१। पुनः प्रश्नाक्षरै (७) र्युक्तो जातं ६६८ पिण्डम्।

संवत्सरार्थे तद् द्वात्रिंशता ध्रुवकेण युक्तं (७००) अष्टोत्तरशत-सम्मि-तेन च क्षेपेण युक्तं ८०८, षष्टि-भक्ते शेषं २८ प्रभवाद्याः संवत्सराः ७३२ प्रष्टुर्जन्म-काले ज्ञेयाः। मासार्थे पिण्डं ६६८ स्व-ध्रुव-क्षेप (६४)-युक्तं द्वादश-भक्ते शेषं शून्यं मार्गादितः कार्तिको मासः पक्षार्थे पिण्डं ६६८ स्वध्रुव-क्षेप (६६)-युक्तं ७३४। द्वाभ्यां भक्ते शेषं शून्य प्राप्तं, तेन शुक्लपक्षः। तिथ्यर्थे पिण्डं ६६८ स्वध्रुव-क्षेप (७२) युक्तं ७४० पञ्चदश-भक्ते शेषं ५, पञ्चमी तिथिः।

इस विधि को उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हैं। अपने नष्ट-जातक के लिए प्रश्न करते समय प्रश्नकर्ता ने कहा, 'जन्मपत्रं क्रियते।' इन शब्दों में वर्णों के अंक अग्रलिखित हैं : ज् ८, न् ०, म् ५, प् १, त् ६, र् २, क् १, र् २, य् १ एवं त् ६ और इनका योग ३२ हुआ। उक्त शब्दों के मात्रांक हैं अ १, अ१, अ१, अं १, इ ३, अ १, ए ११। इनका योग १९ हुआ। फिर वर्णांकों के योग को मात्रांकों के योग से गुणा करने पर ३२×१९=६०८ हुआ। इसमें २ जोड़ने से ६०८+२=६१० और उसमें भी वर्णांकों एवं मात्रांकों का योग (३२+१९=)५१ जोड़ने पर ६६१ हुआ। और, इसमें भी प्रश्नाक्षरों की संख्या ७ जोड़ने से ६६८ हुआ। यही पिण्ड हुआ।

संवत्सर जानने के लिए पिण्ड में संवत्सर का ध्रुवांक ३२ तथा क्षेपक १०८ जोड़ने पर (६६८+३२+१०८)=८०८ हुआ। इसमें ६० का भाग देने से शेष २८ रहा। अतः प्रभव से २८वें जय नामक संवत्सर में जन्म हुआ। मासज्ञान के लिए पिण्ड में मास का ध्रुवांक ८ तथा क्षेपक ५६ जोड़कर १२ का भाग देने से शेष शून्य रहा। अतः मार्गशीर्षादि से गणना करने पर कार्तिक मास में जन्म हुआ। पिण्ड में पक्ष का ध्रुवांक १० तथा क्षेपक ५६ जोड़ा तो ७३४ हुआ। इसमें २ का भाग देने से शून्य शेष वचा। अतः शुक्ल पक्ष में जन्म हुआ। तिथ्यानयन के लिए पिण्ड में तिथि का ध्रुवांक १२ और क्षेपक ६० जोड़ा, तो ६६८+१२+६०=७४० हुआ। इसमें १५ का भाग देने से ६ शेष वचा। अतः पञ्चमी तिथि को जन्म हुआ।

अत्र विशेषः

3-43 **मासार्थे मुनि-संयुक्ते तिथ्यर्थे वह्नि-चन्द्रयोः।**

इति केचित्पठन्ति। ततो नक्षत्रार्थे पिण्डं ६६८ स्व-ध्रुव-क्षेप (९१) युक्तं भक्ते शेषं ३, कृत्तिका नक्षत्रम्। लग्नार्थे पिण्डं स्व-ध्रुव-क्षेप (९३)-युक्तं ९६१, द्वादश-भक्ते शेषं ५, सिंह-लग्नम्। योगार्थे पिण्डं स्वध्रुवक्षेप (१०२)-युक्तं ७७०, सप्तविंशत्या भक्ते शेषं १४, हर्षण-योगः। वारार्थे पिण्डं ६६८ स्व-ध्रुव-क्षेप (७८)-युक्तं ७४६, सप्त-भक्ते शेषं ४ बुधवारः।

कुछ आचार्यों का विचार है कि मास के लिए ध्रुवांक ७ तथा तिथि

के लिए १३ ध्रुवांक जोड़ना चाहिए। नक्षत्रसाधन के लिए पिण्ड में उसका ध्रुवांक १८ तथा क्षेपक ७३ जोड़ा तो, (६६८+१८+७३=) ७५९ हुआ। इसमें २७ का भाग देने से ३ शेष रहा। अतः कृत्तिका नक्षत्र में जन्म हुआ। पिण्ड में लग्न का ध्रुवांक ७ तथा क्षेपक ८६ जोड़ा, तो (६६८+७+८६=) ७६१ हुआ। उसमें १२ का भाग देने से ५ शेष वचा। अतः सिंह लग्न में जन्म हुआ। पिण्ड में योग का ध्रुवांक २० तथा क्षेपक ८२ जोड़ने पर (६६८+२०+८२=) ७७० हुआ। इसमें २७ का भाग देने से १४ शेष रहा। अतः हर्षण योग में जन्म कहना चाहिए। वार जानने के लिए पिण्ड में उसका ध्रुवांक २१ तथा क्षेपक ५७ जोड़ा तो ७४६ हुआ। उसमें ७ का भाग देने से ४ शेष बचा। अतः बुधवार में जन्म हुआ।

अथ ग्रहाणां साधनं क्रियते। इह पूर्वागत-पिण्डं ६६८, स्व-ध्रुव-क्षेप १३१ युक्तं ७९९, द्वादश-हृते शेषं ७, सप्तमे रविः। स्व-ध्रुव-क्षेप (७०)-युक्तं ७३८, रवि-हृच्छेषं ६, चन्द्रः। स्व-ध्रुव-क्षेप (५४)-युक्तं ७२२, रवि-हृच्छेषं २, भौमः। स्वः-ध्रुव-क्षेप (७२)-युक्तं ७४०, रवि-हृच्छेषं ८ बुधः। स्व-ध्रुव-क्षेप (११९)-युक्तं ७८७ रवि-हृच्छेषं ७, गुरुः। पिण्डं स्व-ध्रुव-क्षेप (७७)-युक्तं ७४५ रवि-हृच्छेषं १, शुक्रः। पिण्डं स्व-ध्रुव-क्षेप (१२८)-युक्तं ७९६, रवि-हृच्छेषं ४, शनिः। स्व-ध्रुव-क्षेप-(११३)-युक्तं ७८१, रवि हृच्छेषं १, राहुः इति।

अव ग्रहों का साधन प्रस्तुत किया जा रहा है। सूर्य का ज्ञान करने के लिए पिण्ड में उसका ध्रुवांक ३० तथा क्षेपक १०१ जोड़ा तो (६६८+३०+१०१=) ७९९ हुआ; इसमें १२ का भाग देने से ७ शेष रहा। अतः तुला राशि में सूर्य हुआ। चन्द्रमा की स्थिति जानने के लिग पिण्ड में उसका ध्रवांक १६ तथा क्षेपक ५४ जोड़ा गया, तो ७३८ हुआ, जिसमें १२ का भाग देने पर ६ शेष वचा। अतः कन्या राशि में चन्द्रमा हुआ। पिण्ड में मंगल का ध्रुवांक २१ तथा क्षेपक ३३ जोड़ा, तो ७२२ हुआ, इसमें १२ का भाग देने से २ शेष रहा अतः वृष राशि में मंगल हुआ। पिण्ड में बुध का ध्रवांक ३२ तथा क्षेपक ४० जोड़ने से ७४० हुआ। इसमें १२ का भाग देने पर ८ शेष वचा अतः वृश्चिक राशि में बुध हुआ। संवद्ध ध्रुवांक ११३ और क्षेपक ६ को पिण्ड ६६८ में जोड़ने से प्राप्त योगफल में १२ का भाग देने पर

जो संख्या ७ शेष रही उसके आधार पर तुला राशि में गुरु हुआ। शुक्र की स्थिति जानने के लिए पिण्ड में उसका ध्रुवांक २४ तथा क्षेपक ५३ जोड़ने पर उसमें १२ का भाग देने से १ शेष रहा अतः मेष राशि में शुक्र हुआ। पिण्ड में शनि का ध्रुवांक २४ तथा क्षेपक १०४ का जोड़ ७९६ हुआ और १२ का भाग देने से ४ शेष रहा। अतः कर्क राशि में शनि हुआ। राहु की स्थिति जानने के लिए पिण्ड में राहु का ध्रुवांक ३६ तथा क्षेपक ७७ जोड़ा (६६८+३६+७७=)७८१। १२ का भाग देने से एक शेष वचा। अतः मेष राशि में राहु हुआ। तथा, इसमें ६ जोड़ने से तुला राशि में केतु हुआ।

अथ सम्प्रति चिन्तामणि-मतेन स्वर-वर्णांकादयः प्रदर्श्यन्ते

3-44 अकारादि-स्वरा अंका नृप-संख्याः प्रकीर्तिताः।
ककाराद्याश्च वर्णांका वर्गांकाश्च परिस्फुटाः॥
3-45 तेभ्यः सूर्यादयः खेटा राशि-नक्षत्र-योगकाः।
तिथयश्चैव वाराश्च चिन्तामणि-मते स्फुटम्॥

अनयोर्व्याख्या। अकारादीति, तेभ्य इति च। अकारादि-स्वरा येकारादयः स्वरा अचः, तेषां नृप-संख्याः षोडश-संख्याः प्रकीर्तिताः कथिताः। अत्र ऋकारादीनां चतुर्णां स्वराणां षण्ड-संज्ञा नोक्ताः। ककाराद्या ये वर्णास्तेषामंकाः क्रमेण ग्राह्याः। यथा काद्याः ५, चाद्याः ५, टाद्याः ५, ताद्याः ५, पाद्याः ५, याद्याः ४, शाद्याः ४। इति ककारादिवर्णानामंका ज्ञेयाः। वर्गांकास्तु यथा अवर्गः १, कवर्गः २, चवर्गः ३, टवर्गः ४, तवर्गः ५, पवर्गः ६, यवर्गः ७, शवर्गः ८। इति ककारादीनां वर्णानाम् अवर्गादीनां वर्गाणां चांकाः संख्याः परिस्फुटाः स्पष्टं ज्ञेयाः। तेभ्य इति। तेभ्यः अकारादि-स्वरेभ्यः, ककारादि-वर्णेभ्यः, अवर्गादि-वर्गेभ्यश्च वर्ग-वर्ण-प्रमाणं च स-स्वरं ताडितं मिथः, इत्यादिना विधिना पृच्छा-काले प्रष्टुर्मुख-निःसृत-फलाद्यक्षर-पंक्तिः पिण्डमानयेत्। तस्मात् सूर्यादयः खेटा रव्यादयो ग्रहा राशि-नक्षत्र-योग-तिथि-वाराश्च साध्याः। इति चिन्तामणि-मते स्फुटं नष्ट-जातकं ज्ञेयमिति।

इति श्रीमत्पण्डित-मुकुन्द-दैवज्ञ-संगृहीते नष्ट-जातके केरलशास्त्रीय-त्
युक्ति-प्रकरणं तृतीयं समाप्तिमगम।

चिन्तामणि के मतानुसार स्वर वर्णों के अंक आदि

अकार आदि स्वरों की १ से १६ तक संख्या वताई गई है। यहां ऋ, ॠ, लृ एवं ॡ इन चारों को नपुंसक मानकर छोड़ा नहीं गया। वर्णों में ककार आदि की संख्या १ से ५ तक मानी गई है। इसी प्रकार चकार आदि, टकार आदि, तकार आदि एवं पकार आदि की संख्या भी १ से ५ तक मानी जाती है। यकार आदि तथा शकार आदि की संख्या ४ होती है। वर्गों में अवर्ग की १, कवर्ग की २, चवर्ग की ३, टवर्ग की ४, तवर्ग की ५, पवर्ग की ६, यवर्ग की ७ तथा शवर्ग की ८ होती है। इस प्रकार स्वर, वर्ण एवं वर्गों की संख्या स्पष्ट रूप से जानी जा सकती है।

प्रश्न करते समय प्रश्नकर्ता द्वारा बोले गये शब्दों के स्वर, वर्ण एवं वर्गों के अंक उक्त रीति से ज्ञात कर पिण्डानयन करना चाहिए और फिर उस पिण्ड से सूर्यादि ग्रहों का तथा राशि, नक्षत्र, योग, तिथि एवं वार का आनयन करना चाहिए।

इस प्रकार श्रीमान् पण्डित मुकुन्द दैवज्ञ द्वारा संगृहीत ग्रन्थ नष्ट-जातक के केरलशास्त्रीययुक्ति-नामक तृतीय प्रकरण की श्री शुकदेव चतुर्वेदी की भावार्थ-बोधिनी नामक हिन्दी टीका समाप्त हुई।

(४)

लग्न-भ्रान्ति-निराकरण-प्रकरणं

निषेक-लग्नादितो जन्म-लग्न-शुद्धिः

4-1 जन्माङ्गं मति-भे निषेक-तनुतो, वा मान्दिभाद् ग्लौ-भ-पाद्
ग्लौ-भाद्वा गुलिकाच्च मान्दि-ग-भ-पात्कोणे विलग्नं भवेत् ।
तत्तत्खेचर-भाग-राशित उतास्तर्क्षाणि तेभ्यः सुते
भाग्ये वोदय-भं च मान्दि-गुलिकाङ्कांशर्क्षतो दैव-भे ।।

4-2 धी-भेङ्गं गुलिकर्क्षतो विधु-भ-पाच्चास्तालयं यत्ततः
कोणेङ्गं विधु-भेशतो विषम-भेङ्गं वेन्दुभं स्यात् पुरम् ।
मान्दि-स्थांश-पति-स्थ-भाग-गृहतो धी-धर्म-भेङ्गं तनोर
यज्जाया-भवनं ततः शुभ-सुतेब्जे शुद्धमङ्गं मतम् ।।

अनयोर्व्याख्या । जन्माङ्गमिति, धी-भ इति च । निषेक-तनुतो निषेक-कालीन-लग्नाद् अर्थाज्जन्म-कालीन-चन्द्र-राशेः मति-भे पञ्चम-भावे यो राशिस्तज्जन्म-लग्नं वाच्यम् । तेन लग्नेन्द्वोः साम्यमाह ग्रन्थान्तरे ।

4-3 जन्मकाले तु यश्चन्द्रो निषेके स भवेत् तनुः ।
निषेक-कालिकश्चेन्दुर् लग्नं स्याज्जन्म-कालिकम् ।।

वा अथवा मान्दि-भात् (मान्दि-स्पष्टीकरणं त्वत्र व्याख्यान्ते द्रष्टव्यं) मान्दि-राशितः, ग्लौ-भ-पात् चन्द्र-स्थ-राशीशतः, ग्लौ-भात् चन्द्र-स्थ-राशितः, वा अथवा गुलिकाच्च (गुलिक-साधनं त्वत्र व्याख्यान्ते द्रष्टव्यम् ।) गुलिक-स्थ-राशितः, मान्दि-ग-भ-पात् कोणे नवमे पञ्चमे वा यो राशिः तद्विलग्नं भवेत् ।
उत अथवा तत्तत्-खेचर-भाग-राशितो मान्यादीनां ये नवांश-राशयः,

तथा ये तदाक्रान्त-राशयः स्युः तेभ्यः सुते पञ्चमे, भाग्ये नवमे वा ये राशयः तदुदयं जन्म-लग्नं भवेत् ।

वा अथवा मान्दिर्गुलिकश्चोभौ ययोर्नवांश-राश्योर्वर्तेते ताभ्यां दैव-भे नवमे, धी-भे पञ्चमे यौ राशी स्यातां तदङ्गं लग्नं वाच्यम् । अथवा गुलिकर्क्षतो गुलिकाक्रान्त-राशेः वा चन्द्राक्रान्त-राशि-स्वामि-स्थ-राशेर्यो सप्तम-राशिः, ततः कोणे नवमे पञ्चमे वा यो राशिः तदङ्गं लग्नं ज्ञेयम् । अथवा चन्द्राक्रान्त-राशि-स्वामी यस्मिन् राशौ वर्तते ततो विषमे विषम-स्थाने यो राशिः तदङ्गम् । अथवा इन्दु-भं चन्द्राक्रान्त-राशिः पुरं लग्नं मतम् । अथवा मान्दिर्यस्मिन्नवांशे विद्यते तस्य स्वामी यस्मिन्नवांशे वर्तते ततो धी-धर्म-भे पञ्चमे नवमे राशौ वाङ्गं लग्नं वाच्यम् ।

जन्मलग्न की शुद्धि

अभी तक हमने विभिन्न पद्धतियों से नष्ट-जातक ज्ञान के प्रकारों का अध्ययन किया है । किसी भी पद्धति से नष्ट कुण्डली वना लेने के वाद उस लग्न की प्रामाणिकता की परख करना परम आवश्यक है । एतदर्थ प्रस्तुत पुस्तक का यह चौथा प्रकरण है । लग्न की प्रामाणिकता जानने के लिए विविध प्रकारों में एक प्रकार है कि गर्भाधान से जन्म-लग्न की शुद्धि की परीक्षा । आधान-लग्न से पञ्चम भाव की राशि जन्मलग्न होती है । 'जन्मकाले तु यश्चन्द्रो निषेके स भवेत्तनुः' इस प्रसिद्ध परिभाषा के अनुसार जन्मकालीन चन्द्रराशि आधान-लग्न होती है । अतः जन्मकालीन चन्द्रराशि से पञ्चम भाव की राशि को जन्म-लग्न मानना चाहिए । अथवा, मान्दि की राशि से, चन्द्रमा जिस राशि में हो उसके स्वामी से, चन्द्रराशि से, गुलिक जिस राशि में हो उसके या मान्दि जिस राशि में हो उसके स्वामी से, पञ्चम या नवम भाव की राशि जन्मलग्न होती है । अथवा, गुलिक आदि जिस नवांश में हो उससे पञ्चम या नवम भाव की राशि जन्मलग्न होती है । या, गुलिकाक्रान्त राशि से अथवा चन्द्राक्रान्त राशि का स्वामी जिस राशि में हो उससे सातवीं राशि से पञ्चम या नवम भाव की राशि जन्म-लग्न होती है ।

अथ सांप्रतं मान्दि-स्पष्टीकरण-रीतिः ।

4-4 उत्कृति (२६) र्यम-यमा (२२), धृति (१८)-
शक्रा (१४) दिग् (१०)-रसा (६)-शिवन (२), इनाद् घटिकाः
स्युः ।

तद्धत-द्यु-रजनीमिति
खाग्नि-भाजितास्त-दिनतो जनिरार्केः ॥

आर्केर्जनिर्मान्दिः । अन्यत्सुगमम् ।

मान्दि के साधन की विधि बताते हैं। यद्यपि कुछ आचार्यों का मत है कि मान्दि और गुलिक एक ही हैं, किन्तु आचार्य प्रवर ने यहां मान्दि साधन की विधि दी है, अतः हम दोनों में भेद मानकर ही चलेंगे। मान्दि शब्द का अर्थ है—मन्द (शनि) की सन्तान। मान्दि की स्थिति जानने के लिए दिनमान की घड़ियों को निम्नलिखित ध्रुवांकों से गुणा करना चाहिए। जिस दिन के लग्न की शुद्धि करनी अभीष्ट हो, उसी वार के अंकों से दिन-घटिकाओं को गुणा करके ३० का भाग देना चाहिए। लब्धि ही मान्दि की राशि है। यदि लब्धि १२ से अधिक हो तो उसमें भी १२ का भाग देकर शेषतुल्य राशि को मान्दि की राशि समझना चाहिए। गुणांक इस प्रकार है—

रविवार—२६
सोमवार—२२
मंगलवार—१८
बुधवार—१४
बृहस्पतिवार—१०
शुक्रवार—६
शनिवार—२

अथ गुलिक-साधनम् ।

4-5 घस्र-क्षपा-भुजग-भाग-मितः स-खण्डो
मार्तण्ड-पूर्व-दिवस-क्रमतो दिवेह ।
शैलाङ्ग-बाण-युग-राम-यमैक-तुल्यो
मन्दांशको निगदितो गुलिको रजन्याम् ॥

4-6 वारेश-पञ्चम-मुखात्त्रि-यमेन्दु-शैल-
षट् सायक-श्रुति-मितो दिवसस्य रात्र्याः ।

मानं भुजङ्ग-विहृतं च फलं स्वखण्ड-
संताडितं भवतु मन्द-सुतेष्टकालः ॥

4-7 भानूदयात्स-दिवसे निशि घस्र-माना-
द्योऽतश्च सायन-पतङ्गनिजोदयाभ्याम् ।
आनेयमङ्ग-वदिहोदयमार्किपुत्रः
कालादयो गुलिक-वत्परिसाधनीयाः ।

अव 'गुलिक' साधन वताते हैं। स्थानीय दिनमान को ८ से भाग देकर, वरावर-वरावर आठ भाग किए जाते हैं। प्रत्येक खण्ड का एक अधिपति ग्रह होता है। जिस खण्ड का अधिपति 'शनि' होता है, वही 'गुलिक' कहलाता है। अधिपति ग्रहों की गणना उसी ग्रह से शुरू करनी चाहिए, जिसका वार लग्न के दिन हो।

रात्रि में गुलिक साधन के लिए रात्रिमान को ८ वरावर भागों में बांट लेना चाहिए। अधिपति की गणना शुरू करने के लिए वारेश से पंचम ग्रह का पहला गुलिक माना जाता है। वाद में सभी ग्रहों के खण्ड वारानुक्रम से ही होते हैं। जैसे बुधवार की रात में गुलिक निकालने के लिए बुध से पांचवें सूर्य का पहला गुलिक खण्ड माना जाएगा।

गुलिक की राशि से यदि नष्ट गणितागत लग्न की राशि पहली, तीसरी, पांचवीं, नवीं व ग्यारहवीं हो तो लग्न को शुद्ध मानना चाहिए।

अथ लग्न-भ्रान्ति-निराकरणमाह

तनोर्लग्नाद् यज्जाया-भवनं सप्तम-स्थानं ततस्तस्मात् शुभ-सुते नवमे पञ्चमे वाब्जे चन्द्रे सति तदा शुद्धमङ्गं भ्रान्ति-रहित-लग्नं मतं ज्ञेय-मिति। तथा च ग्रन्थान्तरे।

4-8 चन्द्र-राश्यधिपात् कोणे जन्म-लग्नमिति स्फुटम् ।
तत्सप्तमात् त्रि-कोणे ता संशये सति संभवे ॥

इह पाठान्तरमपि दृश्यते ।

4-9 चन्द्र-लग्नाधिपो यत्र गत्त्रिकोणमथापि वा ।
तत्सप्तमात् त्रिकोणं वा सन्देहे लग्नमुच्यते ॥

मतान्तरे तु।

4-10 त्रि-कोणान्तर्गतं लग्नं चन्द्राच्छुद्धं वदेद् बुधः।
लग्नात् सप्त-त्रि-कोणान्तर्गते चन्द्रेथ वा तथा॥

4-11 चन्द्रे वा सप्तमे वापि ह्यु भय-त्रि कोणेपि वा।
जात-लग्नं न संदेह इति ज्योतिर्विदो विदुः॥

4-12 चन्द्रो राश्यधिपो वापि यत्र तत्सप्तमेपि वा।
एषां त्रि-कोणके वापि जन्म-लग्नमुदाहृतम्॥

जन्मलग्न में भ्रान्ति का निराकरण

अथवा, चन्द्राक्रान्त राशि ही लग्न होती है। या मान्दि जिस नवांश में हो, उसका स्वामी जिस नवांश में हो, उससे पञ्चम या नवम भाव की राशि जन्मलग्न होती है। और जन्मलग्न से जो सप्तम स्थान हो, उससे पञ्चम या नवम स्थान में चन्द्रमा होने पर लग्न को विना किसी हिचकिचाहट के शुद्ध मान लेना चाहिए। एक अन्य ग्रन्थ में यही विषय इस प्रकार है:

जन्मलग्न के वारे में सन्देह होने पर चन्द्रराशि का स्वामी जिस राशि में वैठा हो, उससे त्रिकोण की राशि को जन्मलग्न मानना चाहिए। अथवा चन्द्रराशीश से जो सप्तम स्थान हो उससे त्रिकोण की राशि को जन्मलग्न मानना चाहिए।

इस विषय में एक अन्य मत भी प्रचलित है। विद्वान् दैवज्ञ को चन्द्रमा से त्रिकोण में पड़ने वाली लग्न को शुद्ध वताना चाहिए। अथवा लग्न से जो सप्तम स्थान है, उससे त्रिकोण में चन्द्रमा होने पर लग्न शुद्ध होता है।

चन्द्र राशि में, उससे सप्तम राशि में या इन दोनों से त्रिकोणस्थ राशियों में निःसन्देह जन्मलग्न होता है, ऐसा ज्योतिष-शास्त्र के मर्मज्ञों ने कहा है।

चन्द्रमा या राशि का स्वामी जिस स्थान में हो उसमें या उससे सप्तम में अथवा इनसे त्रिकोण में जन्मलग्न वताना चाहिए।

इह प्रकारान्तरेण लग्न-सन्देह-निराकरणम्

4-13 यस्मिन्नृक्षे वसेद् भानुस्तदेव सप्तमेपि वा।
यावद् द्वि-प्रहरं पश्चाद् दिवा द्वादशभिः पुनः ॥

4-14 ऊर्नविंशति-भे रात्रौ तावद् यामो वसेद् द्वयम्।
चतुर्विंशति-भे पश्चाज्जात-लग्नमुदाहृतम् ॥

अन्यच्च।

4-15 यस्मिन्नृक्षे वसेद् भानुस्तदादि-सप्त-ऋक्षके।
द्वादशे च सप्तदशे तथैव पञ्चविंशतौ ॥

4-16 पूर्वापराह्ण-योगेन दिने रात्रौ यथाक्रमात्।

जन्मलग्न में भ्रान्ति का एक अन्य प्रकार से निराकरण

प्रातःकाल से दोपहर तक जन्म हो तो जिस नक्षत्र में सूर्य हो उसमें या उसके सप्तम नक्षत्र में जन्मलग्न होता है। दोपहर के वाद दिन में जन्म हो तो सूर्य के नक्षत्र से १२वें नक्षत्र में जन्मलग्न होता है। रात्रि के प्रारम्भिक दो प्रहरों में जन्म हो तो सूर्य के नक्षत्र से १९वें और यदि इसके वाद जन्म हो तो सूर्य के नक्षत्र से २४वें नक्षत्र में जन्मलग्न होता है।

एक अन्य आचार्य ने कहा है कि दिन के पूर्वाह्ण में जन्म हो तो सूर्य जिस नक्षत्र में हो उससे ७वें नक्षत्र में तथा अपराह्ण में जन्म हो तो सूर्य के १२वें नक्षत्र में जन्मलग्न होता है। रात्रि के पूर्वार्ध में जन्म हो तो सूर्य के नक्षत्र से १७वें नक्षत्र में और रात्रि के उत्तरार्ध में जन्म हो तो सूर्य के नक्षत्र से २५वें नक्षत्र में जन्मलग्न होता है।

अथवा प्रकारान्तरेण लग्न-भ्रान्ति-निराकरणम्

4-17 किं वैकता प्राण-पदाङ्ग-भागयोः शुद्धं विलग्नं गुलिकादुतेन्दुतः।
संचिन्तयेद्वीर्य-विहीनयोर्द्वयोर्लग्नं तदा विद् गुलिकाद्विचिन्तयेत् ॥

अस्य व्याख्यातः पूर्वं प्राण-पद-स्पष्टीकरणम्।

4-18 पलीकृताभीष्ट-घटी-दिनैर्हृतो
गृहादिकः प्राण-पदोस्फुटोर्क-युक्।

चरे स्थिरे द्वन्द्व-गृहे गते रवौ
क्रमाद्युतो भैः ख-गजाब्धि-सम्मितैः ॥

अस्य व्याख्या। किं वेति। किं वा अथवा प्राणपदस्य यो राशिस्तथा लग्नस्य यो नवांश-राशिस्तयोर्यद्येकता स्यात्तदा विलग्नं जन्म-लग्नं शुद्धं भ्रान्ति-रहितं वाच्यम्। उत अथवा गुलिकाद् वा इन्दुतश्चन्द्राद् लग्नं सञ्चिन्तयेद् विचारयेत्। यदा द्वयोः गुलिक-चन्द्रयोर्वीर्य-विहीनयोर्बल-रहितयोश्चेत्तदा गुलिकादेव लग्नं विचिन्तयेदिति। उक्तं च।

4-19 **असोः सुधांशोर्गुलिकाभिधस्य च यो वीर्य-युक्तोत्र ततो विलग्नभं।**
विचिन्तयेद्वीर्य-युते पुरे वशान्मान्देर्मृगाङ्के स-बले विधोः पुरम् ॥

अस्य व्याख्या। असोरिति। असोः प्राण-पदस्य, सुधांशोश्चन्द्रस्य गुलिकाभिधस्य चैषां मध्ये यो वीर्य-युक्तो वलवान् अत्र ततो विलग्न-भं विचिन्तयेत्। अथवा वीर्य-युते वलवति पुरे लग्ने तदा मान्देर्वशाद् लग्नं चिन्तयेत्। अथवा यदा मृगाङ्के चन्द्रे स-बले वल-युक्ते तदा विधोश्चन्द्रात् पुरं लग्नं चिन्तयेत्। तथा च।

4-20 **असोर्गृहे वासु-भ-तस्त्रि-कोण-भे**
वासोः स्मरे वासु-भ-तो यदस्त-भम्।
तस्मात्त्रिकोणाभिध-भे जनुस्तनु
र्मनूद्भवस्येतरथा पशोर्जनिः ॥

अस्य व्याख्या। असोरिति। वा अथवा असोर्गृहे प्राण-पद-राशौ, वा असु-भ-तः प्राण-पद-राशेः त्रि-कोण-भे पञ्चमे नवमे वा अथवा असोः प्राण-पदात् स्मरे सप्तमे। अथवा असु-भ-तः प्राण-पद-राशेर्यदस्त-भं सप्तम-राशिस्तस्मात् त्रि-कोणाभिध-भे मनूद्भवस्य मानवस्य जनुस्तनुर्जन्म-लग्नं ज्ञेयम्। यदा इतरथा अन्यथा चेत्तदा पशोश्चतुष्पदस्य जनिर्जन्म ज्ञेयम्।

जन्मलग्न में भ्रान्ति का तृतीय प्रकार से निराकरण

प्राणपद की जो राशि हो तथा लग्न के नवांश की जो राशि हो उन दोनों राशियों में यदि एकता हो तो बिना किसी सन्देह के लग्न को शुद्ध वताना चाहिए।

प्राणपद का स्पष्टीकरण। इष्टकाल के घटी-पलों को पल वनाकर उसमें दिन संख्या का भाग देना चाहिए। इस प्रकार प्राप्त राश्यादि लब्धि में राश्यादि जोड़ने से स्पष्ट प्राणपद होता है। यदि सूर्य चरराशि में हो तो उक्त प्राणपद में शून्य, स्थिरराशि में हो तो प्राणपद में ८ और यदि सूर्य द्विस्वभाव राशि में हो तो उक्त प्राणपद में ४ राशि जोड़नी चाहिए।

लग्न के बारे में भ्रान्ति होने पर गुलिक या चन्द्रमा से लग्न का विचार करना चाहिए। जव गुलिक एवं चन्द्रमा दोनों वलरहित हों तव गुलिक से ही जन्मलग्न का विचार करना चाहिए यही कथन अन्य शब्दों में प्रस्तुत है :

प्राणपद, चन्द्रमा एवं गुलिक, इन तीनों में जो वलवान् हो उससे लग्न की राशि का विचार करना चाहिए। लग्न के वलवान् होने पर मान्दि से लग्न का विचार करना चाहिए। अथवा चन्द्रमा के वलवान् होने पर चन्द्रमा से ही लग्न का विचार करना चाहिए। इस विषय में कुछ और वक्तव्य भी है :

सामान्यतया प्राणपद की राशि में अथवा प्राणपद की राशि से ५वीं या ९वीं राशि में मनुष्य का जन्मलग्न होता है। अथवा प्राणपद की राशि से सप्तम में या प्राणपद की राशि से जो सप्तम राशि हो उस से ५वीं या ९वों राशि में जन्मलग्न होता है। यदि इससे भिन्न लग्न हो तो उसमें पशु का जन्म कहना चाहिए।

वास्तव में १५ पल के वरावर समय को 'प्राण' कहते हैं। अतः प्राणपद साधन का एक प्रकार यह है कि इष्ट काल की घड़ियों में ४ से गुणा करना चाहिए।

इष्ट के पलों में १५ का भाग देकर जो लब्धि हो उसे पहली, घड़ियों को चार से गुणा करने से प्राप्त राशि में जोड़ देना चाहिए।

इस योग में १२ से भाग देने से जो शेष हो, वही प्राणपद की राशि होती है। १५ का भाग देने से जो शेष वचा हो उसे दुगुना करने से प्राणपद के अंश हो जाते हैं।

प्राणपद साधन का एक अन्य प्रकार यह है कि इष्ट को पलात्मक

बनाकर १५ का भाग देने पर लब्धि प्राणपद की राशि है। शेष को दो से गुणा करने पर अंश होते हैं। लेकिन राशि यदि १२ से अधिक आ रही हो तो १२ से भाग देकर शेष को ही (प्राणपद) मानना चाहिए। यदि सूर्य चरराशि में हो तो प्राणपद के राशि अंशों को सूर्य के राश्यंशों में जोड़ना चाहिए।

यदि सूर्य स्थिर या द्विस्वभाव राशि में हो तो सूर्य से पांचवीं या नवीं जो भी चर राशि हो, उसमें तथा सूर्य के अंशों में प्राणपद को जोड़ने से स्पष्ट प्राणपद होता है। स्पष्ट प्राणपद के राश्यंश लग्न के राश्यंश के बराबर ही होते हैं। अन्तर होने पर इष्ट काल में कुछ घटाना या बढ़ाना चाहिए।

शरीर-स्थ-तिल-मशकादि-चिह्न-वशतो लग्न-भ्रान्ति-निराकरणम्

4-21 **यस्मिनङ्गे संस्थितः सेन्दुरर्कस्तत्रांकोर्काङ्गारकौ यत्र यातौ।**
रक्तं चिन्हं तत्र, यत्रार्क-पुत्र-व्यालौ लक्ष्म श्यामलं तत्र वेद्यम् ॥

अस्य व्याख्या। यस्मिन्निति। यस्मिन्नङ्गे शीर्षाद्यवयवे सेन्दुः चन्द्रसहितोर्कः सूर्यः संस्थितस्तत्र तस्मिन्नङ्गेङ्कश्चिह्नं ज्ञेयम्। यत्र यस्मिन्नङ्गेर्काङ्गारकौ सूर्य-भौमौ यातौ प्राप्तौ तत्र रक्तं लोहितं चिह्नं वाच्यम्। यत्र यस्मिन्नङ्गेर्कपुत्र-व्यालौ शनि-राहू वर्तेते तत्र तस्मिन्नङ्गे श्यामलं नीलं लक्ष्म चिह्नं वेद्यम्।

तिल, मस्से आदि शारीरिक चिह्नों से लग्नभ्रान्ति का निराकरण

मेषादि द्वादश राशियां कालपुरुष के शीर्ष आदि अंगों में स्थित होती हैं। अतः कालपुरुष के जिस शीर्ष आदि अवयव का प्रतिनिधित्व करने वाली राशि में चन्द्रमा के साथ सूर्य हो, मनुष्य के शरीर के उस अंग में चिह्न अर्थात् तिल, मस्सा, लहसुन आदि होता है। कुण्डली में जिस राशि में सूर्य और मंगल हो, उस राशि के अंग में लाल रंग का चिह्न होता है। और जिस राशि में शनि एवं राहु हों

उस राशि के अंग में नीले रंग का चिह्न होता है। मेष आदि द्वादश राशियों के अंग हैं : मेष का सिर, वृष का मुख, मिथुन का वक्षस्थल, कर्क का हृदय, सिंह का पेट, कन्या का कमर, तुला का वस्ति या पेड़ू, वृश्चिक का गुप्तांग, धनु का टांग, मकर का घुटना, कुम्भ का जंघा और मीन का पैर।

वाम-भुजे वाम-प्रदेशे च चिह्न-ज्ञानम्

4-22 खले लये लेख-गुरौ विलग्ने किं भार्गवे वाम-भुजः स-चिह्नः।
साच्छे कुजे कार्यनुजाययाते वाम-प्रदेशे व्रण-सम्भवोङ्कः॥

अस्य व्याख्या। खल इति। लयेष्टमे खले पापे, विलग्ने लग्ने लेख-गुरौ बृहस्पतौ किमथ वा भार्गवे शुक्रे सति तदा स-चिह्नः चिह्न-युक्तो वामभुजो वाम-बाहुर्ज्ञेयः। अकार्यनुजाययाते द्वादश-षष्ठ-तृतीय-लाभ-गते साच्छे शुक्र-सहिते कुजे भौमे सति तदा वाम-प्रदेशे वाम-भागे व्रण-सम्भवो व्रणास्तित्वमङ्कश्चिह्नं ज्ञेयम्।

बायें हाथ एवं शरीर के बायें भाग में निशान

जिसकी कुण्डली में अष्टमस्थान में पापग्रह तथा लग्न में गुरु या शुक्र हो उसके बायें हाथ पर तिल, मस्से या लहसुन का निशान होता है। और यदि द्वाद्वश, षष्ठ, तृतीय या लाभ स्थान में शुक्र के साथ मंगल हो तो शरीर के वाम भाग में घाव का निशान होता है।

कटि-चिह्न-ज्ञानं वाम-पाद-चिह्न-ज्ञानं च

4-23 भे वाचि, भानौ घन-नैधनेस्रासितौ सहोत्थे कटिरङ्क-युक्ता।
हितेहि-कव्योरिनजे घने वास्रे ङ्कोंघ्रिमूले किमु वाम-पादे॥

अस्य व्याख्या। भ इति। वाचि द्वितीये भे शुक्रे घन-नैधने लग्नेष्टमे वा भानौ रवौ, सहोत्थे तृतीये अस्रासितौ भौम-शनी वर्तेते चेत्तदा कटिः चिह्न-युक्ता वाच्या।

हिते चतुर्थे अहि-कव्योः राहु-शुक्रयोः घने लग्ने इनजे शनौ अथवा अस्रे भौमे सति तदा अंघ्रि-मूले चरण-मूले किमु अथ वा वाम-पादेङ्क-श्चिह्नं ज्ञेयम्।

कमर एवं बांयें पैर में निशान

यदि द्वितीय स्थान में शुक्र, लग्न या अष्टम स्थान में सूर्य तथा तृतीय स्थान में मंगल एवं शनि हों तो कमर में चिह्न होता है।

यदि चतुर्थ स्थान में राहु एवं शुक्र हो तथा लग्न में शनि या मंगल हा तो पैर के तलुवे में या वायें पैर में चिह्न होता है।

राशि-समानावयवें चिह्नज्ञानम्

4-24 **भार्गव-दृष्टे यद्गृह-याते।**
सोम-सपत्ने तद्भ-समोङ्कः॥

अस्य व्याख्या। भार्गवेति। भार्गव-दृष्टे शुक्र-दृष्टे सोम-सपत्ने राहौ यद्गृह-याते यद्राशि-गते तद्भ-समः तद्राशि-समान-प्रदेशेङ्कश्चिह्नं ज्ञेयम्।

शरीर के किस अंग में निशान होगा, इसका निर्णय

जिस राशि में स्थित राहु पर शुक्र की दृष्टि हो, उस राशि के अंग में तिल, मस्से या लहसुन का चिह्न होता है।

अथेदानीं लिङ्गे गुदे च चिह्न-ज्ञानमुक्तम्

4-25 **लिङ्गे गुदे लक्षणमुद्गमेस्त्रे कोणे त्रि-कोणे कवि-लोकितेथ।**

अस्य व्याख्या। लिङ्ग इति। अस्त्रे भौमे उद्गमे लग्ने, कवि-लोकिते शुक्र-दृष्टे त्रि-कोणे नवमे पञ्चमे वा कोणे शनौ सति तदा लिङ्गे गुदे च लक्षणं चिह्नं ज्ञेयम्।

ग्रन्थान्तरे तु प्रकारान्तरेणोक्तम्।

4-26 **कुजे सौम्येथ वा लग्ने राहुः षष्ठ-त्रि-कोण-गः।**
लिङ्गे गुदे भवेच्चिह्नं तिल माषादिकं-स्फुटम्॥

गुप्तांगों में चिह्न

लग्न में स्थित मंगल पर शुक्र की दृष्टि होने पर तथा पंचम या नवम स्थान में शनि होने पर लिङ्ग या गुदा में चिह्न होता है। गुप्तांगों में

चिह्न जानने की एक अन्य रीति भी है। लग्न में मंगल या बुध हो तथा राहु षष्ठ या त्रिकोण में हो तो लिङ्ग या गुदा में तिल या मस्से का चिह्न होता है।

गुद-गोलक-चिह्न-ज्ञानम्

4-27 **विधौ विधौ त्र्याय-गदे विदीज्ये पुरे व्रणं वा गुद-गोलकाङ्कः।**

अस्य व्याख्या। विधाविति। विधौ नवमे विधौ चन्द्रे, त्र्याय-गदे तृतीय-लाभ-षष्ठे, विदि बुधे, पुरे लग्ने, इज्ये गुरौ सति तदा व्रणमथ या गुदे गोलक-चिह्नं भवेत्।

गुद-गोलक चिह्न

नवम स्थान में चन्द्रमा और तृतीय, एकादश या षष्ठ स्थान में बुध तथा लग्न में गुरु होने पर गुदा में व्रण या गोलक चिह्न होता है।

शिरसि व्रण-चिह्न-ज्ञानं तथा तत्र चिह्न-ज्ञानम्

4-28 **अङ्गारकेऽङ्गेऽङ्गिरसोङ्ग-सम्भवे-**
स्ते वा कवौ कं व्रण-लाञ्छितं स्मृतम्।
स-काव्य-चन्द्रे-कुटिले विलग्न-गे
के लक्षणं वीक्षण-चन्द्र-हायने॥

अस्य व्याख्या। अङ्गारक इति। अङ्गे लग्ने अङ्गारके भौमेस्ते सप्तमे चन्द्राभ्यां सहिते कुटिले भौमे विलग्न-गे लग्न-गते सति तदा वीक्ष्य चन्द्र-हायने द्वाद्वशे वर्षे के शिरसि लक्षणं चिह्नं भवेत्। तथा चोक्तं ग्रन्थान्तरे।

4-29 **लग्नात् सप्तमगो भौमः शुक्रो वापि बृहस्पतिः।**
चिह्नं मूर्ध्नि स्थितं ज्ञेयं जातकस्य न संशयः॥

4-30 **यदा शुक्रोथ वा भौमो लग्न-स्थोपि निशाकरः।**
द्वादशेब्दे भवेत्तस्य मस्तके चिह्न-दर्शनम्॥

सिर पर चिह्न

लग्न में मंगल और सप्तम स्थान में गुरु या शुक्र होने पर सिर पर चिह्न होता है। तथा लग्न में शुक्र एवं चन्द्रमा के साथ मंगल होने पर १२वें वर्ष में सिर पर चोट आदि का निशान पड़ता है। लग्न में ७वें स्थान में मंगल, शुक्र या गुरु हो तो जातक के सिर पर निःसन्देह चिह्न होता है। यदि लग्न में शुक्र, मंगल या चन्द्रमा हो तो १२वें वर्ष में मस्तक पर निशान पड़ जाता है।

वाम-कर्णे, शिरसि, वाम-तन्वां च चिह्न-ज्ञानम्

4-31 कल्पे कवौ काल-गते बिले-शये वाम-श्रुतौ मूर्ध्नि किमंकमीरयेत्।
भुजङ्गमेनङ्ग-गृहेङ्गिरोभवे गात्रोप-गे वाम-तनूः स-लक्षणा॥

अस्य व्याख्या। कल्प इति। कवौ शुक्रे कल्पे लग्ने, बिले-शये राहौ कालगते अष्टम-गते, सति तदा वात-श्रुतौ वाम-कर्णे किमथ वा मूर्ध्नि शिरस्यंकं चिह्नम् ईरयेत् कथयेत्। अनङ्ग-गृहे सप्तमे, भुजङ्गमे राहौ, गात्रोपगे लग्न-गते अङ्गिरोभवे बृहस्पतौ सति तदा सलक्षणा चिह्न-युक्ता वाम-तनूः वामाङ्गं ज्ञेया। तथा च ग्रन्थान्तरे।

4-32 अष्टमेपि भवेद्राहुः शुक्रो वापि तनु-स्थितः।
वाम-कर्णे भवेच्चिह्नं तस्य लग्नाद्विनिश्चितम्॥

4-33 जाया-स्थाने यदा राहुर्मन्त्री वापि तनु-स्थितः।
बाहौ चिह्नं विजानीयाज्जन्म-लग्नाद्विचक्षणः॥

बायें कान एवं सिर आदि पर चिह्न

लग्न में शुक्र तथा अष्टम स्थान में राहु होने पर वायें कान या सिर पर चिह्न वताना चाहिए। सप्तम स्थान में राहु तथा लग्न में गुरु होने पर शरीर के वायें भाग में चिह्न होता है।

अन्य जातक ग्रन्थों में भी कहा गया है कि लग्न से अष्टम स्थान में राहु तथा लग्न में शुक्र होने पर वायें कान पर निशान होता है। यदि सप्तम स्थान में राहु अथवा लग्न में गुरु हो तो वाये हाथ में चिह्न होता है।

वाम-भुजे वाम-पार्श्वे चांक-ज्ञानम्

4-34 शुक्रे व्ययाष्टम-गते पुर-मन्दिर-स्थे
वाचां पतौ भवति वाम-भुजे तदांकः ।
त्र्यायारि-गेस्त्र उत भार्गव इन्द्र-पुज्ये-
ङ्को वाम-पार्श्व उदितश्च भुज-प्रदेशे ॥

4-35 द्वादशाष्टम-गे शुक्रे मंत्री च तनु-गो यदा ।
वामे भुजे भवेच्चिह्नं लग्नाच्चैव न संशयः ॥

4-36 त्रि-षडाय-गते भौमे शुक्रो वापि बृहस्पतिः ।
वाम-पार्श्वे भवेच्चिह्नं भुज-देशात्समीपतः ॥

अस्य व्याख्या । शुक्र इति । द्वादशे निधने शुक्रे, पुर-मन्दिर-स्थे लग्न-गते वाचां पतौ गुरौ यदि तदा वाम-भुजेंको ज्ञेयः । त्र्यायारिगे तृतीय-लाभ-षष्ठ-गतेस्रे भौमेथ वा भार्गवे शुक्रे इन्द्र-पूज्ये गुरौ वा तदा वाम-पार्श्वे भुज-प्रदेशे चांक उदितः कथितः । तथा च ग्रन्थान्तरे ।

बायीं भुजा या बायें कटि प्रदेश में चिह्न

वारहवें स्थान में शुक्र तथा लग्न में बृहस्पति हों तो वायीं भुजा में निशान होता है। तीसरे, छठे, ग्यारहवें स्थान में मंगल हो अथवा गुरु, शुक्र में से कोई एक हो तो भी बायीं भुजा में अथवा वायीं तरफ कटि में तिल आदि का चिह्न होता है। यही वात अन्य ग्रन्थकारों ने भी कही है।

हृदये दक्षिण-पार्श्वे च चिह्न-ज्ञानम्

4-37 त्र्यायारि-गे ज्ञे चरमे गुरौ भे भुजेङ्गिनां मानसमंक-युक्तम् ।
ज्ञैन्योर्विलग्ने नभसीन-नाम्नि स-लक्षणं दक्षिण-पार्श्वमत्र ॥

4-38 व्यय-स्थाने यदा मंत्री, बुधोपि त्रि-षडाय-गः ।
सहज-स्थो यदा शुक्रः स-चिह्नं हृदयं भवेत् ॥

4-39 बुध-मन्दौ यदा लग्ने कर्म-गे वा दिवाकरे ।
दक्षिणे पार्श्वके चिह्नं तस्य ज्ञेयं परिस्फुटम् ॥

अस्य व्याख्या । त्र्यायारि-ग इति । ज्ञे बुधे त्र्यायारि-गे तृतीय-लाभ-षष्ठ-गते, गुरौ बृहस्पतौ चरमे व्यये, भे शुक्रे भुजे तृतीये सति तदाङ्गिनां प्राणिनां मानसं हृदयमंक-युक्तं चिह्न-युक्तं ज्ञेयम् । ज्ञैन्यो-

बुध-शन्योर्विलग्ने, इन-नाम्नि रवौ नभसि दशमे सति तदा स-लक्षणं चिह्न-युक्तं दक्षिण-पार्श्वं दक्षिणाङ्ग ज्ञेयम् । तथा च ग्रन्थान्तरे ।

हृदय पर तथा दाहिनी ओर चिह्न

तृतीय, षष्ठ या एकादश स्थान में बुध, द्वादश स्थान में गुरु तथा तृतीय स्थान में शुक्र होने पर जातक के हृदय पर चिह्न होता है। लग्न में बुध एवं शनि तथा दशम स्थान में सूर्य होने पर शरीर के दाहिने भाग में चिह्न होता है। अन्य ग्रन्थों में भी कहा गया है कि व्ययस्थान में गुरु और तृतीय, षष्ठ या एकादश स्थान में बुध और तृतीय स्थान में शुक्र हो तो व्यक्ति के हृदय पर चिह्न होता है। और यदि लग्न में बुध एवं शनि या दशम स्थान में सूर्य हो तो शरीर के दाहिने भाग में स्पष्ट दिखाई पड़ने वाला चिह्न होता है।

उदरे चिह्न-ज्ञानं गुदे च गोलक-चिह्न-ज्ञानम्

4-40 वधे बुधेज्यौ भृगु-जे त्रि-कोणे मैत्रोङ्ग-मित्रे जठरं स-लक्ष्म ।
विधौ विधौ, त्र्याय-गदे विदीज्ये पुरे व्रणं वा गुद-गोलकांकः ॥

4-41 त्रि-कोणेपि भवेच्छुक्रो जीवे सौम्ये मृति स्थिते ।
पाताले वोदये मन्दे कुक्षौ चिह्नं समादिशेत् ॥

4-42 विलग्न-स्थो यदा मन्त्री बुधो वा त्रि-षडाय-गः ।
धर्म-स्थाने निशा-नाथे गुदे गोलकमादिशेत् ॥

अत्र पाठान्तरम् ।

4-43 सहज-स्थो यदा शुक्रो मंत्री वा त्रि-शडाय-गः ।

अस्य व्याख्या । वध इति । बुधेज्यौ बुध-गुरू वधेष्टमे, मैत्रः शनिरङ्ग-मित्रे लग्ने चतुर्थे त्रि-कोणे नवमे पञ्चमे वा भृगु-जे शुक्रे सति तदा जठरमुदरं स-लक्ष्म चिह्नंयुक्तं ज्ञेयम् । विधाविति । विधौ चन्द्रे विधौ भाग्ये, विदि बुधे त्र्याय-गदे तृतीय-लाभ-षष्ठ, इज्ये गुरौ पुरे लग्ने सति तदा व्रणम् अथवा गुदे गोलक-चिह्नं ज्ञेयम् । तथा च ग्रन्थान्तरे ।

पेट पर चिह्न

अष्टम स्थान में बुध एवं गुरु, लग्न या चतुर्थ में शनि तथा त्रिकोण में शुक्र हो तो पेट पर चिह्न होता है। नवम स्थान में चन्द्रमा, तृतीय या

षष्ठ या एकादश स्थान में बुध एवं लग्न में गुरु होने पर गुदा में व्रण या गोलक चिह्न होता है।
अन्य ग्रन्थों में कहा गया है कि तृतीय स्थान में शुक्र तथा तृतीय, षष्ठ या एकादश स्थान में गुरु हो तो पेट पर चिह्न होता है।

नाभि-देशे चिह्न-ज्ञानम्

4-44 भाग्ये भृगौ नाश इनेहि-शन्योर्मेषूरणेङ्कान्वित-नाभि-देशः।

4-45 भाग्य (धन)-स्थाने यदा शुक्रो ह्यष्टमेपि दिवाकरः।
कर्म-गो राहु-मन्दौ च नाभौ चिह्नं समादिशेत्॥

अस्य व्याख्या। भाग्य इति। भृगौ शुक्रे, भाग्ये नवमे, इनेर्के, नाशेष्टमे, अहि-शन्यो राहु-शन्योर्मेषूरणे दशमे तदा नाभि-देशश्चिह्न-युक्तो ज्ञेयः। तथा च ग्रन्थान्तरे।

नाभि के पास चिह्न

नवम स्थान में शुक्र, अष्टम स्थान में सूर्य तथा दशम स्थान में राहु एवं शनि हों तो नाभि के पास चिह्न होता है।

अन्य ग्रन्थों में कहा गया है कि जब भाग्य या धन स्थान में शुक्र, अष्टम स्थान में सूर्य तथा दशम स्थान में शनि एवं राहु हों तो नाभि के समीप चिह्न बताना चाहिए।

कट्यां हृदि च चिह्न-ज्ञानं, पादे, गुल्फे, बाहौ च मत्स्याङ्क-ज्ञानम्

4-46 स्वेब्जे गुरौ खे सहजेहि-भृग्वोः कट्यां तदाङ्कः कथितो मुनीन्द्रैः।
शुक्रानुज-स्थे हृदि चिह्नमुक्तं विलग्न-गौ मन्द-धरा-तनूजौ॥

4-47 हिते सितेगौ चरणे च गुल्फे बाहौ च मत्स्यांक-मुदीरयेन्नुः।

4-48 कर्म-गोपि यदा मंत्री, द्वितीयेपि निशाकरः।
सहजे राहु-शुक्राभ्यां, कट्यां चिह्नं समादिशेत्॥

4-49 सहज-स्थो यदा शुक्रो हृदि चिह्न समादिशेत्।
पाताल-गौ शुक्र-राहू कुजे मन्दे तनु-स्थिते॥

4-50 गुल्फयोर्बाहु-पादाभ्यां मत्स्य-चिह्नं समादिशेद्।

अस्य व्याख्या। स्वे द्वितीयेब्जे चन्द्रे, खे दशमे गुरौ, सहजे तृतीयेहि-

भृग्वो राहु-शुक्रयोश्चेत्तदा मुनीन्द्रैः कट्यामंकः कथितः। शुक्र इति। यदि शुक्रानुज-स्थे तृतीय-गते तदा हृदये चिह्नं ज्ञेयम्। मन्द-धरा-तनूजौ मन्द-मङ्गलौ लग्न-गतौ हिते चतुर्थे सिते शुक्रे अगौ राहौ सति तदा नुः नरस्य चरणे पादे, गुल्फे, बाहौ भुजे च मत्स्याङ्कं मीन-चिह्नमीरयेत् कथयेदिति। तथा च ग्रन्थान्तरे।

कमर एवं हृदय पर चिह्न तथा हाथ-पैरों में मत्स्य-चिह्न

द्वितीय स्थान में चन्द्रमा, दशम स्थान में गुरु तथा तृतीय स्थान में राहु एवं शुक्र के होने पर कमर पर चिह्न होता है। यदि शुक्र तृतीय स्थान में हो तो हृदय पर चिह्न होता है। और यदि लग्न में शनि एवं मंगल हो तथा चतुर्थ स्थान में शुक्र एवं राहु हों तो पैर, गुल्फ एवं हाथ में मत्स्य का चिह्न वताना चाहिए।

अन्य ग्रन्थों में भी कहा गया है कि यदि दशम स्थान में गुरु, द्वितीय स्थान में चन्द्रमा तथा तृतीय स्थान में शुक्र एवं राहु हों तो कमर में चिह्न का सद्भाव वताना चाहिए। जव तृतीय भाव में शुक्र हो तो हृदय के आस-पास चिह्न होता है। और यदि चतुर्थ भाव में शुक्र एवं राहु हों तथा लग्न में शनि एवं मंगल हों तो घुटनों, पैर या हाथ में मत्स्यचिह्न होता है।

पद्येनैकेन ग्रन्थमिममुपसंहारयति

4-51 युगागांक-भू-सम्मिते वैक्रमीयेशुचौशुक्लपक्षे कलानाथ-तिथ्याम्।
इने युग्म-याते कृतः सङ्ग्रहोयं मुकुन्देन होराविदां तुष्टयेस्तु।

इति श्रीमत्पण्डित-मुकुन्द-दैवज्ञ-संग्रहीते नष्ट-जातके लग्न-भ्रान्ति-निराकरण-प्रकरणं चतुर्थं समाप्तिमगमत्

नष्ट-जातक ग्रन्थ का उपसंहार

ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा, विक्रम संवत् १९७४ को मिथुन राशि में सूर्य के होने पर पण्डित मुकुन्द दैवज्ञ ने ज्योतिषियों की प्रसन्नता के लिए नष्ट-जातक का संग्रह किया।

इस प्रकार श्रीमान् पण्डित मुकुन्द दैवज्ञ द्वारा संग्रहीत ग्रन्थ नष्ट-जातक के लग्न-भ्रान्तिनिराकरण नामक चतुर्थ प्रकरण की श्री शुकदेव चतुर्वेदी की भावार्थ-बोधिनी नामक हिन्दी टीका समाप्त हुई।

□□